जनकवि नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना

पी० के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) की
हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ़ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2024

शोध निर्देशक :

डॉ० विक्रान्त शर्मा
हिन्दी विभाग
(विभागाध्यक्ष, कला संकाय)
पी०के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी

शोधार्थी :

हृदेश कुलश्रेष्ठ
पंजीकरण सं० : PH19RART001H1
(हिन्दी साहित्य)
नामांकन सं. :161595211067

शोध केन्द्र

पी०के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी-473665, मध्य प्रदश

जनकवि नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना

पी० के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) की
हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ़ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2024

शोध निर्देशक :

डॉ० विक्रान्त शर्मा
हिन्दी विभाग
(विभागाध्यक्ष, कला संकाय)
पी०के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी

शोधार्थी :

हृदेश कुलश्रेष्ठ
पंजीकरण सं० : PH19RART001H1
(हिन्दी साहित्य)
नामांकन सं. :161595211067

शोध केन्द्र

पी०के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी-473665, मध्य प्रदश

विषय वस्तु

1. शीर्षक पृष्ठ
2. पर्यवेक्षक प्रमाण–पत्र
3. घोषणा पत्र
4. आभार
5. कोर्स वर्क प्रमाण–पत्र
6. प्री पी–एच.डी. सबमिशन प्रमाण–पत्र
7. प्लेग्रिज्म प्रमाण–पत्र
8. सेन्ट्रल लाइब्रेरी प्रमाण–पत्र
9. शोध सार
10. शोध प्रबन्ध
11. वर्कशॉप प्रमाण–पत्र
12. पुस्तकालय प्रमाण–पत्र
13. शोध पत्र

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध जिसका शीर्षक **"जनकवि नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना"** है, पी० के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) से पी–एच० डी० उपाधि हेतु **श्री हृदेश कुलश्रेष्ठ** द्वारा मेरे मार्गदर्शन एवं निर्देशन में पूर्ण किया गया है। इनके द्वारा किया गया यह शोध प्रबन्ध नितान्त मौलिक और अनूदित है, जो भारतवर्ष की गंगा–जमुनी संस्कृति से ओत–प्रोत होने के कारण चिन्तक, विचारक एवं शोध छात्रों के लिये अत्यन्त ही लाभकारी होगा।

शोध निर्देशक

दिनाँक : 11/11/2024

डॉ० विक्रान्त शर्मा

घोषणा–पत्र

मैं, **हृदेश कुलश्रेष्ठ** घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, जिसका शीर्षक **"जनकवि नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना"** है, को मैंने **डॉ० विक्रान्त शर्मा,** पी० के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी, मध्य प्रदेश के निर्देशन एवं निरीक्षण में पूर्ण किया है। यह कार्य मैंने हिन्दी विषय में पी–एच० डी० उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया है।

यह शोध प्रबन्ध पूर्णतः मेरा मौलिक कार्य है। इससे पूर्व यह अन्यत्र कहीं भी प्रस्तुत नहीं हुआ है।

दिनांक : 11/11/2024 शोधार्थी
स्थान :

डॉ० विक्रान्त शर्मा
हिन्दी विभाग
विभागाध्यक्ष, कला संकाय
पी०के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म०प्र०)

(हृदेश कुलश्रेष्ठ)
हिन्दी विभाग
पी०के० विश्वविद्यालय
शिवपुरी (मध्य प्रदेश)

हार्दिक आभारयुक्त अभिव्यक्ति

आपके हाथों में उपलब्ध मेरे इस शोध प्रबन्ध के पूरा होने के अवसर पर अत्यन्त विनम्र आदर, स्नेह, प्रेरणा, प्रोत्साहन व आत्मीयतापूर्ण अनेक व्यक्तियों के सहयोगयुक्त कृति अर्थात् इस शोध प्रबन्ध से मैं इतना अभिभूत हो रहा हूँ कि जिसको मैं अपने शब्दों में वर्णित नहीं कर पा रहा हूँ। मुझे भली–भाँति स्मरण हो रहा है कि जब मैं शोध प्रबन्ध की उपाधि से विभूषित व्यक्तियों के सम्पर्क में आता था तो मैं उनसे वार्तालाप के मध्य उन्हें अपनी अधीर दृष्टि से निहारते हुए एक ओर प्रसन्न होता था तो दूसरी ओर इस प्रकार खिन्न होता था जैसे किसी शायर ने कभी लिखा था कि–

"कभी धूप से शिकवा रहा,
कभी धूप से राहत हुयी।
ज़िन्दगी ! मुझको तेरी,
कुछ इस तरह चाहत हुयी।।"

प्रसन्नता की अनुभूति तो मुझे इसलिये होती थी कि आज मैं कितना धन्य हूँ कि अपने विषय के पारंगत व्यक्तित्व से वार्ता कर रहा हूँ, किन्तु खिन्नता इसलिए होती थी कि मैं कितना अभागा हूँ कि इतनी सब कुछ शैक्षणिक सम्पन्नता एवं परिपूर्ण होते हुए भी मुझ को इनको प्राप्त हुयी उपाधि जैसा कोई सम्मान न मिल सका।

जब कभी मैं इस सन्दर्भ में व्यथित होकर माँ सरस्वती के सादृश्य अपनी माता श्री श्रीमती शारदा देवी कुलश्रेष्ठ जी से बात करके अपनी लालसा की चर्चा

करता था तो वे कहती थीं कि तुम तो प्रयास कुछ इस तरह से करते रहो जैसे विभिन्न अवसरों पर आयोजित होने वाले सुन्दरकाण्ड के बीच–बीच में टेव दी जाती है।

''हनुमत डटे रहो आसन पर।
जब तक कथा राम की होय।।''

और! मैं मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम की कथा की साधना में रह कर उस नकारात्मकता से सकारात्मकता में आ गया जैसे कहते हैं कि–

''राम नाम अति मीठा है
कोई गाकर देख ले,
आ जाते हैं राम कोई,
बुलाकर देख ले।।''

आज मेरा शोध, मेरे अन्तर्मन में मेरे शोध की सम्पन्नता ही नहीं, बल्कि श्री राम जी का निर्वसन हुआ है।

मेरे इस कर्म में मेरी माँ का आशीर्वचन, मेरी मार्या श्रीमती सुनीता कुलश्रेष्ठ की प्रेरणा, मेरी छोटे भाई की पत्नी श्रीमती मेघना गहराना द्वारा किया गया मेरा उत्साहवर्धन, मेरे लक्ष्मण के सादृश्य अनुज श्री शुभम् कुलश्रेष्ठ उर्फ आदित्य कुलश्रेष्ठ का अभूतपूर्व सहयोग और अदम्य साहस के साथ ही दृढ़ निश्चयता के मेरे इस गंतव्य को प्राप्त करने में मेरे पिता श्री प्रेम प्रकाश कुलश्रेष्ठ जी द्वारा मुझे सदैव कर्तव्यनिष्ठा के पथ पर चलने का मार्ग प्रशस्त किया गया।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में, मैं परम आदरणीय और अपने श्रद्धेय निर्देशक डॉ. विक्रान्त शर्मा (विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग) पी०के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म०प्र०) का आभारी हूँ, उनके लिये मैं अपनी स्वरचित कविता की कुछ पंक्तियाँ कहना चाहूँगा कि–

"बनते–बिगड़ते समीकरणों के,
यूँ तो बड़े अम्बार लगे थे।
था उनमें ना कोई ऐसा,
जो मुझको ये पथ दिखलाता।।"

सच पूछिये तो वे मेरे साथ इतना परिश्रम करते थे कि जिन्हें मैं अपने शब्दों में अभिव्यक्त कर सकूँ। वे समय–समय पर मुझे बुलाकर विभिन्न प्रकार की पुस्तकें व लेख मँगाकर अपने सानिध्य में मुझे बिठाकर कई प्रकार से लिखवाते थे फिर चैक करते थे। कभी संशोधन कराते और कभी उसे फिर से लिखवाते थे और फिर से काटते थे। यह काटने और लिखवाने का दौर अब कहीं जाकर क्रमबद्ध रूप से चलता हुआ इस शोध प्रबन्ध के रूप में अभी पूर्ण हुआ है।

डॉ. शर्मा साहब की स्नेहमयी अद्वितीय प्रेरणा, महत्वपूर्ण सुझाव और सहयोग यदि मुझे प्राप्त न होते तो मैं अपनी शोध सफलता के इस अभियान में कदापि सफल न होता। इस शोध प्रबन्ध की परिपूर्णता के लिए मैं अपने निर्देशक डॉ. विक्रान्त शर्मा साहब के लिये पुनः ये कहना चाहूँगा हूँ कि–

''हम तो सिर्फ काँच का टूटा हुआ टुकडा ही थे,
आपने ऐसा तराशा कर दिया हीरा मुझे।।''

आप ही मेरे वो पारखी जौहरी हैं, जिन्होंने इधर–उधर बिखरे पड़े काँच के टुकड़ों में से एक हीरे के रूप में मुझे प्रस्तुत किया है। मैं उनका कोटि–कोटि चरण वन्दन और अभिनन्दन करता हूँ और ईश्वर से कामना करता हूँ कि मेरे सभी शोधार्थी भाई बहिनों को इसी प्रकार के कर्तव्यनिष्ठ और लगनशील गुरुओं का उन्हें भी सानिध्य प्राप्त होता रहे।

मैं अपने इस कार्य में प्रेरणादायी अपनी पूर्व गुरू माँ पदम श्री उषा यादव, पूर्व प्रोफेसर कन्हैया लाल माणिक लाल मुंशी हिन्दी भाषा एवं भाषा विज्ञान विद्यापीठ डॉ. भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय पूर्व में आगरा विश्वविद्यालय, आगरा का आभारी हूँ जिन्होनें मुझे सफलता के इस सोपान पहुँचाने में हृदयतल से मुझे सहयोग प्रदान किया।

मैं विशेषकर आभारी हूँ हिन्दी पत्रकारिता में शोध की उपाधि प्राप्तकर्ता दिवंगत डॉ० महाराज सिंह परिहार का, जिन्होंने मेरे लेखन का रचना जगत में परिचय कराया और मार्ग दर्शन करने के बहाने मेरे अन्तर्मन में स्थापित होकर मुझे इस सुहाने सफर को पूरा करने की प्रेरणा देते हुए इस गंतव्य तक लाये, यदि उनका गरिमामयी सहयोग मुझे प्राप्त न होता तो मैं पी.जी. डिप्लोमा–इन–जर्नलिज़्म (पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा) में अच्छे अंको से सफलता प्राप्त करके एक पत्रकार न बनता और न ही पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह 'शशि' तत्कालीन महानिदेशक प्रकाशन विभाग (भारत सरकार) नई दिल्ली का साक्षात्कार करके अपनी प्रशंसा में उनके द्वारा पी.एच.डी. करने को प्रेरित होने का आशीर्वाद प्राप्त न कर पाता।

मैं आभारी हूँ कभी अपने सहछात्र होने वाले और आज डॉ भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय (पूर्व में आगरा विश्वविद्यालय) आगरा के डीन प्रोफेसर डॉ. सुगम आनन्द जी का, जिन्होंने मेरी अभिलाषा पर मेरे अनुरूप अपने अत्यन्त मूल्यवान समय में से समय निकालकर मुझे विचार विमर्श करने के लिए समय प्रदान करके मेरी सफलता को ये नयी ऊँचाई दी।

मेरी इस शोध लेखन यात्रा में अपनी महती भूमिका अदा करने वाली सहयोग की प्रतिमूर्ति डॉ० बीना शर्मा के प्रति बहुत–बहुत आभार इसलिये व्यक्ति करता हूँ, क्योंकि यदि उनका मुझे सहयोग न मिलता और वे निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के तौर पर मुझे अपने पुस्तकालय में अध्ययन करने की अनुमति न देतीं तो अवश्य ही मुझे कई व्यवधानों का सामना करना होता। यही कारण था कि उनके पुस्तकालयाध्यक्ष डॉ० निरंजन सिंह जी द्वारा सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में मुझे मेरे शोध प्रबन्ध हेतु साहित्य उपलब्ध कराये जाने हेतु अभिन्न सहयोग और सुझाव दिये।

मेरी स्वरचित कविता की ये पंक्तियाँ–

"मन मुदित तो तब हुआ था,
जब मिला मुझे साथ तुम्हारा।
अन्तर्मन हो उठा है पुलकित,
सफल हुआ प्रयास हमारा।।"

इन्हीं पंक्तियों के साथ मैं आभारी हूँ पी०के० विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्रीमान् जगदीश प्रसाद शर्मा जी का, जिन्होंने अपने विश्वविद्यालय में पी–एच.डी. करने के लिये प्रवेश देकर मेरा मार्ग प्रशस्त किया।

विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो० डॉ० योगेश चन्द दुबे जी का भी मैं कोई कम आभारी नहीं हूँ, जिन्होंने मेरे धड़कते दिल में चल रही साँसों को नियन्त्रित किये जाने के लिये समय–समय पर उनसे अपनी उत्सुकता की बात के लिये विचार–विमर्श किये जाने के लिये अनुमति देकर प्रोत्साहित किया।

मैंने कभी अपनी कविता में लिखा था–

"शिक्षा के इस जीवन पथ पर,
मैं चलता था कभी अकेला।
भीड़ का रेला बहुत बड़ा था,
ना खुशियों का था कोई मेला।।"

मुझे क्या मालुम था कि उस समय रची गयीं मेरी ये पंक्तियाँ आज इस विश्वविद्याालय के प्रशासनिक निदेशक डॉ० जितेन्द्र कुमार मिश्रा पर पी–एच.डी. के शोध प्रबन्ध में लिखी अपनी "हार्दिक आभारयुक्त" अभिव्यक्ति के लिये एक मील का पत्थर साबित होंगी। ऐसी भी प्रतिभा के धनी श्री मिश्रा जी के सहयोग का मैं बहुत आभारी हूँ।

मैं जब–जब भी अपनी अपेक्षाओं के सन्दर्भ में बात करने गया तब ही तब मुझे सकारात्मक अनुभव हुआ और मन की नकारात्मकता सदैव के लिये बिलुप्त प्रायः सी हो गयी। ऐसी ही प्रतिभा के धनी विश्वविद्यालय के पंजीयक (रजिस्ट्रार) डॉ० दीपेश कुमार नामदेव साहब का दिल की गहराइयों से हार्दिक आभारी हूँ।

मैं आभारी हूँ विश्वविद्यालय के फैकल्टी डीन डॉ० जितेन्द्र मलिक एवं डीन अकादमिक डॉ० एमन फ़ातिमा जी का, जिनसे मेरे शोध प्रबन्ध हेतु प्रवेश लेने से शोध प्रबन्ध को सम्मिलित किये जाने के समय तक समय–समय पर यदा–'कदा भेंट होती रहीं। इस मध्य उन्होंने विश्वविद्यालय की पी–एच.डी. के सन्दर्भ में विश्वविद्यालय आयोग की नीतियों की जानकारी देकर मुझे उसके अनुरूप शोध करने का परामर्श और अद्यतन ज्ञान प्रदान किया।

मैं आभारी हूँ शोध शाखा निर्देशक डॉ० भास्कर नल्ला जी का, जो विश्वविद्यालय के डीन अध्यक्ष हैं और शोध शाखा के उपाध्यक्ष प्रो० डॉ० विक्रान्त जी का। इसके साथ ही मैं आभारी हूँ डॉ० भास्कर नल्ला जी के सहयोगी कर्मचारी आशीष गुप्ता का, जिन्होंने मुझे शोध प्रबन्ध किये जाने हेतु सार्थक दिशा दी, जिससे मेरे शोध कार्य को अनवरत रूप से, बिना किसी व्यवधान के सम्पन्न होने में बाधाओं का सामना ना करना पड़ा।

मैं आभारी हूँ विश्वविद्यालय की पुस्तकालय प्रभारी सुश्री निशा यादव, श्री कमलेश यादव और श्री आलोक खरे जी का, जिन्होंने मुझे पुस्तकालय सम्बन्धी जानकारी दी।

मैं आभारी हूँ कला संकाय विभाग के समस्त प्राध्यापकों का, जिन्होंने मुझे शोध सम्बन्ध मार्गदर्शन प्रदान किया।

मैं आभारी हूँ– डॉ० भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय (पूर्व में आगरा विश्वविद्यालयं) के केन्द्रीय पुस्तकालय अध्यक्ष डॉ. कृष्ण कुमार केशरवानी साहब का, जिन्होंने डॉ० भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय (पूर्व में आगरा विश्वविद्यालयं) की वेबसाइट पर अपनी रूचि के अपेक्षित विषयों पर शोध सम्बन्धी साहित्य ''शोध गंगा'' द्वारा अध्ययन किये जाने के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान किया। साथ ही हार्दिक रूप से उन सभी महानुभावों का भी मैं आभारी हूँ जिन्होनें मेरे इस शोध प्रबन्ध का शुद्धतापूर्ण और स्वच्छतापूर्ण टंकण करके अभूतपूर्व सहयोग दिया।

अन्त में, मैं अपने प्रियजनों, मित्रगणों, और प्रशंसको का भी कम आभारी नहीं हूँ, जिन्होंने मुझे आगरा निवासी हिन्दी के मूर्धन्य बाल साहित्यकार स्वर्गीय श्री द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी की रचना–

''वीर तुम बढ़े चलो हम तुम्हारे साथ हैं''

को स्वयं उद्भाषित करके मुझे उत्साहित किया। मेरी ये कृति उन्हीं की प्रेरणा और प्रोत्साहन का परिणाम है। इन्हीं शब्दों के साथ अन्त में, मैं अपनी इन पंक्तियों के साथ–

"बहुत–बहुत आभार सभी का
ढली रात और गया अंधेरा।
अन्तर्मन के स्पन्दन से,
पावन हृदय हो गया मेरा।।"

एक अल्प विराम लेते हुए अपनी लेखनी की गति को आप सभी के महती आभार सहित विराम देता हूँ। सदैव आपके स्नेह का आकांक्षी।

(हृदेश कुलश्रेष्ठ)

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

UniversityEstablished Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

CENTRAL LIBRARY

Ref. No. PKU/ C.LIB /2024/PLAG. CERT./140 Date: 20.04.2024

CERTIFICATE OF PLAGIARISM REPORT

1. Name of the Research Scholar	:	Herdesh Kulshrestha
2. Course of Study	:	Doctor of Philosophy (Ph.D.)
3. Title of the Thesis	:	जनकवि नजीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना
4. Name of the Supervisor	:	Dr. Vikrant Sharma
5. Department	:	Art
6. Subject	:	Hindi
7. Acceptable Maximum Limit	:	10% (As per UGC Norms)
8. Percentage of Similarity of Contents Identified	:	1%
9. Software Used	:	Ouriginal (Formerly URKUND)
10. Date of Verification	:	12.04.2024

20/4/24

Signature of Ouriginal Coordinator
(Librarian, Central Library)
P.K.University, Shivpuri (M.P.)

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

CENTRAL LIBRARY

Ref. No. PKU/ C.LIB /2024/PLAG. CERT./140 Date: 20.04.2024

CERTIFICATE OF PLAGIARISM REPORT

1. Name of the Research Scholar	:	Herdesh Kulshrestha
2. Course of Study	:	Doctor of Philosophy (Ph.D.)
3. Title of the Thesis	:	जनकवि नजीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना
4. Name of the Supervisor	:	Dr. Vikrant Sharma
5. Department	:	Art
6. Subject	:	Hindi
7. Acceptable Maximum Limit	:	10% (As per UGC Norms)
8. Percentage of Similarity of Contents Identified	:	1%
9. Software Used	:	Ouriginal (Formerly URKUND)
10. Date of Verification	:	12.04.2024

20/4/24

Signature of Ouriginal Coordinator
(Librarian, Central Library)
P.K.University, Shivpuri (M.P.)

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

P.K. UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)
University Established Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015
CENTRAL LIBRARY

Ref. No. PKU/ C.LIB /2024/PLAG. CERT./140

Date: 20.04.2024

CERTIFICATE OF PLAGIARISM REPORT

1. Name of the Research Scholar	:	Herdesh Kulshrestha
2. Course of Study	:	Doctor of Philosophy (Ph.D.)
3. Title of the Thesis	:	जनकवि नजीर अकबराबादी के साहित्य में लोक चेतना
4. Name of the Supervisor	:	Dr. Vikrant Sharma
5. Department	:	Art
6. Subject	:	Hindi
7. Acceptable Maximum Limit	:	10% (As per UGC Norms)
8. Percentage of Similarity of Contents Identified	:	1%
9. Software Used	:	Ouriginal (Formerly URKUND)
10. Date of Verification	:	12.04.2024

20/4/24

Signature of Ouriginal Coordinator
(Librarian, Central Library)
P.K.University, Shivpuri (M.P.)

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

ADD: VIL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI (M.P.) -473665
MOB: 7241115902, Email: library.pku@gmail.com

अनुक्रमणिका

अध्याय	विवरण	पृष्ठ सं०
	प्रस्तावना	**1—5**
प्रथम अध्याय	**नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तित्व एवम् कृतित्व।**	**6—51**
	1. नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तित्व।	
	1.1 नज़ीर अकबराबादी का जन्म।	
	1.2 नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तिगत परिचय।	
	1.3 नज़ीर अकबराबादी की हिन्दू देवी—देवताओं के प्रति श्रृद्धा और आस्था।	
	1.4 नज़ीर अकबराबादी की पारिवारिक पृष्ठभूमि।	
	1.5 नज़ीर अकबराबादी की शिक्षा—दीक्षा।	
	1.6 नज़ीर अकबराबादी की आजीविका का साधन।	
	1.7 नज़ीर अकबराबादी की प्रारम्भिक साहित्यिक स्थिति और शिक्षण की पकड़।	
	1.8 नज़ीर अकबराबादी की अभिरूचियाँ।	
	1.9 नज़ीर अकबराबादी का स्वाभिमानी व्यक्तित्व।	
	1.10 नज़ीर अकबराबादी की साहित्यिक विशेषता और भाषा शैली।	
	1.11 नज़ीर अकबराबादी की मृत्यु।	

	2. नज़ीर अकबरबादी का कृतित्व। 2.1 नज़ीर अकबराबादी की रचनाऐं। 2.2 नज़ीर अकबरबादी का सम्मान और अभिनन्दन।	
द्वितीय अध्याय	**नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में समकालीन परिस्थितियाँ।** 1. नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियाँ। 2. नज़ीर अकबराबादी के समय की सामाजिक परिस्थितियाँ। 3. नज़ीर अकबराबादी के समय में तत्कालीन आर्थिक परिस्थितियाँ। 4. नज़ीर अकबराबादी के समय में तत्कालीन साँस्कृतिक परिस्थितियाँ। 5. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में संगीत का समावेश।	**52—86**
तृतीय अध्याय	**नज़ीर अकबराबादी की लोकदृष्टि।** 1. नज़ीर अकबराबादी के समय में लोक जीवन और सामाजिकता। 2. नज़ीर अकबराबादी की दृष्टि में लोक पर्व। 3. नज़ीर अकबराबादी का सामाजिक जीवन एवम् मेलों पर दृष्टिपात।	**87—131**

	4. नज़ीर अकबराबादी और कृषि जीवन 5. नज़ीर अकबराबादी मात्र एक साहित्यकार ही नहीं, बल्कि एक व्यापार वृद्धि के प्रवर्तक भी। 6. अन्य।	
चतुर्थ अध्याय	**नज़ीर अकबराबादी के काव्य का विश्लेषण।** 1. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में समाहित भाव पक्ष और कला पक्ष। 1.1 भाव पक्ष क्या होता है? 1.2 नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का भाव पक्ष। 1.3 कला पक्ष क्या होता है? 1.4 नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में कला पक्ष। 2. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का शिल्पगत वैशिष्ट्य। 3. अकबराबादी नज़ीर की रचनाओं की काव्यगत वैशिष्ट्य।	**132–173**
पंचम अध्याय	**नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में दार्शनिकता का प्रादुर्भाव।** 1. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में मनोवैज्ञानिकता और मनमोहक पलों की अन्तःदर्शनता।	**174–192**

	2. तत्कालीन रचनाकारों द्वारा नज़ीर को महत्वहीन रखना। 3. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में धर्मनिरपेक्षता के दर्शन। 4. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में संगीतात्मकता का प्रभाव।	
षष्ठम अध्याय	**उपसंहार, साहित्यिक समीक्षा एवं लोक चेतना**	**193—212**
	सन्दर्भ ग्रन्थ सूची।	**213—218**
	पूर्ण कालिक और अद्यतन शोध की मौलिकता।	**219—221**
	शोध कार्य के सम्बन्ध में विचार और दृष्टिकोंण।	**222**
	परिशिष्ट	

प्रस्तावना

किसी भी कार्य को करने की अभिलाषा। उस कार्य को करके, उसमें सफलता पाने का लक्ष्य और उसे पूरा किये जाने का उद्‌देश्य अत्यन्त ही आवश्यक, महत्वपूर्ण और उपयोगी होने के साथ ही साथ कार्यशील भी होता है, जिन पर समय–समय पर शोध पर शोध होते रहते हैं, जिसमें शोधार्थी विभिन्न विषयों पर अपने–अपने दृष्टिकोंण और मानव मूल्यों को दृष्टिगत रखते हुए शोध रचना करते हैं। शोध किसी भी साहित्यिक और शिक्षित समाज की वे उपलब्धियाँ होती हैं, जो समय की जीवन्तता के लिये दृढ़ संकल्पित होती हैं।

राजकीय इण्टर कॉलेज, आगरा (उ.प्र.) से इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् माँ शारदा की मुझ पर इतनी कृपा हुई कि मैंने शनैः–शनैः समाचार पत्रों की प्रकाशन व्यवस्था में एक अक्षर संयोजक (कम्पोज़ीटर), तत्पश्चात् शोधन पाठ अथवा पाठ शोधन (प्रूफ़ रीडर) एवं क्षेत्रीय समस्याओं एवं सूचनाओं सम्बन्धी विज्ञप्तियाँ लेखन से नाट्‌य एवं फिल्म समीक्षक के रूप में अपने जीवन की अर्थोपार्जन यात्रा (कैरियर) का श्री गणेश किया। इस मध्य मेरी समाज के सभी वर्गों के व्यक्तियों से सम्पर्क में निरन्तर वृद्धि होती चली गयी। मैंने यदि उनसे जुड़कर उनकी निर्धनता की पीड़ा को अनुभव किया तो उनको समाधान प्रदान किये जाने की पहल भी की। मुझे स्मरण आ रहा है कि सन् 1983 में डी.वी.एस. राजू द्वारा निर्मित फ़िल्म– ''मुझे इन्साफ़ चाहिए'' ने मुझे इतना प्रभावित किया कि मैंने फ़िल्म में अभिनेत्री रेखा जी की अधिवक्ता की भूमिका देखकर ये संकल्प ले लिया कि मुझे अब अधिवक्ता बनकर समाज की सेवा करनी है। अतः रेखा जी के इसी अभिनय से प्रेरित होकर मैंने आगरा कॉलेज से बी.ए. और विधि स्नातक की परीक्षायें उत्तीर्ण करके अधिवक्ता बनने का निर्णय लिया। परिणामस्वरूप 10 अगस्त 1986 को मैं एक अधिवक्ता के रूप में उत्तर प्रदेश विधिज्ञ परिषद्, प्रयागराज, तत्कालीन इलाहाबाद

में पंजीकृत हुआ, किन्तु इतना ही मेरे लिये पर्याप्त न रहा और मुझसे रहा न गया तब इसी मध्य मैंने डॉ0 भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा तत्कालीन आगरा विश्वविद्यालय, आगरा से सन् 1990–91 के बैच में पत्रकारिता में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम (पी.जी. डिप्लोमा–इन–जर्नलिज़्म) में प्रवेश ले लिया, जहाँ पूरे विश्वविद्यालय में अच्छा स्थान प्राप्त करने के पश्चात् मुझे अपनी शिक्षा में कुछ अधूरेपन का अनुभव हुआ। तब मैंने हिन्दी साहित्य में स्नातकोत्तर हेतु आगरा विश्वविद्यालय में पुनः प्रवेश लेकर अपने विद्याध्ययन को आगे बढ़ाया, जहाँ प्रथम श्रेणी में मैंने स्नातकोत्तर किया, जिससे मैंने शब्द विन्यास, वाक्य विन्यास एवं भाषा की अभिव्यक्ति में सुन्दरता उत्पन्न करके अपने सम्मुख उपस्थित श्रोताओं और दर्शकों को मन्त्र मुग्ध किये जाने की कला सीखी। उधर मेरा वकालत का व्यवसाय भी अनवरत रूप से गतिमान हो गया। वकालत में गहन अध्ययन और अपने तथ्यों की प्रभावोत्पादक प्रस्तुति की शैली से मेरे व्यवसाय में दिन पर दिन सफलता के प्रतिमान स्थापित होते चले गये। इसी मध्य मैंने लोक सेवा आयोग, इलाहाबाद उ0प्र0 (न्यायिक सेवा) मुन्सिफ परीक्षा की तैयारी की। चूँकि उसमें एक प्रश्न पत्र उर्दू का भी होता था। इस कारण मैंने उर्दू सीखी और पूरे मनोयोग से तैयारी की, किन्तु नियति को कहाँ स्वीकार था कि भारत माँ के साहित्य का एक सच्चा सेवक और प्रेमी उनसे बिछुड़कर न्यायिक अधिकारियों की भीड़ में कहीं खो जाये। मैंने उस मध्य उर्दू क्या सीखी कि नियुक्तियों में भ्रष्टाचारिता का साम्राज्य होने के कारण मैं उसमें चयनित होना तो परे, बल्कि 4–5 प्रयासों के पश्चात् भी उत्तीर्ण न दर्शित हो सका, क्योंकि उस समय आज की तरह न तो कुछ भी ऑनलाइन प्रणाली जैसी कोई व्यवस्था थी और न ही इतनी पारदर्शिता। यहाँ तक कि उत्तर प्रदेश न्यायिक लोकसेवा आयोग में उस समय की परीक्षाओं के परिणामों में आज की तरह अंकतालिकाऐं भी नहीं भेजी जाती थीं, जिससे ये कहना असम्भव ही था कि अभ्यार्थी ने किस विषय में कितने अंक प्राप्त किये हैं? परिणामस्वरूप मैं जहाँ का तहाँ मात्र

एक अधिवक्ता ही बना रह गया, किन्तु मेरी दृष्टि में मैंने उर्दू क्या सीखी कि मुझे बोलने में इतना आनन्द आने लगा कि 16 जनवरी सन् 1989 में आगरा में आकाशवाणी के आगरा केन्द्र की स्थापना होने के पश्चात् स्थानीय कलाकार के नाते मेरा नाम आकाशवाणी के मथुरा वृन्दावन से स्वतः ही आगरा के लिए स्थानान्तरित हो आया। मैंने यहाँ भी कार्यक्रम प्रस्तुत करना प्रारम्भ कर दिया। इसी मध्य आकाशवाणी द्वारा आयोजित स्वर परीक्षा दिये के लिये मुझे प्रोत्साहित किये जाने पर मैंने स्वर परीक्षा दी और आकाशवाणी द्वारा प्रसारित कार्यक्रम मजदूर मण्डल का प्रस्तुतकर्ता/प्रस्तोता (कम्पीयर) बन गया, जहाँ मेरी अच्छी अभिव्यक्तियों और प्रस्तुतियों से प्रभावित होकर मुझे आकाशवाणी आगरा के तत्कालीन केन्द्र निर्देशक की ओर से सामान्य उद्घोषक बनने हेतु स्वर परीक्षा उत्तीर्ण किये जाने का सुझाव दिया । मेरे अथक प्रयास और तन्मयता से मुझे यह भी पता न चला कि मैंने कब स्वर परीक्षा दी एवं कब उत्तीर्ण हुआ और कब से मैंने उद्घोषणाऐं करना आरम्भ कर दिया। ये सब कुछ ठीक ऐसे ही हुआ जैसे कि–"कब शाम हुयी, कब रात ढली, कुछ याद नहीं परवानों को" हुआ हो।

इसी मध्य आकाशवाणी आगरा की तत्कालीन केन्द्र निर्देशिका सुश्री उषापुरी जी ने मुझे ''क्या खोया क्या पाया, इलैक्ट्रोनिक मीडिया से जुड़कर'' परिचर्चा के संचालन का अवसर दिया। मेरे कार्य कौशल को देखकर उन्होंने मुझे फ़ीचर लिखना सिखाया। तब मैंने तिरस्कृत एवं कथित तौर पर आवारा एवं भिक्षुक बच्चों पर आधारित एक रूपक ''भटकता बचपन'' लिखा, जिसकी आकाशवाणी महानिदेशालय, नई दिल्ली द्वारा अत्यन्त सराहना की गयी। इस प्रकार मैंने रूपक की प्रस्तुति निर्माण कार्यों में भी कुशलता के साथ कार्य करना आरम्भ कर दिया। इसके पश्चात् मैंने अतीत की ओर मुड़कर नहीं देखा। तत्पश्चात् मैंने विभिन्न कार्यक्रमों में बतौर एक उद्घोषक/संचालक के भाग लिया। विभिन्न उर्दू की काव्य गोष्ठियाँ आयोजित

कीं। उर्दू में आयोजित होने वाली काव्य गोष्ठी को नशिस्त बोला जाता है। मैंने नशिस्तों में आने वाले लोगों की प्रस्तुतियों को सुना। उनका विश्लेषण किया तो पाया कि हिन्दी जो शनैः–शनैः विश्व की एक प्रचलित और लोकप्रिय भाषा बनती जा रही है, यदि उर्दू साहित्य को खँगाला जाय। कुछ उससे भी ग्रहण किया जाय तो निश्चय ही उन्नति के शिखर पर पहुँचकर कुछ विशेष कीर्तिमान स्थापित किया जा सकता है। मैंने अनुभव किया कि ब्रज क्षेत्र, जो कि आनन्दकन्द भगवान श्रीकृष्ण जी के अलौकिक प्रेम एवं स्नेह के लिए प्रसिद्ध है, में हिन्दी कवियों के साथ ही साथ मुस्लिम शायरों (मुस्लिम कवियों) ने भी श्रीकृष्ण जी के ऊपर बहुत कुछ लिखा है।

मुझे आज भी भली–भाँति याद आ रहा है कि एक बार बसन्त पंचमी वाले दिन मैं नज़ीर अकबराबादी के जन्मदिन पर ताजगंज, आगरा में मनाये जाने वाले उत्सव में सम्मिलित हुआ। तब मैंने ब्रज के जनकवि की रचना–

''यारो सुनो! यह दधि के लुटैया का बालपन।
औरमधुपुरीनगर केबसैया का बालपन।।
मोहनसरूप निरत करैयाकाबालपन ।
बन–बन के ग्वाल गोएँ चरैया का बालपन।।
ऐसा था बाँसुरी के बजइया का बालपन।
क्या–क्या कहूँ मैं किशन कन्हैया का बालपन।।

इसके पश्चात् दिन पर दिन मेरी नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में रूचि क्रमशः बढ़ती गयी और मैंने इस बाँसुरी के बजइया का बालपन के रचनाकार–नज़ीर अकबराबादी पर ही शोध किये जाने की दृढ़ निश्चयता की। इसलिए मैंने सोचा कि दिल्ली में सन् 1735 में जन्मे वली मुहम्मद, जो आगरा में पल बढ़कर बड़े हुए थे। उन्होंने अपनी साहित्य रचनायें नज़ीर अकबराबादी के नाम से रचीं और सन्

1830 में अपनी मृत्यु होने के समय तक भगवान श्री कृष्ण से ओत–प्रोत होकर तथा जनमानस के छोटे–बड़े अवसरों, छोटी–छोटी वस्तुओं तक के लिए अपनी लेखनी से बहुत कुछ लिखा। इतना सुन्दर लेखन करके लोकप्रियता प्राप्त करने वाले वली मोहम्मद साहब हिन्दी जनमानस में जनकवि नज़ीर अकबराबादी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इसलिए मैंने सोचा कि एक ऐसा उर्दू रचनाओं का शायर जिसने अपनी लेखनी से जीवन पर्यन्त हिन्दी जनमानस और कृष्ण भक्त प्रेमियों हेतु इतनी सुन्दर और जीवन्त रचनाऐं देकर आगरा की ख्याति को ऊँचाइयों तक पहुँचाया । इसलिये मैं उन पर ही शोध करूँ। उनकी कृतियों का संकलन करके उनका विश्लेषण करूँ। मात्र इसलिए ही मैंने उपरोक्त कथित शीर्षक से नज़ीर अकबराबादी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर शोध कार्य करने का अपना विचार बनाया है।

नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तित्व और कृतित्व विभिन्न अध्यायों के रूप में प्रस्तुत किये जाने की पहल जब तक नहीं की जायेगी । तब तक उनके सम्बन्ध में किसी भी बात को ठीक से प्रस्तुत न कर पाना शोध कार्य के साथ बेमानी होगी।

प्रथम अध्याय

नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तित्व एवम् कृतित्व

नज़ीर अकबराबादी जी का व्यक्तित्व एवम् कृतित्व विस्तार से समझने के लिये हमें इसे दो भागों में विभाजित करके समझना होगा, वरना इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश डाल पाना असम्भव होगा और उनके ऊपर शोध किया जाना उनके साथ पूरी तरह बेमानी सिद्ध होगा, जो इस प्रकार है–

1. नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तित्व।
2. नज़ीर अकबराबादी जी का कृतित्व।

1. नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तित्व :

नज़ीर अकबराबादी साहब के व्यक्तित्व को भली–भाँति जानने के लिये हमें इसे निम्न भागों विभाजित करना आवश्यक होगा। इसलिये हम इसे निम्न खण्डों में विभाजित करके प्रस्तुत कर रहे हैं–

1.1 नज़ीर अकबराबादी का जन्म–

नज़ीर अकबराबादी का जन्म दिल्ली में 1147 हिजरी या ये कहिये कि सन् 1735 में दिल्ली में हुआ था। उनके जन्म स्थान के बारे में अभी तक कोई भी ये अवगत नहीं करा पाया है कि वे कहाँ जन्मे थे। प्रोफेसर शाहबाज़ मखमूर अकबराबादी, फरतुल्ला बेग और कई अन्य विद्वान दिल्ली को नज़ीर अकबराबादी की जन्मस्थली मानते हैं। अपने एक साक्षात्कार में कुलियात–ए–नज़ीर के लेखक मौलाना अब्दुलबारी आसी ने बताया कि उनका जन्म 1735 में बसन्त पंचमी वाले दिन दिल्ली में हुआ था, लेकिन जब हम उनकी जन्मतिथि के बारे में इण्टरनेट के

सर्च इंजन गूगल पर सन् 1735 की बसन्त पंचमी के दिन की खोज करते हैं तो ज्ञात होता है कि नज़ीर अकबराबादी का जन्म 29 जनवरी सन् 1735 को हुआ था। नज़ीर अकबराबादी के पितामुहम्मद फ़ारुख पहले रियासत और फिर अज़ीमाबाद और उसके बाद पटना के किसी रईस के यहाँ काम करते थे। इनकी माता आगरा के किलेदार नवाब सुल्तान खाँ की पुत्री थीं। उनका खानदानी पेशा सिपहगीरी था। आगरा के मशहूर शायर मैकश अकबराबादी तो नज़ीर अकबराबादी का जन्म आगरा का ही मानते हैं, क्योंकि उनकी माँ आगरा के किलेदार नबाव सुल्तान खाँ की बेटी थीं,लेकिन इसके ठीक विपरीत प्रोफेसर शाहबाज़, नज़ीर अकबराबादी पर किये गये अपने शोध के सन्दर्भ में उनका जन्म दिल्ली में ही होना मानते हैं। नज़ीर अकबराबादी का सही नाम वली मोहम्मद था, लेकिन बाद में उनके नाम की कहानी कुछ और ही है। इस बात को जानने के लिये हमको थोड़ा सा आगरा के इतिहास पर भी दृष्टिपात करना होगा।

हम बताना चाहेंगे कि पहले आगरा को अकबराबाद के नाम से जाना जाता था, क्योंकि अकबर महान ने भारत में जीत के बाद आगरा की फतेहपुर सीकरी को अपनी राजधानी बनाया था। उल्लेखनीय है कि फतेहपुर सीकरी कोई अन्य ऐसा स्थान नहीं, जहाँ पर किसी प्रकार का कोई राष्ट्रीय महत्व का स्मारक है। चूँकि फतेहपुर सीकरी के बीच से होकर आगरा से उत्तर मध्य रेल लाइन मुम्बई व ओखा या यूँ कहिये कि पश्चिम भारत के लिये गुजरती है। इसका एक ओर का हिस्सा 'फतेहपुर' और दूसरी ओर का हिस्सा 'सीकरी' के नाम से जाना जाता है। जो सीकरी एक हिस्सा, सीकरी दो हिस्सा, सीकरी तीन हिस्सा और सीकरी चार हिस्सा में विभाजित है। राष्ट्रीय संरक्षण की इमारत 'बुलन्द दरवाज़ा' भी सीकरी में ही स्थित है। इस प्रकार दोनों ही हिस्सों को मिलाकर फतेहुपर सीकरी जाना जाता है।

इस कारण आगरा को अकबर के नाम से सम्बोधित करते हुए अकबराबाद कहा जाता है।

जब उस समय के वली मुहम्मद ने अपनी साहित्यिक यात्रा शुरू की और अपनी रचनाओं में लोक उत्सव, लोक जीवन तथा लोक जीवन के प्रयोग में आने वाली अन्य वस्तुओं पर रचनायें रचना आरम्भ किया तो जनमानस में स्वयं की एक अलग छवि बनाये जाने के उद्देश्य से उन्होंने अपना तख़ल्लुस (साहित्यक उप नाम) नज़ीर रख लिया। हम यहाँ नज़ीर का अर्थ भी बताना चाहेंगे कि सही अर्थों में नज़ीर का अर्थ क्या होता है? सही अर्थों में नज़ीर का अर्थ होता है उदाहरण— जिसकी कोई तुलना ना की जा सके, जिसका स्तर अत्यन्त ही अच्छा होता है और चूँकि वे आगरा (अकबराबाद) के रहने वाले थे। इसलिए उन्होंने अपने उपनाम के पीछे अकबराबाद लगाया। फिर क्या था। देखते ही देखते वह कल का वली मुहम्मद, जल्दी ही नज़ीर अकबराबादी के नाम से विख्यात हो गया और सब जन मानस उनके बारे में एक ही बात कहने लगा—

"आशिक कहो,असीर कहो, आगरे का है।
मुल्ला कहो,दबीर (लेखक)कहो, आगरे का है।।
मुफ़लिस कहो, फ़कीर कहो, आगरे का है।
शायर कहो, नज़ीर कहो, आगरे का है।।"

नज़ीर अपने पिता की अन्तिम और अकेली सन्तान थे। उनके जन्म के सम्बन्ध में प्रोफसर शहबाज़ ने लिखा है कि— ''कहा जाता है कि अपनी बारह संतानों के अकाल काल—कवलित हो जाने के कारण नज़ीर के माता—पिता संतान के अभाव में बहुत ही दुखी रहते थे। एक बार उनकी बस्ती में एक फ़क़ीर का आना

हुआ, जिसे सुनकर वे नज़ीर अकबराबादी की नानी के कहने पर उस फ़क़ीर के पास गए। उस फ़क़ीर ने विस्तार से उनके माताजी–पिताजी की बात सुनने के बाद उनसे नज़ीर अकबराबादी के बारे में कहा कि जा प्रसन्न रह। सब बातें छोड़। जो कुछ हो गया उसे भूल जा। मैं आज तुझे ये आशीर्वाद दे रहा हूँ। तुझे एक पुत्र रत्न की प्राप्ति होगी, जो बड़े होकर तेरा नाम रौशन करेगा। उसकी योग्यता किसी खिलने वाले फूल की तरह ही होगी और उसकी ख़ुशबू फूल की तरह ही महकेगी। फ़क़ीर ने उनसे कहा कि इन फूलों को सूँघकर नदी में डाल देना और जो हो मुझे आकर बताना। फ़क़ीर के दिए हुए पाँच फूल साथ लेकर वे घर आए। विश्वास और आस्था के साथ यमुना तट पर जाकर उन्होंने एक–एक करके फूलों को यमुना में फैंका और उनमें से एक फूल पानी पर तैरता रहा, शेष सब पानी में डूब गए। यह बात उन्होंने फ़क़ीर को सुनाई। फ़क़ीर ने प्रसन्न होकर उनके माता–पिता से कहा, जा खुश हो। तेरा एक लड़का ज़िन्दा रहेगा, जो तेरे नाम को रोशन करेगा। फिर क्या था? उनकी पत्नी गर्भवती हुई और समय से बच्चे का जन्म हुआ। कई सन्तानों की मृत्यु के पश्चात् नज़ीर का जन्म होने के कारण माता–पिता और नानी को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। समयानुसार उनके सभी संस्कार किए गए।

जब उनके पिता की पूर्व में जन्मी बारह सन्तानों के निधन के पश्चात् नज़ीर अकबराबादी का जन्म हुआ तो उनके पिता ने उनके जन्म की खुशी को बड़े ही उत्साह के साथ एक उत्सव के रूप में मनाया, जिसमें गीत और नृत्य का कार्यक्रम आयोजित हुआ। उनके रिश्तेदार, सगे सम्बन्धी और आस पड़ौसी स्त्रियों ने उनके घर पर एकत्रित होकर ने खुशी के गीत गाये और हिजड़ों/अ़र्द्धनारीश्वरों की विभिन्न टोलियों ने नृत्य किया, जिसका उल्लेख नज़ीर अकबराबादी ने उस समय

समाज में प्रचलित रीति–रिवाजों पर आधारित अपनी कविता "जन्म कन्हैया जी" में कुछ इस प्रकार किया है–

"जनम कन्हैया जी"

''है रीत जनम की यों होती, जिस घर में बाला[1] होता है।
उस मंडल में हर मन भीतर, सुख चैन दोबाला होता है।।
सब बात बिथा[2] की भूले हैं, जब भोला–भाला होता है।
आनन्द मंदीले[3] बाजत[4] हैं, नित भवन उजाला होता है।।
यों नेक[5] नछत्तर[6] लेते हैं, इस दुनियां में संसार जनम।
पर उनके और ही लच्छन[7] हैं, जब लेते हैं अवतार जनम।।1।।
सुभ[8] साअ़त से यों दुनियां में, अवतार गरभ[9] में आते हैं।
जो नारद मुनि हैं ध्यान भले, सब उनका भेद बताते हैं।।
वह नेक महूरत[10] से जिस दम[11] इस सृष्टि में जन्मे जाते हैं।
जो लीला रचनी होती है वह, रूप यह जा[12] दिखलाते हैं।।

यों देखने में और कहने में, वह रूप तो बाले होते हैं।
पर बाले ही पन में उनके, उपकार निराले होते हैं।।2।।

यह बात कही जो मैंने अब, यों समझो इसको ध्यान लगा।
है पण्डित पुस्तक बीच लिखा, था कंस जो राजा मथुरा का।।
धन ढेर बहुत बल तेज निपट, सामान अनेक और डील बड़ा।
गज और तुरंग[13] अच्छे नीके[14], अम्बारी[15] होदे ज़ीन[16] सजा।।

जब बन ठन ऊंचे हस्तीपर, वह पापी आन निकलता था।
सब साज झलाझल करता था, और संग कटक दल चलता था।।3।।''

शब्दार्थ :– 1. शक्ति, 2. व्यथा, 3. मंजीरे, 4. बजना, 5. अच्छे, 6. नक्षत्र, 7. लक्षण, 8. शुभ, 9. पेट, 10. मुहूर्त, 11. समय, 12. जाकर, 13. घोड़ा, 14. अच्छे, 15. ढ़ेर, 16. अद्भुत

नज़ीर साहब ने कंस के पौरूष का वर्णन कितनी सुन्दरता के साथ किया है, जिसे पढ़कर ऐसा लगता है जैसे कंस उनकी इस रचना के समय उन्हीं के सामने खड़ा हो। वे लिखते हैं–

''एक रोज़[1] जो अपने भुज[2] बल पर, वह कंस बहुत मग़रूर[3] हुआ।
और हँसकर बोला दुनियाँमें, है दूजा कौन बली मुझ सा।।
एक बान[4] लगाकर पर्बत को, चाहूँ तो अभी दूँ पल में गिरा।
इस देस के बड़ बल जितने हैं, है कौन जो मुझसे होवे सिवा।।

जो दुष्ट कोई आ जुद्ध[5] करे, कब मो पर बाका[6] जोर चले।
वह सामने मेरे ऐसा हो, जों चींटीं हाथी पांव तले।।4।।

वह ऐसे ऐसे कितने ही, जो बोल गर्व के कहता था।

उन्होंने कंस के गुरूर के विरूद्ध विरोधकर्ता के संवाद को किस अदम्य साहस के साथ पेश किया है, जिसे पढ़कर ऐसा लगता है जैसे वह कंस से अधिक बलवान और साहसी था। सम्भवतः उसने इसी कारण निर्भीक होकर कंस के बल की हँसी करते हुए उसे बताया हो। इस सन्दर्भ में वे लिखते हैं–

' 'सब लोग सभा के सुनते थे, क्या ताब[7] जो बोले कोई ज़रा[8]।।
था एक पुरुष वह यों बोला, तू भूला अपने बल पर क्या?।
जो तेरा मारन[9] हारा[10]है, सो वह भी जनम अब लेबेगा[11]।।

तू अपने बल पर हे मूरख, इस आन अबस अहंकार किया।
वह तुझको मार गिरावेगा यों, जैसे भुनगा[12] मार लिया।।5।।''

शब्दार्थ :– 1. दिन, 2. बाँह, 3. व्यस्त, 4. वाण, 5. युद्ध, 6. उसका, 7. क्रोध, 8. थोड़ा सा, 9. मारना, 10. वाला, 11. लेना, 12. छोटा उड़ने वाला कीड़ा।

गोकुल में भगवान श्रीकृष्ण जी के जन्म लेने के बाद के दृश्य को चित्रित करते हुए नज़ीर अकबराबादी जी ने नंदबाबा औरयशोदामैया जी के खुशी से श्रीकृष्ण जी को लाड़ से दुलारे जाने के बारे में लिखा है–

''नंद और जसोदा बालक को, वां[1] हाथों छांव में थे रखते।
नित प्यार करें तन मन बारें[2], सुनहरी अबरन[3] गहने बांके[4]।।
जी बहलाते मन परचाते, और ख़ूब खिलौने मंगवाते।
हर आन[6]झुलाते पालने में, वह ईधर और ऊधर बैठे।।

कर याद "नज़ीर" अब हर साअत[7], उस पालने और उस झूले की।
आनन्द से बैठो चैन करो, जय बोलो कान्ह झंडूले[8]की।।31।।''[1]

1.2 नज़ीर अकबराबादी का व्यक्तिगत शारीरिक सौष्ठव –

दीवान–ए–नज़ीर अकबराबादी के पृष्ठ 6 में लोकप्रिय जनकवि नज़ीर अकबराबादी के व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए बताया गया है कि वे गेंहुँए रंग के थे। उनकी लम्बाई बीच की थी। उनका माथा ऊँचा और चौड़ा था। आँखें पैनी और चमकदार थीं। नाक लम्बी और ऊँची थी। दाढ़ी खशखशी और मूँछें बड़ी रखते थे। वे शरीर पर कुर्ता–पाजामा पहना करते थे। कुर्ते के ऊपर एक जैकेट पहनते थे तथा कन्धे पर एक खद्दर का अँगौछा भी डालते थे। पैरों में सुन्दर और पतली वाली जूतियाँ पहनते थे। उनके सीधे हाथ की उँगलियों में फ़िरोज़ा/फ़िरोज़ी (नीले रंग के रत्न/पत्थर) की और हक़ीक़/अक़ीक (जिसे अंग्रेज़ी में अंगेट जैमस्टोन कहा जाता है, जो एक उप–रत्न है। जिसे राहू–केतु और शनि के दोषों को कम

---

1 पुस्तक नज़ीर ग्रन्थावली, लेखक– डॉ0 नज़ीर मुहम्मद प्रकाशक–उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ 559.

शब्दार्थ :– 1. वहाँ, 2. न्यौछावर, 3. मूल्यवान कपड़े या आभूषण, 4. सुन्दर, 5. लगावपूर्ण व्यवहार, 6. आकर, 7. समय, 8. बालक के सिर पर उसके जन्मकाल के बाल

करने में सहायता करने के लिऐ पहना जाता है। ये रत्न वह चमत्कारी रत्न है, जो पूरे विश्व में सहजता और सरलता से मिल जाता है, जिसको ज्योतिष के हिसाब से बीच की उँगली की अंगूठी में पहनते हैं, में पहनते थे। उल्लेखनीय है कि (उपरत्न) फ़ीरोजे की अंगूठी व्यक्तियों के प्रेम के सम्बन्धों को सही बनाये जाने के लिये अंगूठी में पहना जाता है। ये गहरे नीले आसमानी और कई बार हरे रंग से भी मिश्रित होता है, जिसे प्रेम सम्बन्धों के बारे में ही सबसे ज़्यादा माना जाता है। ज्योतिष के अनुसार धनु और मीन राशि वाले व्यक्तियों के लिये ये उचित होता है। इसे रोगों की काट करने के लिये भी पहना जाता है। यद्यपि इसे उपरत्न या सस्ते रत्नों में से एक माना जाता है। कुण्डली में बृहस्पति ग्रह कमज़ोर वाले व्यक्तियों के लिये यह अत्यन्त ही उपयोगी माना जाता है। इससे बी.पी. (उच्च रक्तचाप) भी नियन्त्रित होता है। इस रत्न को अंग्रेजी में क्वाइज़ कहा जाता है। ये मूल रूप से टर्की देश में पाया जाता है। इसमें रासायनिक एल्यूमिनियम और हाईड्रोज़ फ़ास्फेट होती है। ये अपारदर्शी रंग का बृहस्पति ग्रह का उपरत्न होता है। आसमानी रंग का फ़ीरोज़ा अच्छा माना जाता है। इसे अष्ठधातु अथवा सोने में बनवाया जाता है। इसकी अंगूठी को बीच की ऊंगली में ही पहना जाता है। हक़ीक को अक़ीक भी कहते हैं, जिसे अंग्रेजी में अगेट जैमस्टोन भी कहा जाता है। यह एक उपरत्न है, जो राहु केतु और शनि के दोषों को कम करने में मदद करता है। ये ग्रीस में निकलता है। ये त्वचा और आँखों के रोगों को नियंत्रित करने वाले होते हैं। ये कई रंगों में पाया जाता है। यह नज़र–गुज़र, टोटकों, रोजी–रोजगार बढ़ावे के लिये पहना जाता है।

गज़लें, नज़्में और गीतों के रचियता होने के साथ ही साथ नज़ीर अकबराबादी एक अच्छे नाट्य लेखक और नाट्यकार भी कहे जा सकते हैं, क्योंकि वे जब ब्रज की धरा पर एक घुमन्तू के रूप में घूमा करते थे। तो शायद वे अपने

समय का अपव्यय न करके उसे अच्छे पर्यविक्षक के रूप में समाज को देखा करते थे। या इसे इस प्रकार से भी कहा जा सकता है कि वे प्रेम की नगरी के रूप में माने जाने वाले ताजमहल के शहर आगरा में जो कुछ देखा करते थे। या जो कुछ अनुभव करते थे। उसका अपने ह्रदय में दृश्य एकत्रीकरण करके उन्हें एक विशेष शब्द चित्र के रूप में उकेरकर नई रचना का सृजन कर देते थे, जिसकी परिणति ये होती थी कि उनकी वही कविताओं के तिलस्मी संगीत व शब्दों की गूँज आगरा के बाजारों के रास्तों और यहॉ तक कि कुंज गलियों में जनमानस की जिह्वा पर गुंजायमान होती थी। नज़ीर अकबराबादी ज़्यादा पढ़े लिखे ही नहीं थे, लेकिन वे गुने बहुत थे। बयॉ शीर्षक से रचित उनकी कविता से दृष्टव्य होता है कि वे अपने एक हाथ मे लोहे का कड़ा डालकर और थाली पर गत बजाकर नाचा और गया भी करते थे। अपने गायन के मध्य वे ''अहा हा'' का ठट्ठा मारा करते थे, जिसे संगीत की भाषा में संगत कहते हैं। निःसंदेह ही नज़ीर अकबरबादी एक सच्चे मुसलमान न हों, क्योंकि उन्होंने खुदा और सल्लल्ला हो अलै है बसल्लम हजरत मुहम्मद साहब पर भी पूरी ईमानदारी के साथ लिखा है। मुहम्मद साहब की प्रशंसा में वे दिन–रात कलमा पढ़ा करते थे। अपने ताजिया प्रेम का बखान उन्होंने अरकाट के एक प्रसिद्ध साहूकार के पुत्र पर आधारित हजरत बिन अली के दर्शन और उसकी कटी हुयी बॉह जुड़ जाने के चमत्कार से उसके माता–पिता द्वारा जनेऊ उतारकर तस्वीह लेकर कलमा पढ़ने की घटना का चित्रण भी उन्होने बड़े अच्छे शब्दों में किया है। बुरी नज़र से बचाने के लिए नाक, कान छेदकर उनका रूप लड़कियों जैसा बना दिया गया।

1.3 नज़ीर अकबराबादी की हिन्दू देवी–देवताओं के प्रति श्रृद्धा और आस्था–

मियाँ नज़ीर के काव्य का अध्ययन करने से यह बात सिद्ध होती है कि भक्ति काव्य के वह पहले उर्दू कवि थे, जिन्होंने जन साधारण में रहकर जन–भावना को पहचाना, अनुभव किया और अध्ययन कर उसका अपने काव्य में सजीव चित्रण किया। नज़ीर ने उत्तर भारत के तीनों धर्मों, हिन्दू–मुसलमान और सिखों के त्यौहारों और महापुरुषों पर कविताएँ लिखकर अपनी समदृष्टि का प्रमाण दिया है।

नज़ीर अकबराबादी धर्म के एक सीमित क्षेत्र में सिमटकर रह जाने के बजाय हिन्दुओं के भी उतने ही चहेते बन गये, जितने मुसलमानों के थे। वे हिन्दु देवी–देवताओं में हिन्दुओं की भाँति ही आस्था रखते थे। तभी तो निश्चिन्त और सहज होकर रचनायें गाने से पूर्व वे हिन्दू देवी–देवताओं की प्रतिमा के समक्ष सिर झुकाकर और उनका हाथ जोड़कर अभिवादन करते थे। कुल मिलाकर वे अत्यन्त ही सहज और सरल व्यक्तित्व की प्रतिमा थे। यही कारण है कि वह समाज के हर एक व्यक्ति से सहजता और सरलता से व्यवहार और संवाद स्थापित कर लेते थे। उनकी रचनायें लोक कविताओं और मुहावरें मिश्रित होती थीं।

चूँकि उस समय नज़ीर अकबराबादी मर्तजवाई के थे। उनको नज़र ना लग जाए। इसलिए उनके माता–पिता उन्हें सामान्य लड़कों की तरह न रखकर लड़कियों की तरह रख–रखाव करते थे।

नज़ीर साहब जब चार साल के हुए ही थे कि सन् 1739 ई. में नादिरशाह ने दिल्ली पर आक्रमण कर दिया और दिल्ली में कत्लेआम कर उसे खूब लूटा। नादिरशाह के बाद भी दिल्ली में अशान्ति बनी रही। इसके बाद सन् 1748–1751

और 1756 ई. में अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों ने दिल्ली को तहस–नहस कर दिया। मरहठे भी अवसर पाकर कभी–कभी दिल्ली पर चढ़ आते थे। बार–बार के इन आक्रमणों से परेशान होने और उनके पिताजी की मृत्यु के बाद नज़ीर अपनी माँ और नानी के साथ 22–23 वर्ष की उम्र में दिल्ली से आगरा चले आए और नूरी दरवाजे में मिठाई के पुल के पास मीर साहब का मकान किराए पर लेकर रहने लगे।

उनके पिताजी की मृत्यु होने के बाद उनकी माँ और नानी उनको दिल्ली से लेकर आगरा आ गयीं, जहाँ वे आगरा के नूरी गेट के पास स्थित मिठाई के पुल के पास स्थित मीर साहब के मकान में रहने लगीं। नज़ीर अकबराबादी का विवाह अहदी अब्दुल रहमान खाँ की नवासी और मुहम्मद रहमान खाँ की बेटी तहबरुन्निसा बेगम के साथ हुआ, जो ताजगंज मुहल्ले की मलकों वाली गली, जिसे आज–कल मलको गली कहते हैं, में रहते थे।

'नज़ीर अकबराबादी को मुसलमान होने के कारण कभी–कभी लोग प्यार से नज़ीर अकबराबादी न कहकर मियाँ नज़ीर कहकर भी सम्बोधित किया करते थे। वह ताजगंज मुहल्ले में जिस स्थान पर रहते थे, वहाँ से थोड़ी ही दूरी पर 'काल भैरों जी' का प्राचीन मन्दिर था (जो आज भी आगरा के ताजगंज शमसानघाट पर बना हुआ है)। जब कभी नज़ीर फुरसत में होते थे तो वे वहाँ चले जाते और वहाँ इकट्ठे लोगों के बीच बैठ कर गपशप किया करते थे। वहाँ आते–जाते लोगों से उन्हें भैरों जी के ऊपर कुछ लिखने की प्रेरणा मिली और उन्होंने "भैरों जी की स्तुति" लिख डाली। इस कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

''देखा है जब से मैंने, तेरा जमाल[1]भैरों।

रखता हूँ तब से दिल में, तेरा ख़्याल[2] भैरों।।

दिन रात है यह मेरा, तुझसे सवाल[3]भैरों।

अब दर्दो गम से आकर मुझको संभाल भैरों।।

तेरी सरन[4] गही[5] है, कर तू निहाल भैरों।

ऐ पर्तपाल[6] देवत[7], मदमस्तकाल भैरों।।

कहते हैं 15 छन्दों की इस कविता को आज भी लोग उस मंदिर में भैरों जी की आरती के रूप में गाकर भैरों जी की पूजा करते हैं।''[1]

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने समय में रामराज, (एक ऐसा राज्य, जिसमें सभी की बात सुनी जा सके और सभी धर्मावलम्बियों को सभी धर्मों का आदर करते हुए स्वयं को अपनी बात कहकर सुख का अनुभव प्राप्त करने का अवसर मिले) को जीवन्त करते हुए कभी लिखा था–

''सब नर करहि परस्पर प्रीति।

चलहि स्व धर्म निरत श्रुति नीती।।''

ऐसा ही कुछ ''सर्व धर्म सम्भाव'' से प्रेरित होकर ही नज़ीर अकबराबादी जी ने सभी धर्मां का स्वागत करते हुए ही अपनी रचनायें कीं। तभी तो उन्होंने सभी धर्मों के मेले–ठेले व धर्म गुरूओं पर लिखा। उन्होंने ईश्वर–वन्दना लिखते हुए लिखा–

---

1 सम्पादक : डॉ. प्रणवीर चौहान पुस्तक : 'हमारा आगरा' पुस्तकमाला द्वितीय पुष्प (आगरा की सांस्कृतिक धरोहर नज़ीर अकबराबादी) प्रकाशक : रानी सरोज गौरिहार ट्रस्टी उदयन शर्मा स्मृति फ़ाउण्डेशन ट्रस्ट, दिल्ली, पृष्ठ 15.

शब्दार्थः– 1. सौन्दर्य (अरबी शब्द), 2. ध्यान, 3. प्रश्न, 4. शरण, 5. लेना, 6. प्रतिपल, 7. देते हो

"ईश्वर–वंदना"

इलाही[1] तू फ़य्याज़[2] और करीम[3]

इलाही तू ग़फ़्फ़ार[4] है और रहीम[5]

मुक़द्दस[6]मुअल्ला[7]मुनज़्ज़ा[8]अज़ीम[9]

न तेरा शरीक और न तेरा सहीम[10]

.............तेरी जाते–बाला है सबसे क़दीम[11]

तेरे हुस्ने–कुदरत ने या किर्दगार[12]!

किये हैं जहांमें वो नक्शो–निगार[13]

पहुँचती नहीं अक्ल उन्हें जर्रा–वार

तहय्युर[14]में है देखकर बार–बार

.............हैं जितने जहां में ज़हीन[15]–फहीम[16]

जमीं पर समावात[17]गर्दा[18]किये

नजूम उनमें क्या–क्या दरख्शांकिये

नबातातबेहद नुमायां किये,

अयां बह्रसे दुर्रो–मरजांकिये

..........हजरसे जवाहर भी और जर्रो–सीम

शिगुफ़्ताकिये गुल ब–फ़स्ले–बहार

अनादिलभी और कुमरी–ओ–कब्कसार

बरो–बर्गो–नख़्लो–शजरशाख़सार

तरावत[31]से खुशबू से हंगाम–कार

...........रवां की सबाहर तरफ और नसीम

बयां कब हो ख़िल्क़त[19] की अनवाअ[20]

काजो कुछ हस्र[21] होवे तो जावे कहा

खुसूसन[22]बनी–आदमे–खुश–लका[23]

शरफ़उन सभी में इन्हीं कोदिया

.............ये इस्लाम–ओ–ईमानो–दीने–क़दीम

अता कीइन्हें दौलते–माअरिफ़त[24]

इबादत[25]इताअत[26]निको–मंजिलत[27]

हया, हुस्नो–उल्फत, अदब,मस्लहत[28]

तमीज़ो–सुरव़न[29]खुल्क[30]खुश–मक्रमत[31]

............फरावां दिये और नाजो–नईम

अपनी इस रचना के माध्यम से नज़ीर अकबराबादी जी ने भगवान के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए लिखा–

तेरा शुक्रे[32]–अहसां[33] हो किससे अदा

हमें मेह्र[34]से तूनेपैदा किया

किये और अल्ताफ़[35]बे–इन्तहा

'नज़ीर' इस सिवा क्या कहे सर झुका

..............ये सब तेरे इकराम[36]हैं, याकरीम![1]

---

[1] 'ईश वन्दना' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 23.

शब्दार्थः– 1. सृजनकर्त्ता भगवान, 2. देने वाला, 3. उदार, 4. मज़दूरों का ठेकेदार, 5. रहम करने वाला, 6. पवित्र, 7. उच्चकोटि की भाषा, 8. पवित्र, 9. प्रसिद्ध, 10. भागीदार (अरबी शब्द), 11. पुराना, 12. बनाने बाला, 13. सुन्दर लड़कियाँ, 14. अरबी में अचम्भा, 15. बुद्धिमान, 16. सुन्दर, 17. स्वर्ग, 18. बार–बार पढ़ना, 19. उत्पत्ति, 20. किसी भाँति का, 21. भरोसा, 22. विशेषकर, 23. खुश रहने का तरीका, 24. पहचान, 25. पूजा, 26. आज्ञाकारिता, 27. इमारत की माला, 28. परामर्श, 29. बातचीत, 30. आतिथ्य, 31. अनुकम्पा, 32. धन्यवाद, 33. उपकार, 34. प्यार, 35. अधिक नाजुक, 36. आदर सम्मान

"शेख सलीम चिश्ती"

मुस्लिम धर्माबलम्बियों की आगरा के फ़तेहपुरसीकरी स्थित **शेख सलीम चिश्ती की दरगाह** के बारे में नज़ीर साहब लिखते हैं–

' 'हैं दो जहाँ के सुल्तां, हजरत सलीम चिश्ती।
आलम के दोनों ईमां, हजरत सलीम चिश्ती।।
सरदफ़्तरे–मुसलमाँ हज़रत सलीम चिश्ती।
मक़बूले–खासे–यज़्दाँ[1] हज़रत सलीम चिश्ती।।
सरदारे–मुल्के–इरफ़ाँ हज़रत सलीम चिश्ती।
हैं दो जहाँ के सुल्तां, हजरत सलीम चिश्ती।।''[1]

धार्मिकता में नजीर अकबराबादी का अगाध श्रद्धा उस समय और दृष्टव्य होती है।जब उन्होंने मुस्लिम होने के बाद हिन्दुओं की कला, संस्कृति, मेले, उत्सव, देवी–देवताओं के साथ ही साथ त्यौहारों पर भी अपनी रचनायें तो की हीं, किन्तु उन्होंने सिक्ख धर्माबलम्बियों के पक्ष में उनके गुरू गुरुनानक जी पर भी रचनायें लिखने में अपनी श्रद्धा उन शब्दों में अभिव्यक्त की–

"गुरुनानक"

' 'कहते हैं नानक शाह जिन्हें, वह पूरेहैं अगाह[2]गुरु
वह कामिल[3] रहबर[4]जगह में हैं यूँ रोशन जैसे माह[5] गुरु
मक़सूद[6] मुराद उम्मीद सभी, बर लाते हैं दिख्वाह गुरु
नित लुत्फ़ो–करम से करते हैं, हम लोगों का निर्वाह गुरु

---

[1] 'शेख सलीम चिश्ती ' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 25–26.

इस बख़्शिश[7] के इस अजमत[8]के, हैं बाबा नानक शाह गुरु।
सब सीस झुका अरदास करो और, हरदम बोलो वाह गुरु।।
हर आन दिलों विच याँ अपने, जो ध्यान गुरुका लाते हैं
और सेवक होकर उनके ही, हर सूरत बीच कहाते हैं
गुरु अपनी लुत्फ़ो–इनायत से,सुख–चैन उसे दिखलाते हैं
खुश रहते हैं हर हाल उन्हें, सब उनके काज[9] बनाते हैं
इस बख़्शिश के इस अजमत के, हैं बाबा नानक शाह गुरु।
सब सीस झुका अरदास करो और, हरदम बोलो वाह गुरु।।
दिन–रात सभों ने याँ दिल दे, है यादे–गुरु से कामलिया
सब मन के मक़सद[10] भरपाये, खुश–वक़्ती का हंगामलिया
दुख दर्द मेंअपने ध्यान लगा,जिस वक़्त गुरु का नाम लिया
पल बीच गुरु ने आन उन्हें,खुशहाल[11]किया और थाम लिया
इस बख़्शिश के इस अजमत के, हैं बाबा नानक शाह गुरु।
सब सीस झुका अरदास करो और, हरदम बोलो वाह गुरु।।
याँ जो–जो दिल की ख्वाहिश की, कुछ बात गुरु से कहते हैं
वो अपने लुत्फ़ो[12] शफ़क़त[13] से नित, हाथ उन्हीं के गहते हैं
अल्ताफ़से उनके खुश होकर, सब खूबी से यह कहते हैं
दुख–दर्द उन्हीं के हरते हैं, सौ सुख से जग में रहते हैं
इस बख़्शिश के इस अजमत के, हैं बाबा नानक शाह गुरु।[1]

[1] 'गुरू नानक' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी–नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 30–31.

शब्दार्थः– 1. अच्छाईयाँ करने वाले, 2. सूचित करना, 3. उत्तम, 4. पथ प्रदर्शक, 5. महीना, 6. अपेक्षित, 7. उपहार, 8. इज्जत / प्रतिष्ठा, 9. मनोकामना, 10. उद्देश्य, 11. सम्पन्न, 12. आनन्द, 13. कृपा

पहले भगवान श्री कृष्ण जी की प्रशंसा में गाँव की महिलायें उनके जन्मदिन के अलावा भी प्रायः ये लोकगीत गाया करती थीं–

''काली देह में खेलन में आयो री मेरौ बारौ सौ कन्हैया।''

ब्रज क्षेत्र में ब्रजभाषा के लोकप्रिय गीतों मन्त्रमुग्ध होकर ही उन्होंने यमुना नदी में शेषनाग से क्रीड़ा के बारे में नजीर साहब ने अपनी मुस्लिम तहजीब में ये नज़्म शब्दों में लिखी है जिसका शीर्षक दिया है–

"कन्हैया जी का खेलकूद"

तारीफ करूँ अब मैं क्या–क्या, उस मुरली अधर बजैया की
नित सेवा कुंज फिरैया की, और वन–वन गऊ चरैया की
गोपाल, बिहारी, बनवारी, दुखहरना,मेह[1]करैया की
गिरधारी, सुन्दर, श्याम बरन, और हलधर जू के भैया की
यह लीला है उस नन्द–ललन,मनमोहन, जसुमति–छैया की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जय बोलो किशन–कन्हैया की....

इक रोज़ खुशी से गेंद तड़ी ले, मोहन जमुना तीर गए
वाँ खेलन लागे हँस–हँसके,यह कहकर ग्वाल और बालन से
जो गेंद पड़े जा जमुना में फिर, जाकर लावे जो फेंके
वह आप ही अन्तरजामी थे, क्या उनका भेद कोई पावे
यह लीला है उस, नन्द–ललन, मनमोहन, जसुमति–छैया की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जय बोलो किशन–कन्हैया की....

शब्दार्थ :– 1. उदासीनता

वे नन्द बाबा और यशोदा के बारे में बड़े श्रद्धा और सम्मान से अपनी बात को पूरा करते हुए लिखते हैं–

नन्द और जसोदा के मनमें, सुध भूली बिसरी फिर आई
सुख चैन हुए दुख भूल गये,कुछ दान और पुन्न की ठहराई
सब ब्रज–वासिन के हिरदै में,आनन्द खुशी उसदम छाई
उस रोज उन्होंने यह भी'नजीर',इक लीला अपनी दिखलाई
यह लीला है उस नन्द–ललन,मनमोहन,जसुमति–छैया की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो,जय बोलो किशन–कन्हैया की.........[1]

1.4 नज़ीर अकबराबादी की पारिवारिक पृष्ठभूमि–

मियाँ नज़ीर का विवाह आगरा के अहदी अब्दुल रहमान खाँ चुगताई की नवासी और मुहम्मद रहमान खाँ की बेटी तहब्बरून्निसा के साथ हुआ था, जो ताजगंज मुहल्ले की मलको गली में रहा करते थे। नज़ीर अकबराबादी भी बाद में नूरी दरवाज़े वाला मकान छोड़कर ताजगंज में जा बसे। वहीं अपना मकान बनबा लिया। जहाँ इनकी दो सन्तानें हुयीं, जिनमें सबसे बड़ा लड़का गुलज़ार अली "असीर" और दूसरी लड़की इमामी बेगम हुई। वे दोनों पढ़ने में बहुत कुशाग्र बुद्धि के थे।

1.5 नज़ीर अकबराबादी की शिक्षा–दीक्षा –

ये तो सर्व विदित है कि नज़ीर अकबराबादी अपने पिता की एक मात्र सन्तान थे और उनके पिताजी भी कम औहदेदार नहीं थे। इतना ही नहीं, उनकी माँ भी एक अच्छे परिवार से थीं। इस प्रकार वे अपने माता–पिता की ऑखो के तारे थे।

---

1 'कन्हैया जी का खेलकूद' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 27–29.

इसलिये उनकी शिक्षा–दीक्षा स्थानीय पाठशालाओं में बड़े प्यार से होने के कारण कक्षा के अन्य बच्चों की तुलना में अत्यन्त ही अच्छी थी।

वे आरम्भ से ही साहित्य प्रेमी थे। उनकी सारी शिक्षा आगरा में ही हुयी थी। आगरा में ही रहकर उन्होंने अरबी, फ़ारसी का गहन अध्ययन करके फ़ारसी और उर्दू पर पूर्ण एक छत्र अधिकार स्थापित कर लिया था। इसके अतिरिक्त वे हिन्दी, संस्कृत, पंजाबी, मारबाड़ी, पुरबिया, भोजपुरी और ब्रजभाषा भी भली–भाँति जानते थे। ब्रजभाषा तो वे इतना अच्छी तरह से जानते थे कि मानो कान्हा अपनी गोपियों से बतिया रहे हों।

वे इतनी कुशाग्र बुद्धि के थे कि 4 वर्ष की उम्र में ही उन्हें मौलवी नियुक्त किया गया था। उन्होंने पहले कुरान का पाठ किया और उसके बाद उन्होंने सादी के करीमा, या मकीमा, उर्दू और फ़ारसी शब्द कोश, खुसरों के खलिकबारी, महदूदनामा, अतैनामा से फारसी भाषा की भी पढ़ाई की और उसके बाद आमदनामा व्याकरण भी पढ़ा।

उन्होंने अपना ध्यान विभिन्न भाषाओं की जानकारी एवं ज्ञानार्जन पर लगाया, जिसका परिणाम ये हुआ कि वे संस्कृत, अरबी, फारसी, उर्दू, पंजाबी, मारबाड़ी, पूरबी, और हिन्दी भाषा के अच्छे ज्ञाता बन गये।

1.6 नज़ीर अकबराबादी की आजीविका का साधन –

शादी होने के बाद नज़ीर अकबराबादी ने अपने जीवन यापन के लिए कुछ दिन मथुरा में रहकर लड़कों को पढ़ाने की नौकरी भी की। जब वहाँ उनका मन ना लगा तो वे भाऊ किलेदार के यहाँ शिक्षक बन गये और उन्होंने नबाव मुहम्मद अली खाँ के बच्चों को पढ़ाया, लेकिन वे वहाँ पर भी अधिक दिन नहीं टिके। फिर उन्होंने

आगरा में धूलियागंज के पास स्थित माईथान में रह रहे राजा विलासराय के बच्चों को सत्रह रुपए प्रतिमाह पर ट्यूशन पढ़ाने का काम किया।

एक समय का खाना भी नज़ीर अकबराबादी वहीं खाया करते थे। ताजगंज से आने–जाने के लिए वे घोड़ी, लेकिन सही मायने में टट्टू का प्रयोग करते थे।

मियाँ नज़ीर का मुख्य कार्य बच्चों को शिक्षा देना और शायरी करना था। उनका अधिकतर समय बच्चों को शिक्षा देने में व्यतीत होता था। यही उनकी जीविका का साधन था। वे आगरा के प्रसिद्ध शिक्षकों में से एक थे। उन्होंने राजा विलासराय के लड़कों– हरबख़्शराय, गुरूबख़्शराय, मूलचन्दराय, मनसुखराय, बंशीधर तथा शंकरदास को पढ़ाया। इनके अतिरिक्त अन्य बच्चों को भी नज़ीर ने पढ़ाया था।

1.7 नज़ीर अकबराबादी की प्रारम्भिक साहित्यिक स्थिति और शिक्षण की पकड़ –

अपने शिष्यों को पढ़ाने में नज़ीर अकबराबादी की पकड़ अत्यन्त ही उत्तम स्तर की थी। तभी तो वे अपने शिष्यों को पढ़ा पाने में सदैव सफल रहते थे और वे चर्चा के पात्र बन कर लोकप्रिय हो गये थे। सभी बड़े–बड़े राजा–महाराजा उनसे अपने बच्चों को पढ़ाने के लिये आग्रह करते थे। एक बार की बात है कि नज़ीर अकबराबादी आगरा में राजा विलासराय साहब के बच्चों को पहली बार पढ़ाने के लिए ताजगंज से धूलियागंज के पास माईथान आये, लेकिन राजा साहब के बच्चे बहुत ही लापरवाह, उद्दण्ड और नटखट थे। उन बच्चों का मन कभी पढ़ने में लगता ही नहीं था। वे खेलकूद में मस्त रहते थे कि खुद पढ़ने के बजाय उल्टा अपने शिक्षकों को ही पढ़ा देते थे। पूर्व में आये उनके कई ट्यूटर उनसे परेशान होकर उन्हें पढ़ाना ही छोड़कर भाग गये। जब नज़ीर अकबराबादी जी ने राजा विलास

राय के बच्चों को कहा कि अपनी किताबें निकालो। मैं तुम्हें पढ़ाता हूँ तो बच्चों ने कहा कि आप पहले हमसे तो पूछिए कि हम आपसे क्या चाहते हैं, जिस पर नज़ीर अकबराबादी ने कहा कि अच्छा आप ही बताइए कि क्या पढ़ायें। जिस पर बच्चों ने कहा कि आप तो हमें कोई कहानी सुना दो। जिस पर नज़ीर अकबराबादी ने उन शरारती बच्चों से कहा कि– ''अच्छा मैं अगर तुम्हें रीछ के बच्चे की कहानी सुना दूँ तो....''। वे बच्चे बोले–''हाँ ये ठीक रहेगा।'' तत्पश्चात् जिन पर नज़ीर अकबराबादी ने उन बच्चों को ये रीछ की कहानी सुनायी–

"रीछ का बच्चा"

''कल राह में जाते जो मिला रीछ का बच्चा,
ले आये वही हम भी उठा रीछ का बच्चा,
जब वक्त बढ़ा रीछ हुआ रीछ का बच्चा,
जब हम भी चले साथ चले रीछ का बच्चा।
था हाथ इक अपने सवामन का मोटा सोटा,
लोहे की कड़ी, जिसमें खड़कती थी सरापा
काँधे में चढ़ा झूलना और हाथ में प्याला
बाजार में ले आये दिखाने को तमाशा
आगे जो हम पीछे तो वह रीछ का बच्चा''

अपनी कहानी पूरी करने के पश्चात् बच्चों ने बड़े मन लगाकर पढ़ना आरम्भ किया। इस प्रकार बच्चों को पढ़ाने से पहले वे कहानियाँ सुनाकर बच्चों का मनोरंजन करते थे और बाद में उनको नियमित पढ़ाते थे। जब राजा साहब ने बच्चों की पढ़ाई में लगनशीलता और नज़ीर अकबराबादी जी के पढ़ाने का ढंग देखा तो उनकी प्रसन्नता की कोई सीमा ना रही। वहीं बच्चे, जिनका कभी पढ़ने में मन

नहींलगता था। जिन्हें कभी कुछ याद ही नहीं होता था। वे बच्चे पढ़ाई से पहले नज़ीर अकबराबादी जी की सुनायी गयी कहानियों को बड़ी उत्सुकता के साथ याद कर लेते थे। उन बच्चों को नज़ीर अकबराबादी की सुनायी गयी बुलबुलों की लड़ाई, बया चिड़िया, रीछ का बच्चा, गिलहरी का बच्चा, अजहदे का बच्चा, कौऐ की कहानी हिरन की दोस्ती, चूहों का अचार, पोदीने की कहानी आदि कहानियाँ कण्ठस्थ हो गयीं। बच्चों को पढ़ाते–पढ़ाते नज़ीर को घर पहुँचने में देर हो जाती थी। इसलिए राजा साहब ने इनके नाश्ते का प्रबन्ध अपने घर पर ही कर दिया था। बच्चों को पढ़ाने के बाद नाश्ता कर वे घर लौटते थे। जाड़े के मौसम में एक दिन राजा साहब की पत्नी ने तिल के लड्डू भिजवाए। नज़ीर साहब को तिल के लड्डू बहुत पसंद थे। इन्हें देखकर नज़ीर मन ही मन बहुत प्रसन्न हो रहे थे। उन्हें प्रसन्न देखकर बच्चों में फुसफसाहट हुई कि आज उस्ताद इतने खुश क्यों हैं? नज़ीर ताड़ गए और बोले बच्चो सुनो, आज तुम्हें 'तिल के लड्डू' की तासीर बताते हैं–

"तिल के लड्डू"

"जाड़े में फिर खुदा ने खिलवाये तिल के लड्डू।
हर एक ख्वाँचे में दिखलाये तिल केलड्डू।।
कूचे गली में हर जाबिकबाये तिल के लड्डू।
हमको भी दिल से हैंगे खुश आये तिल के लड्डू।।
जीते रहे यारो और फिर खाये तिल के लड्डू

उमदों ने सौ तरह की याकूतियाँ[1]बनायीं।
लौंगों ने दारचीनीशक्करभी ले मिलायीं।।

शब्दार्थ :– 1. नींद न आने की दवा

सर्दी में दौलतों की सौ गर्म चीजें खायीं।
औरों ने डाल मिश्री सौ पैंडियाँबनायीं।।
हमने भी गुड़मँगाकर बँधवायेतिल के लड्डू

रख ख्वाँचे के रखकर पैकारयूँ पुकारा।
बादाम–भूना चाबो और कुरकुराछुहारा।।
जाड़ा लगे तो इसका करता हूँ मैं इजारा।
जिसका कलेजा यारो सर्दी ने होवे मारा।।
नौ दाम के वो मुझसे ले जाए तिल के लड्डू

नज़ीर साहब को रानी साहिबा द्वारा उनके नाश्ते में भिजवाये गये लड्डू इतने अच्छे लगे कि उन्होंने लोगों से सुने तिल के फ़ायदे भी बता दिये। अपनी बात को उन्होंने कुछ इस तरह कहा–

जाड़े में जिसको हर दमपेशाब है सताता।
उठिए तो जाड़ा लिपटे,नहीं मूत निकला जाता।।
उनकी दवा भी कोई पूछो हकीम से जा।
बतलाए कितने नुसखे पर एक बन न आया।।
आख़िर इलाज उसका ठहराए तिल के लड्डू।

जाड़ेमें अब जो यारो वह तिल गए हैं भूने।।
महबूबों के भी तिल से उनके मजे हैं दूने।
दिल ले लिया हमारा तिल–शकरियों के रु ने।।
यह भी 'नज़ीर' लड्डू ऐसे बनाये तूने।
सुन–सुन के जिनकी लज़्ज़त घबराए तिल के लड्डू[1]

---

1 'तिल के लड्डू' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 64 / 66.

नज़ीर ने आगरा में ही अरबी, फ़ारसी में शिक्षा प्राप्त की और थोड़े ही समय में फ़ारसी और उर्दू पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया। वे आठ भाषाएँ–संस्कृत, अरबी, फारसी, उर्दू, पंजाबी, मारवाड़ी, पूर्वी और हिन्दू जानते थे। नज़ीर थोड़े ही समय में पंजाबी भली–भाँति बोलने लगे, ब्रजभाषा पर गोपियों की सी महारत हासिल की। पूर्वियों का लहजा सीख लिया, मारवाड़ियों की परिभाषाएँ याद कीं। मलिक मुहम्मद जायसी या तुलसीदास की जो भाषा है, उसमें कमाल पैदा किया। इन्होंने अपनी एक ग़ज़ल में उर्दू, फारसी, पंजाबी, ब्रज भाषा तथा कोई जुबानों में शेर कहे हैं।

1.8 नज़ीर अकबराबादी की अभिरूचियाँ –

नज़ीर अकबराबादी के समय में शिक्षा बहुआयामी हुआ करती थी। शिक्षक अपने छात्रों को मात्र कक्षा विषयक शिक्षण में ही प्रशिक्षण देकर कुशल नहीं बनाते थे, बल्कि वे अपने शिष्यों को तलवार चलाने, कुश्ती लड़ने, लाठी चलाने, भाला और गोला फ़ेंकने की भी शिक्षा देते थे। बचपन से ही उन्होंने स्वयं को एक सिपाही के रूप में तैयार किया, क्योंकि उनके नाना भी आगरा किले के सिपहसलार थे। उनकी खेलने में भी अत्यन्त अभिरूचि थी।

नज़ीर अकबराबादी के संदर्भ में जितना गहरा अध्ययन करते चले जाते हैं उतनी ही उनकी विशेषतायें सामने आती चली जाती हैं। उनके बारे में साहित्य का अध्ययन किये जाने से भी पता चलता है कि वे बचपन से ही बड़े ही अच्छे खिलाड़ी थे। उनके जीवन का एक बड़ा भाग प्रायः खेलकूद में ही बीता था। वे पच्चीसा, गंजफ़ा, चौसर, शतरंज के अतिरिक्त पतंगबाजी और दीवाली पर बड़ी ही कुशलता के साथ जुआ भी खेला करते थे।

वे जन्म जाति से भले ही मुस्लिम हों, लेकिन वे हिन्दुओं के भी कम चहेते नहीं थे। वे सभी धर्माबलम्बियों का आदर–सत्कार किया करते थे। सही अर्थों में देखा जाये तो वे समाज के प्रत्येक समाज के मेले, बारात, तीज–त्यौहार और विभिन्न उत्सवों का पारखी दृष्टि से अवलोकन किया करते थे।

चाहे आगरा का तैराकी का मेला हो या मथुरा के बल्देव जी का मेला। चाहे ईद हो या हिन्दुओं के होली और दीपावली त्यौहार। यदि हम मुस्लिम सम्प्रदाय की ख्याति की बात करें या हिन्दुओं के रक्षाबन्धन की। हम समझते हैं कि वे इन सभी से अछूते न रहे। तब ही तो उन्होंने इन सारे उत्सवों का पुर्ननिर्माण/पुर्नप्रस्तुतिकरण अपनी रचनाओं में किया है। उनकी रूचियों को देखकर ऐसा लगता था कि उनमें दर्शन और चित्रकारी की कलात्मकता भी थी।

आगरा में नज़ीर के आते–आते मुग़लों का वैभव समाप्त हो चुका था, परन्तु उस समय की सामाजिक परम्पराएँ ज्यों की त्यों चली आ रहीं थीं। उनमें से एक परम्परा पतंगबाजी की भी थी। पतंगबाजी के दंगल अक्सर आगरा में हुआ करते थे, जिनमें हिन्दू, मुसलमान, अमीर और ग़रीब सभी तबके के लोग भाग लेते थे। नज़ीर भी पतंगबाजी के शौक़ीन थे। वे भी अपने साथियों के साथ पतंग लेकर वहाँ पहुँच जाते और उनमें भाग लेते थे। तभी तो उन्हें पतंगों की किस्में, उन्हें उड़ाने वाली डोर और मंजा, चरखी आदि का पूरा ज्ञान था। उन्होंने अपनी इस कविता में लगभग 30 प्रकार की पतंगों, उन्हें उड़ाने और पेच लड़ाने के तौर–तरीकों का वर्णन इस प्रकार किया है–

"याँ जिन दिनों में होता है आना पतंग का।
ठहरे है हर मकाँमें बनाना पतंग का।।

होता है कसरतों से मंगाना पतंगका।

करता है शाद दिल को उड़ाना पतंग का।।

क्या–क्याकहूँ मैं शोर मचाना पतंग का।

उड़ाना 'दोबाज़'का है वह शोखी की दस्तगाह[1]।।

देखे तो 'बाज जुर्रे'[2] को हो इसकी दिल में चाह।

'शिकरे'की बाज आवे ने उस जा कभी निगाह[3]।।

बहरी कुही[4]भी देख यह कहती है वाह–वाह।

ऐसा है नाज–ओ–हुस्न[5]दिखाना पतंग का।।'

जब पतंग कट जाती है तब लूटने के लिए लोग दौड़ते हैं। नज़ीर ने उस समय का वर्णन इन पंक्तियों में किया है–

"कटती है जो पतंग तोफिर लूटने उसे।

दो–दो हज़ार दौड़ते हैं, छोटे और बड़े।

कागरा ज़रा सा मिलता है या टुकड़ेकाँप के।

जब इस तरह की सैर भला आन कर पड़े।

फिर सोचिये तो क्याहै ठिकाना पतंग का।।"

नज़ीर साहब ने जलेबियों का जिस सुन्दरता से वर्णन किया है। उससे ये स्पष्ट होता है कि वे मिठाइयों के कितने शौक़ीन थे और उनमें भी जलेबियाँ उन्हें बहुत पसन्द होंगी। सम्भवतः इसीलिये ही उन्होंने मिठाईयों में विशेषकर जलेबियों पर ही अपनी ये नज़्म लिखीं, जिसमें उन्होंने जलेबियों की प्रशंसा में लिखा–

शब्दार्थ :– 1. फारसी भाषी क्षेत्रों के कला संगीत के होने का स्थान, 2. नरबाज, 3. दृष्टि, 4. बाज पक्षी से छोटी एक शिकारी चिड़िया, 5. सुन्दरता

"जलेबियाँ"

''उस लब शकर ने जबकि मँगाई जलेबियाँ
फूली मज़े में तबन समाईंजलेबियाँ

गर लब तुम्हारे कन्द से मीठे न थे तो जाँ
चक फेरी करती किसलिए आईंजलेबियाँ

बातें जो एरफेर के करते हो मुझसे तुम
याराँ किसी नेतुमको खिलाईंजलेबियाँ

खाकर मेरी जलेबियाँ आ एन मेरे पास
काफ़िर ने आज की भी पचाईंजलेबियाँ

माँगा जो मैंने बोसा[1] तो हँसकर कहा कि वाह
क्या तुमने कुछ मुझे ही खिलाईंजलेबियाँ

इन पतले–पतले होंठों का बोसा, मैं क्या कहूँ
गोया[2]तुरत[3] की गरम छपाईंजलेबियाँ

दी गालियाँ जो रात को चुन–चुन के हमको, आह
किस–किस मज़े की हमको वो भायीं जलेबियाँ

जैसे कमाल रूप की शिद्दत में पेटभर
भूखे किसी फकीर ने पाईंजलेबियाँ

आए जो मेरे पास वो शाहेनवादिरात
जब मैंने उनके आगे रखाईंजलेबियाँ

मुँह देख–देख मेरा कहा उसने हँस के यों
कब–कब तुम्हारीहमने हैं खाईंजलेबियाँ

शब्दार्थ :– 1. कौर, 2. बोलने या कहने वाला, 3. तुरन्त.

लो बाँधो मुश्कें मेरी जलेबी के तार से

जो मैंने होंठ से हों लगाईंजलेबियाँ

ऐ बी, मुकरती क्यों हो, वो खंदी तो जीती है

है जिसके हाथ हमने भिजाईंजलेबियाँ

मैं दो बरस से भेजता रहता हूँ रात–दिन

तुमने अभी से मेरी भुलाईंजलेबियाँ

ये बात सुनके हँस दी और यह कहा, मियाँ

ऐसे ही हमने कितनी उड़ाईंजलेबियाँ

हलवाई तो बनाते हैं मैदे की, ऐ 'नज़ीर'

हमने ये सुखन[2] की बनाईं जलेबियाँ''[1]

"भंग"

''दुनिया के अमीरों में यॉं किसकारहा डंका।

बरबाए हुए लशकर फ़ौजों का थकाडंका।।

आशिक़ तो ये समझे हैं अब दिल में बनाडंका।

जो भंग पिएं उनका बजताहै सदा डंका।।

कूंडी के नकारे पर ख़तके कालगा डंका।

नित भंग पी और आ़शिक़ दिन–रात बजा डंका।।

उल्फ़त के जमर्रुद[1] की यह खेत की बूटी है।

पत्तों की चमक उसके कमख़्वाब[2] की बूटी[3] है।।

---

1 'जलेबी' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 2–3.

शब्दार्थ :– 1. जामुन, 2. बुरा सपना, 3. जड़ी–बूटी

मुँह जिसके लगी उससे फिर काहे की छूटी है।
यह तान टिकोरे की इस बात पे टूटी है।।
कूंडी के नकारे पर ख़तके का लगा डंका।
नित भंग पी और आ़शिक़ दिन–रात बजा डंका।।

हर आन खड़ाके से इस ढब का लगा रगड़ा।
जो सुन के खड़क उसकी हो बन्द सभी दगड़ा।।
चक्कान चढ़ा गहरा औरबाँधहरा पगड़ा।
क्या सैर की ठहरेगी, टुक छोड़के यहझगड़ा।।
कूंडी के नकारे पर ख़तके का लगा डंका।
नित भंग पी और आ़शिक़ दिन–रात बजा डंका।।

इक प्याले के पीते ही हो जाएगा मतवाला।
आँखों में तेरी आकर खिल जाएगा गुल्लाला[1]।।
क्या–क्या नज़र आवेगी हरियाली व हरियाली।
आ, मान कहा मेरा, ऐ शोख़[2]नए लाला।।
कूंडी के नकारे पर ख़तके का लगा डंका।
नित भंग पी और आ़शिक़ दिन–रात बजा डंका।।

हैं मस्त वही पूरे जो कूंडी के अन्दर हैं।
दिल उनके बड़े दरिया जी उनके समन्दर हैं।।
बैठे हैं सनम[3]बुत हो औरझूमते मन्दिरहैं।
कहते हैं यही हँस–हँस आ़शिक़ जो कलन्दर[4] हैं।।

शब्दार्थ :– 1. गुल्ला रस का, 2. फुर्तीला, 3. प्रेमी, 4. मदारी.

कूंडी के नकारे पर ख़तके का लगा डंका।
नित भंग पी और आ़शिक़ दिन–रात बजा डंका।।

सब छोड़ नशा प्यारे पीवे तू अगर सब्ज़ी।
कर जावे वहीं तेरी खातिरमें असर सब्जी।।
हर बाग में हर जा में आ जावे नजर सब्जी।
तेरी भी 'नज़ीर' अब तो सब्जी में है सरसब्ज़ी।।
कूंडी के नकारे पर ख़तके का लगा डंका।
नित भंग पी और आ़शिक़ दिन–रात बजा डंका।।"[1]

1.9 नज़ीर अकबराबादी का स्वाभिमानी व्यक्तित्व–

नज़ीर स्वाभिमानी एवं स्वतन्त्र प्रकृति के कवि थे। उन्होंने कभी किसी राजा, नवाब या रईस की प्रशंसा में एक पंक्ति भी नहीं लिखी। वे न तो लालची थे और न उन्हें किसी की खुशामद करना ही पसंद था। उस समय लखनऊ के नवाब सआदत अली खाँ का शासन था। नवाब साहब स्वयं शायरी के शौक़ीन थे। उन्हें जब नज़ीर की ग़रीबी का पता चला तो उन्होंने नज़ीर को अपने यहाँ बुलाने के लिए आदमी भेजे। भेंट स्वरूप कुछ धन भी भेजा। उन्होंने लखनऊ जाने का वायदा भी कर लिया। परन्तु उन्हें उन रुपयों से कुछ ऐसी ग्लानि हुई कि रात–भर नींद नहीं आई। सुबह उठकर उन्होंने वे रुपये वापस कर दिए और कह दिया–"बादशाह से मेरा सलाम कहना, मेरी तरफ से माँफी माँगना और अर्ज़ करना कि नज़ीर फ़क़ीर तो अपनी झोंपड़ी में ही खुश है। शाही महलों में रहना उसकी तक़दीर में नहीं है।

[1] 'भंग' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 62/63 .

इसी प्रकार भरतपुर के राजा ने भी उन्हें अपने यहाँ बुलाया, उन्होंने वहाँ जाने से भी इन्कार कर दिया। वे धन–दौलत को बुरी चीज़ समझते थे। अपनी एक कविता में उन्होंने लिखा भी है –

"ज़र की जो मुहब्ब्त तुझे पड़ जायेगी बाबा,
दुःख इससे तेरी रूह बहुत पायेगी बाबा।
हर खाने को हर पीने को तरसायेगीबाबा,
फिर क्या तुझे अल्लाह से मिलवायेगी बाबा।।"

नज़ीर के लखनऊ जाने की भनक आगरा में उनके चाहने वालों को लगी। कुछ लोगों ने अफवाह फैला दी कि नज़ीर पैसों की ख़ातिर आगरा छोड़कर लखनऊ जा रहे हैं। तो वे सब इकट्ठे होकर नज़ीर के घर पहुँच गए और नारे लगाने लगे कि हम नज़ीर को आगरा से नहीं जाने देंगे। तब नज़ीर ने उनसे कहा–

"कहते हैं जिसको ताजमहल आगरे का है,
यह संगेमरमर का सितम आगरे का है,
शाहेजहाँ के दिल का चमन आगरे का है,
मुमताज़ के ख़्वाबों का चमन आगरे का है।
आशिक कहो असीर कहो आगरे का है,
मुल्ला कहो दबीर कहो आगरे का है,
मुफ़लिस कहो, फ़क़ीर कहो आगरे का है,
शायर कहो 'नज़ीर',कहो आगरे का है।।"

मियाँ नज़ीर साहब स्वाभिमान और स्वतन्त्रत प्रकृति के कवि थे।

उनके बारे में यह भी चर्चित है कि एक बार की बात है कि उनके पिता मुहम्मद फ़ारूक़ अज़ीमाबाद के किन्हीं नवाब के यहाँ नौकरी करते थे, जहाँ उनकी मृत्यु हो जाने के बाद उस नबाव ने नज़ीर अकबराबादी को उनका सामान लेने के लिए उनको बुलाया गया, लेकिन नज़ीर जी वहाँ नहीं गए और उल्टा उनको लिख दिया कि कृपया आप उस सब सामान को ख़ैरात कर दीजिए।

ब्रज क्षेत्र में नज़ीर की कविताओं की बहुत धूम थी। उनकी प्रशंसा से प्रभावित होकर भरतपुर के राजा ने उन्हें अपने यहाँ बुलाया, लेकिन वे वहाँ भी नहीं गए। सही अर्थों में उन्हें आगरा इतना प्रिय था कि उन्होंने आगरे को छोड़कर बाहर कहीं जाने की कभी इच्छा ही व्यक्त नहीं की। उन्होंने अनेकों आमन्त्रणों और प्रलोभनों के होते हुए भी कविता को व्यवसाय में परिवर्तित नहीं होने दिया। एक बार नबाव वाज़िद अली शाह के दूत के निरन्तर आग्रह व दबाव पर वे लखनऊ जाने के लिए तैयार भी हो गए और नज़ीर अपनी घोड़ी पर सवार होकर निकले। नज़ीर तब तक आगे बढ़ते रहे। जब तक कि ख़ूबसूरत ताजमहल उनकी आँखों से ओझल ना हो गया, जिसकी छाया में नज़ीर ने उम्र बसर की थी। कुछ दूर चलने के पश्चात् एक ऐसी स्थिति आई कि जब ताजमहल उनकी आँखों से ओझल होने लगा। तो वे स्तब्ध हो गये और तत्पश्चात् वे पुनः वापस लौट पड़े। वे ताजमहल और आगरे की ओर, इस दृढ़ निश्चय के साथ वापस आ गये कि वे ताज को देखते हुए निरन्तर आगरा में आजीवन शिक्षक की नौकरी कर सन्तुष्ट रहेंगे। बजाय लखनऊ के समृद्ध दरबार में विलासपूर्ण जीवन बिताने के।

1.10 नज़ीर अकबराबादी की साहित्यिक विशेषता और भाषा शैली –

अपनी साहित्यिकता के कारण नज़ीर अकबराबादी लाखों धड़कते ह्रदय की एक पसन्द बन गये थे। उसकी रचनाओं को 200 वर्ष से अधिक होने के पश्चात् भी उनके रचना प्रेमियों ने उन्हें लोकजीवन का एक महत्वपूर्ण अंश बना दिया। वे इतने लोकप्रिय हुए कि क्या मेले, क्या तमाशे क्या जनजीवन, क्या व्यापार और न जाने क्या–क्या और किस–किस विषय पर उन्होंने अपनी कृतियॉ समाज को दीं। यहाँ तक कि एक प्रसंग में उन्होंने वैश्या का इतना सटीक और अच्छा दृश्य प्रस्तुत किया है कि वह समाज का एक घिनौना पहलू होने के पश्चात् भी रचनात्मक दृष्टि से कलात्मक होने के कारण अत्यन्त ही प्रशंसनीय माना जा रहा है।

नज़ीर अकबराबादी के समय समाज में एक प्रकार से हड़बड़ी मची हुई थी। चारों ओर अराजकता का वातावरण था। उस समय "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की स्थिति थी। उस समय निरीह जनता विलासिता और शोषण रूपी किसी चाकी के दो पाटों के बीच फँसी हुई थी। स्त्रियों की दशा बहुत ही दयनीय थी। कुलीनता के साम्राज्य में कुलीन बन्धुओं से वैश्याओं का आदर–सम्मान अधिक हो रहा था। ऊधमबाई मुहम्मदशाह "रंगीला" के दरबार की सम्मानित वैश्या थी, जिसके मुहम्मदशाह से बहुत ही अच्छे आन्तरिक सम्बन्ध थे। उसे ही लोग एक प्रकार की रानी/बेगम माना करते थे।

मुहम्मदशाह की मृत्यु पश्चात् ऊधमबाई ने अपने पुत्र अहमदशाह को गद्दी पर बैठाया। उसके बाद वैश्या अनूपबाई के पुत्र आलमगीर को गद्दी पर बैठाया। उसके बाद वैश्या अनूपबाई के पुत्र आलमगीर (द्वितीय) और लाल कुँवरि वैश्या का पुत्र शाह आलम गद्दी पर बैठा। उस समय क्या हिन्दू क्या मुस्लिम और क्या शासक, सभी के सभी विलासिता और कामुकता के मकड़ जाल में लिप्त थे। हिन्दी

के चिर–परिचित कवि घनानन्द की प्रेमिका सुजान भी इसी दरबार में थी। वैश्याओं से आन्तरिक सम्बन्ध रखना उस समय अच्छे स्तर के होने का प्रतीक माना जाता था।

इसी श्रृँखला में जयपुर के राजा सँवाई प्रताप सिंह तो वैश्याओं का साथ पाकर इतने भाव–विह्वल हो जाते थे कि वे महिलाओं के वस्त्र पहनकर, श्रृंगार कर के अपने पैरों में घुँघरू बाँधकर अन्तःपुर में नाचा करते थे।[1]

जहाँदारशाह तो वैश्यावृत्ति में इतना मस्त था कि वह अपने अन्तःपुर में अपने हाथ में कंघा और शीशा लेकर हर समय सुन्दरियों के केश सँवारा करता था। लाल कुँवरि उसकी सहेली थी। उसके कहने पर उसने तबलची, सारंगीबाद व कुँजड़ों आदि को उच्च पदों पर आसीत कर दिया था। ये लोग मद–मस्त होकर बादशाह को भी लात मारा करते थे।[2]

ठीक इसी प्रकार नज़ीर अकबराबादी के भी “मोती” नामक वैश्या से सम्बन्ध थे।[3]

अपनी काव्यात्मक अथवा गद्य काव्य रूपी रचनाओं में अभूतपूर्व प्रभाव होने के कारण वे जनकवि बन गये। उनकी रचनाओं में ब्रज की रज की सौंधी महक आज भी जनमानस में अपना एक विशेष स्थान रखती है। नज़ीर यथार्थवादी कवि थे। जन–जीवन में इतने घुल–मिल गए थे कि उससे अलग उनका अस्तित्व ही नहीं रह जाता। उन्होंने जो कुछ भी कहा जन–सामान्य के विषय में कहा,

---

1 मुगल साम्राज्य का पतन : लेखक–सरयदुनाथ सरकार (भाग–4), पृष्ठ 204–205.

2 मुगल साम्राज्य का पतन : लेखक–डॉ. मथुरालाल शर्मा पृष्ठ 203.
सम्पूर्ण विवरण – नज़ीर ग्रन्थावली : लेखक डॉ. नज़ीर मुहम्मद, दो शब्द अनुभाग पृष्ठ xiii, प्रकाशक– उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

3 नज़ीर ग्रन्थावली : लेखक डॉ. नज़ीर मुहम्मद, दो शब्द अनुभाग पृष्ठ xiii, प्रकाशक– उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

जन–सामान्य के लिए कहा और जन–सामान्य की भाषा में कहा। उनकी कुछ रचनायें मानव जीवन के यथार्थ के साथ–साथ दार्शनिक तथ्यों को भी उजागार करती हैं।

नज़ीर की ″आदमीनामा′नाम की कविता अपनी अलग ही विशेषता लिये हुए है। इसकी यह पंक्तियाँ देखने योग्य हैं–

″याँ आदमी ही नार है और आदमी ही नूर।
याँ आदमी ही पास है और आदमी ही दूर।।
कुल आदमी का हुस्नो कबह में है या ज़हूर।
शैतां भी आदमी है जो करता है मक्रो जूर।।
और हादी रहनुमा है सो है वो भी आदमी।।
मस्जिद भी आदमी ने बनाई है याँ मियाँ।
बनते हैं आदमी ही इमामऔर ख़ुतबाख़्वाँ।।
पढ़ते हैं आदमी ही कुरान और नमाज़ याँ।
और आदमी ही उनकी चुराते हैं जूतियाँ।।
जो उनको ताड़ता है सो है वह भी आदमी।[1]
याँ आदमी पे जान को बारे है आदमी।
और आदमी पे तेग को मारे हैआदमी।।
पगड़ी भी आदमी की उतारे है आदमी।
चिल्ला के आदमी को पुकारेहै आदमी।
और सुन के दौड़ता है सो हैवो भी आदमी।।''

---

1 आदमीनामा, लेखक– डॉ. नज़ीर मुहम्मद, पुस्तक– नज़ीर ग्रन्थावली, प्रकाशक– उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ– 239.

सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोंण से ही नहीं, नज़ीर की कुछ कविताएँ ऐतिहासिक महत्व की भी हैं। इनमें 'शहरे–आशोब'(शहर आगरा की दुर्दशा) प्रमुख है। 18वीं शताब्दी के उजड़े हुए आगरे का इसमें आँखों देखा बड़ा करुणामय चित्रण है। आगरे का व्यापार चौपट हो गया है और व्यापारी बर्बाद हो गये हैं–

"सर्राफ, बनिये, जौहरी और सेठ साहूकार।
देते थे सबको नकद सो खाते हैं अब उधार।।
बाजार में उड़े है पड़ी खाकबेशुमार।
बैठे हैं यूँ दुकानों में अपनी दुकानदार–
जैसे कि चोर बैठे हों कैदी कतारबंद।।"

1.11 नज़ीर अकबराबादी की मृत्यु –

हम समझते हैं कि उन्होंने जनसामान्य के बीच बैठकर भाषा, सामाजिकता और संस्कृति के साथ ही साथ लोगों की समस्याओं को समझकर ग़ज़ल के शेर, नज़्म और गीत लिखे। सच पूछिये तो उन्होंने सही अर्थों में ज़िन्दगी को जिया। मृत्यु किसी भी व्यक्ति की और कभी भी निश्चित है। ये बात अलग है कि उसका बहाना कोई भी हो। इस सन्दर्भ में उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम पलों में मृत्यु के ऊपर ''मौत'' नामक एक कविता लिखी–

''दुनियाँ में अपना जी कोई बहला के मर गया,
दिल तंगियों से और कोई उकता के मर गया।
आकिल था वह तो आपको समझा के मर गया,
जीता रहा ना कोई हर इक आके मर गया।।''

निःस्संदेह, इनके पिता सुन्नी मुसलमान थे, लेकिन वे खुद शिया मुसलमान थे। धर्म परिवर्तन की प्रक्रिया के बारे में कोई निश्चित सम्वेत–सूत्र उपलब्ध नहीं है। ऐसा संभवतः उनकी माँ के विशिष्ट प्रभाव के चलते ही हुआ होगा, जो स्वयं शिया थीं। नज़ीर इतने उदारवादी थे कि अन्ध परम्पराओं और धर्मिक रूढ़ियों को उन्होंने जीवन के क्षेत्रों में बिल्कुल नहीं आने दिया। विश्वास से शिया होने के बावजूद सूफियों के रहस्यवाद की ओर उनका बहुत रूझान था। वे दिल्ली के प्रसिद्ध सूफी मौलाना फ़ख़रूद्दीन के अनन्य प्रशंसक थे। नजीर को सौ वर्ष की लम्बी ज़िन्दगी मिली, किन्तु इतना सब करते हुए भी नज़ीर अकबराबादी को अपने जीवन के अन्तिम दिन अत्यन्त ही कष्टमय उस समय व्यतीत करने पड़े जब उन्हें पक्षाघात (लकवा) हो गया । लकवा मार जाने के तीन वर्ष बाद इन्होंने अपने आँगन के नीम और बेर के पेड़ों की छाया में अंतिम विराम लिया, जिनकी छाँव में आजीवन खूबसूरत कविताऐं लिखते रहे, जहाँ शार्गिद युवा कवियों से बातचीत होती थी और अपने शिष्यों को शिक्षा दी थीं। इन पेड़ों की छाया नज़ीर के पूरे उत्कर्ष की साक्षी रही और 95 वर्ष की उम्र में 16 अगस्त सन् 1830 को उनकी मृत्यु हो गयी, लेकिन इस सन्दर्भ में ''ज़िन्दगानी बे नज़ीर'' के लेखक प्रोफेसर शाहबाज़ साहब ने नज़ीर अकबराबादी की मृत्यु के बारे में अपनी पुस्तक के पृष्ठ 128 पर एक स्थान पर लिखा है कि नज़ीर अकबराबादी उस समय दिवंगत हुए जब वे 89 वर्ष के थे और 'इन्तख्वाबे कुलिया–ए– नज़ीर'' के लेखक अब्दुलबारी आसी ने नज़ीर अकबराबादी की मृत्यु 1246 हिजरी अर्थात् 1830 को होना बताया है।

यह तो सर्वविदित है कि कबीरदास जी ने भी कई प्रकार की रचनायें कीं, जिसमें उन्होंने किसी के साथ जाति–पाँति का भेद भाव नहीं किया, जिसके कारण वे हिन्दू और मुसलमान धर्म के लोगों के चहेते बन गये और अन्त में उन्हें सन्त

कबीरदास के नाम की ख्याति प्राप्त हुई। सन्त कबीरदास के बारे में पुस्तकों में इस प्रकार की पुष्टि होती है कि उनकी मृत्यु होने पर उनके शव का अलग–अलग धर्म के व्यक्तियों ने अन्तिम संस्कार अपने–अपने धर्मानुसार किया। कोई बताता है कि उनके शव को मुसलमानों द्वारा कब्र में गाड़ा गया और कुछ कहते हैं कि हिन्दुओं ने उनके शव का दहन किया। ठीक उसी प्रकार कुछ लोक कवि नज़ीर अकबराबादी के साथ हुआ। इसके सन्दर्भ में हमने मुहम्मद इरशाद खाँ द्वारा नज़ीर अकबराबादी पर उनके किये शोध–"आधुनिक हिन्दी के विकास में नज़ीर अकबराबादी की काव्य भाषा का योगदान" विषय पर उनके निर्देशक डॉ॰ अब्दुल अलीम, तत्कालीन (रीडर) हिन्दी विभाग अलीगढ़ मुस्लिम विश्व विद्यालय, अलीगढ़ के किये शोध के पृष्ठ 30 पर स्थित उपशीर्षक आस्था के अन्तिम अनुच्छेद में उल्लिखित यह कि नज़ीर अकबराबादी को पक्षाघात होने के तीन वर्ष के पश्चात् उनकी मृत्यु हो गई तो सुन्नी और शिया मुसलमानों और हिन्दुओं के मध्य उनके अन्तिम संस्कार किये जाने के सन्दर्भ में क्रिया–कर्म की रीति को लेकर अपने–अपने धर्म से उनका क्रिया कर्म किये जाने की रीति को लेकर जब काफी मतभेद हो गया तो दोनों ही धर्म के लोगों के मध्य आपसी सुलह–समझौते के बीच इस बात की धार्मिक सहमति बनी कि मुसलमान नज़ीर अकबराबादी जी के शव का अन्तिम संस्कार मुस्लिम धार्मिक विश्वासों के अनुरूप नमाज़–ए–जनाजा पढ़कर करायेंगे और हिन्दू समर्थक उनकी चादर को ले जा कर अपनी धार्मिक रीति–रिवाज से उसका अन्तिम संस्कार करायेंगे। इसके बाद ठीक कुछ ऐसा ही किया गया।

इनकी मृत्यु के बाद शिया–सुन्नियों के अलावा हिन्दुओं ने भी अपना अधिकार दिखाया। घर में पेड़ों की छाया में मियाँ नज़ीर को दफ़नाकर मज़ार बना

दी गई और हिन्दू शिष्यों और प्रशंसकों ने इनके कफ़न को जलाकर श्रद्धाँजलि अर्पित की।

नज़ीर अकबराबादी की मृत्यु के बारे में नज़ीर की इन काव्य पंक्तियों को पढ़कर नजीर की आयु का अनुमान स्वयं हो जाता है–

''ऐ यार सौ बरस की हुई अपनी उम्र आकर।
और झुर्रियां पड़ीं हैं सारे बदन के ऊपर।।''

नब्बे–पचानवे के लगभग आयु का पहुँचा हुआ व्यक्ति स्वयं को लगभग सौ वर्ष का कह सकता है। सन् 1243 हिजरी में उनको फ़ालिज हुआ और तीन साल के बाद 26 सिफर 1246 हिजरी तदनुसार 26 अगस्त सन् 1830 को उनका देहान्त हुआ।

इस प्रकार एक महान् जीवन का अन्त हुआ। उन्होंने अपने जीवन का एक–एक क्षण पूरी संतुष्टि और खूबसूरती से जिया और अपने पीछे वे अपनी एक विधवा पत्नी, एक बेटा तथा बेटी के अलावा सैकड़ों शिष्यों का संसार छोड़ गए और संसार के लिए अपना अमूल्य शाश्वत काव्य छोड़ गये।

नज़ीर अकबराबादी की एक कविता 'दीदबाजी' का अध्ययन करके ऐसा प्रतीत होता है कि उनका शेष जीवन अत्यन्त ही कष्टमय और विषम परिस्थितियों में व्यतीत हुआ होगा। तभी उनकी रचनाओं में कहीं–कहीं रीछ, बन्दर, आम और जामुन के टोकरे भी उनके द्वारा उठाये जाने की पुष्टि होती है। ऐसा भी लगता है कि उन्होंने दालमोंठ और पापड़ की दुकान भी लगाई होगी। तभी तो उन्होंने इन सभी बातों का भली–भाँति अभिव्यक्तिकरण किया है। इतना ही नहीं उन्हें इन सभी बातों के होते हुए संगीत का भी ज्ञान रहा होगा। तभी तो उनका लगाव सुन्दर रूपों

की ओर उन्हें खींच ले गया और वही उनकी सुन्दरता की अभिलाषा उनको वैश्याओं के कोठों के गन्तव्य पर ले गयी होगी। उन्होंने वैश्याओं पर अपनी आसक्तता का वर्णन अपनी लिखी नज़्म– 'वैश्या' पर बड़ी ही अपनी मादकता पूर्ण शैली में लिखा है। इसके सन्दर्भ में हमने मुहम्मद इरशाद खाँ द्वारा नज़ीर अकबराबादी पर उनके शोध–"आधुनिक हिन्दी के विकास में नज़ीर अकबराबादी की काव्य भाषा का योगदान" विषय पर उनके निर्देशक डॉ॰ अब्दुल अलीम, तत्कालीन (रीडर) हिन्दी विभाग अलीगढ़ मुस्लिम विश्व विद्यालय, अलीगढ़ के किये शोध के पृष्ठ 14 पर नज़ीर अकबराबादी के मोती नामक वैश्या से उनके मैत्री और अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित होने की पुष्टि भी की गई है।

ब्रज–क्षेत्र और यहाँ के आगरावासी आज भी अपने प्रिय जनकवि मियाँ नज़ीर अकबराबादी के स्मरण में प्रत्येक वर्ष बसंत–पंचमी वाले दिन शहर के प्रबुद्ध नागरिक, कलाकार, अधिकारी, राजनेता, समाजसेवी, कवि और शायर ताजगंज, आगरा की मलको गली स्थित नज़ीर साहब की मज़ार पर आकर वहाँ आयोजित होने वाले नज़ीर मेले में एकत्र होकर बड़े श्रद्धा भाव से उनकी नज़्मों, कविताओं और गीतों को गाते और प्रस्तुत करते हैं। पिछले 70 वर्षों से आयोजित नजीर मेले के बारे में लतीफ़उद्दीन साहब और डॉ. गुरमुखराम टंडन ने अपने अनुभव सुनाते हुए बताया था–''मुझे याद है कि बसन्त के दिन आगरे के मोतीकटरा, गोकुलपुरा,छत्ता बाज़ार व ताजगंज आदि के उनके चहेते लोग पहले अपनी–अपनी टोलियाँ बना कर और पीली टोपियाँ पहनकर, बच्चे पीले कुर्ते और औरतें पीले दुपट्टे, धोतियाँ पहनकर नज़ीर साहब की नज्में पढ़ते हुए मेला देखने जाते थे, जिसमें अधिकाधिक संख्या हिन्दूओं की होती थी। जहाँ पूरे दिन नज़ीर साहब की शायरियों को विशेष प्रकार से

पढ़ने के लिये प्रतियोगितायें हुआ करती थीं। उस मेले में आने वाले कम पढ़े–लिखे या अनपढ़ लोगों को भी उनकी रचनायें लोकगीतों की तरह कण्ठस्थ रटी हुयी थीं।

2. नज़ीर अकबरबादी जी का कृतित्व :

कविवर नज़ीर अकबराबादी के जीवन में उनका कोई काव्य संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ, जिसका सबसे बड़ा कारण यह था कि नज़ीर राह चलते हुए 'नज्में' कहा करते थे, लेकिन उनका कोई संग्रह नहीं किया करते थे। उनकी कविताओं को उनके प्रेमी प्रशंसकों ने संजोकर रखा था। यह तो सभी स्वीकारते हैं कि नज़ीर अकबराबादी ने बहुत कुछ लिखा था, लेकिन उनकी रचनाओं की निश्चित संख्या कोई नहीं बता सकता। नज़ीर द्वारा रचनाओं को शास्त्रीय नियम, साहित्यिक सौंदर्य और राजसी साज–सँवर से दूर रखने के कारण बहुत समय तक साहित्यकारों ने नज़ीर के काव्य को साधारण और घटिया समझकर उपेक्षित रखा। कवि नज़ीर ने भी अपनी रचनाओं को एकत्रित नहीं किया। इसलिये कोई व्यवस्थित संग्रह तैयार नहीं हो सका। उनके शिष्यों, मित्रों और प्रशंसकों के पास उनकी रचनाऐं पड़ी रहीं।

कहते हैं कि जहॉ चाह है, वहॉ राह है। इस मध्य किसी भी प्रकार का जातिगत वैमनस्य किसी भी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न नहीं कर सकता। संभवत इसीलिये ही विशेषकर समझदार लोगों के मध्य प्रेम के वशीभूत हिन्दू–मुस्लमान के विषय का कोई अर्थ नहीं रखता। उस समय भी देश में साम्प्रदायिकता का वातावरण था। जन–जन एक–दूसरे के खून के प्यासे हो रहे थे। जैसे ही जनता ने अपने विवेक से काम लेने हुए सुधि ली तो वैमनस्यता को दूर भगाने के लिये हिन्दू संतो

और मुस्लिम पीर–फ़कीरों ने एक साथ कदम बढ़ाते हुए आन्दोलन के रूप में एक ऐसी पहल की, जिसके परिणामस्वरूप सांस्कृतिक एकता सम्बन्धी गीत प्रचलन में आ गये और इन्हीं से ओत प्रोत होकर नज़ीर अकबरबादी ने लिखा कि–

"जिन मैल दिल से,
मिर्ज़ा माधौ को धो दिया।
हिन्दू–तुरक का भेद,
दिलो जॉ खो दिया।।
आशिक तो कलन्दर है,
न हिन्दू ना मुसलमाँ।।

नज़ीर साहब को कुछ ऐसे संस्कार अच्छे मिले थे, जिसके कारण उन्होंने कभी किसी से लड़ना पसन्द नहीं किया। उनके विरोध करने का तरीका इतना अच्छा था कि अगर आप भी सुनेंगे तो कायल हो जायेंगे। जिसका उदाहरण उनकी एक नज़्म "चूहों का अचार" से सिद्ध होता है उसकी कहानी कुछ इस प्रकार की है–

हुआ ये कि एक बार नज़ीर साहब ने भोलाराम नामक एक पंसारी की दुकान से खाना खाने को अचार मँगवाया। पंसारी की दुकान पर काफी भीड़ लगी हुयी थी। दुकानदार ने बिना ध्यान दिये हड़बड़ी में अचार बाँध कर दे दिया। जब नज़ीर साहब ने घर पर खाना खाया और अचार खोलकर उसे खाने के साथ खाने बैठे तो देखा कि उसमें मरा हुआ एक साबित चूहा रखा था। उन्होंने शाम को

पंसारी को भी कविता पाठ करने के लिये बुलाया और तब उन्होंने ये कविता भी पढ़ी। उन्होंने दुकानदार के व्यक्तित्व पर लिखा–

"चूहों का अचार"

आगे थे कई अब तो हमीं एक हैं चूहे मार।
मुद्दत से हमारा है इस आचार का व्यौपार।।
गलियों में हमें ढूंढ़ते फिरते हैं ख़रीदार।
बरसे हैं पड़ी कौड़ी, रूपे पैसों की बौछार।।
क्या ज़ोर मज़ेदार है आचार चूहों का।

फिर उन्होंने दुकानदार से किन शब्दों में निन्दा की? ये भी अन्तिम पद में लिखा–

अब्बल तो चूहे छाँटे हुए क़द के बड़े हैं।
और सेर सवा सेर के मेंढ़क भी पड़े हैं।।
चख देख मेरे यार यह अब कैसे कड़े हैं।
चालीस बरस गुज़रे हैं जब ऐसे सड़े हैं।।
क्या ज़ोर मज़ेदार है आचार चूहों का।

उनके जीने का तरीका एक प्रकार से जनसामान्य से भिन्न था।

नज़ीर अकबराबादी का कृतित्व इतना सुन्दरतम् है कि उसकी हम जितनी प्रशंसा करें उतनी ही कम है। शोध के मध्य ये तथ्य जानकारी में आया कि नज़ीर साहब के रचना कोष में लगभग डेढ़ लाख से अधिक छन्द, कवितायें, नज़्म और शेर थे, लेकिन वो दुर्भाग्यवश पर्याप्त रूप से संजोये न जाने के कारण एकत्रित न किये

जा सके और वे नष्ट हो गये। फिर भी उनके लगभग छः हजार छन्द आज भी मौजूद हैं।

2.1 नज़ीर अकबराबादी की रचनाऐं–

नज़ीर के उर्दू के दो और फ़ारसी के तीन दीवानों का संग्रह भी मिलता बताया जाता है। नज़ीर ने फारसी भाषा में गद्य भी लिखा। फारसी की ही नौ कृतियों की खोज हुई। उन रचनाओं की सातों पांडुलिपियों को दर्ज भी कराया गया, जो क्रमशः इस प्रकार हैं– नज्में, गजीन, कदे मत्तीन, फहमिए करीन, बज़्मे ऐश, शनाई –ए–जेबा, हुस्न बाज़ार और तर्जे तक़रीर।[1]

ये सारी पांडुलिपियाँ दिल्ली विश्वविद्यालय के पांडुलिपि विभाग में उपलब्ध हैं। उर्दू–हिदी के अनेक विद्वानों ने उनकी रचनाओं के छः छोटे–बड़े संग्रह प्रकाशित कराए। साथ ही उनका जीवन परिचय भी प्रस्तुत किया। इन ग्रन्थों के नाम इस प्रकार हैं–

कुल्लियाते नज़ीर	:	मुहम्मद अब्दुल गफूर 'शहबाज'
रफ़हे नज़ीर	:	मखमूर अकबराबादी
मुंतखाबते नज़ीर	:	मखमूर अकबराबादी
चमने बेनजीर	:	मखमूर अकबराबादी
दीवाने नज़ीर अकबराबादी	:	मिर्जा फ़रहतुल्ला बेग
इंतखाब कुल्लियाते नज़ीर	:	सैयाद जलालुद्दीन अहमद जाफ़री
गुलज़ारे नज़ीर	:	सलीम जाफ़र
कुल्लियाते नज़ीर अकबराबादी	:	मौलाना अब्दुलबारी 'आसी'

[1]मोहम्मद हसन, नज़ीर अकबराबादी, पृष्ठ 25

नज़ीर की नज्में

दीवाने नज़ीर	:	मुहम्मद नजर खाँ
इंतखाबे नज़ीर	:	रशीद हसन खाँ
कुल्लियाते नज़ीर	:	अजहर राही
इंतखाबे ग़ज़लियात नज़ीर	:	डॉ. मलिकजादा मंजूर अहमद

नज़ीर अकबराबादी के हिदी काव्य संग्रह

अशआर–ए–मियाँ नज़ीर	:	लल्लूराम, कलकत्ता, 1812
नज़ीर के शेर	:	ज्ञान रत्नाकर प्रेस कलकत्ता, 1868
दीवान–ए–नज़ीर	:	इकबाल, शहंशाही प्रेस, आगरा, 1897
अशआर–ए–नजीर	:	राजनारायाण अग्रवाल, हाफ़िज़ शमशुद्दीन।
नज़ीर बानी	:	फिराक गोरखपुरी
दीवान–ए–नज़ीर हदी	:	मुहम्मद नज़र खाँ
महाकवि बे नज़ीर	:	रघुराज किशोर वतन हरिदास एण्ड कम्पनी, मथुरा।
नज़ीर काव्य संग्रह	:	पंडित उदय शंकर शास्त्री
कविवर नज़ीर	:	डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन'
नजी़र अकबराबादी	:	सरस्वती सरन उनकी शायरी
महाकवि नज़ीर अकबराबादी	:	रघुराज किशोर वतन
कवि श्री नज़ीर	:	अमीर मुहम्मद खाँ
नज़ीर अकबराबादी	:	मोहम्मद हसन
नज़ीर ग्रंथावली	:	नज़ीर मुहम्मद
नज़ीर शायरी और ज़िन्दगी	:	शफ़ीका फ़रहत
नज़ीर और उनकी विचारधारा	:	अब्दुल अलीम

इसके अतिरिक्त छोटी–छोटी पुस्तकों के रूप में मियाँ नज़ीर की रचनाऐं बालपन कन्हैया का, नागलीला, चूहेनामा, महादेव जी का ब्याह, आटा–दालनामा, होली के रंग, नज़ीर के संग प्रकाशित हुई हैं। गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित भजन संग्रह में नज़ीर के कुछ भजन संग्रहीत हैं।

2.2 नज़ीर अकबरबादी का सम्मान और अभिनन्दन–

नज़ीर जब दिल्ली से आगरा आए, उस समय यहाँ प्रसिद्ध विद्वान शायर मीर तक़ी 'मीर' की धाक थी। नज़ीर ने भी 'मीर' की तर्ज़ पर एक ग़ज़ल कही। उस ग़ज़ल की खबर मीर साहब के पास भी पहुँची।

एक अन्य मुशायरे में नज़ीर साहब ने उस ग़ज़ल को पढ़ा। मीर साहब भी इस मुशायरे में मौजूद थे। नज़ीर इतने बड़े शायर के सामने अपनी ग़ज़ल पढ़ने से घबराये तब मीर साहब ने उनकी हिम्मत बढ़ाते हुए कहा, 'हाँ भई' पढ़ो ज़रूर पढ़ो। तब नज़ीर ने हाथ के कागज को खोलते हुए ग़ज़ल पढ़ी।

नज़ीर ग़ज़ल पढ़ रहे थे। चारों ओर से इर्शाद–इर्शाद की आवाजें आ रही थीं। ग़ज़ल समाप्त होने पर 'मीर' साहब ने नज़ीर को अपने पास बुला कर पीठ ठोंकी और कहा, "तेरी उम्र दराज़ हो"। लोगों ने उनके शेर याद कर लिए, कुछ ने उस ग़जल को वहीं लिखा और कुछ उनके घर पर लिखने पहुँच गए। वे जिधर जाते तो लोग तारीफ करते थे, बूढ़े दुआएँ देते थे। इस मुशायरे से नज़ीर एक शायर के रूप में पहचाने जाने लगे।

द्वितीय अध्याय

नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में समकालीन परिस्थितयाँ

अपने इस शोध प्रबन्ध के दूसरे अध्याय में तत्कालीन देशकाल और वातावरण पर दृष्टिपात करने का प्रयास किया गया है। किसी भी साहित्य अथवा कृति की रचना पर तत्कालीन देशकाल और वातावरण का गहरा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि अत्याधिक सुन्दर साहित्य की रचना प्रायः शान्तिपूर्ण वातावरण में ही होती है।

नज़ीर अकबराबादी के समय देश ऊहापोह की स्थिति में चल रहा था। चहुँदिस में उठापटक की स्थिति चल रही थी। उस समय भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक और साँस्कृतिक परिस्थितियाँ बिगड़ी हुई थीं। ऐसी स्थिति में एक नये साहित्य की रचना नज़ीर अकबराबादी द्वारा किया जाना निःसन्देह ही तत्कालीन सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों से प्रभावित रहीं। नज़ीर अकबराबादी समाज के एक ऐसे प्रेरक व्यक्तित्व थे, जिन्होंने अपने समाज को बड़ी सूक्ष्म दृष्टि और खुली आँखों से देखा था। उन्होंने तत्कालीन सामाजिक और आर्थिक विषमताओं को अपनी काव्य रचना का विषय बनाया और इसके समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया। कवि नज़ीर का कार्यकाल 18वीं शताब्दी के मध्य से 19वीं शताब्दी के मध्य का है। यह युग राजनीतिक दृष्टि से भारतीय व्यवस्था के पतन का युग था। मुगल साम्राज्य का सूर्य शनैः–शनैः पतन की ओर अग्रसर हो रहा था। कवि नज़ीर ब्रज क्षेत्र के आगरा में निवास कर रहे थे, जो राजनीतिक दृष्टि से भारतीय राजनीतिक का केन्द्र बिन्दु था। औरंगजेब के शासन काल तक आगरा मुगलों की राजधानी रही, लेकिन मुहम्मद शाह के बाद आगरा मुगल शासकों से

छिन गया और अनेक परिवर्तनों के बाद 1761 ई0 में आगरा भरतपुर के जाट राजा सूरजमल के हाथ आया। जाटों के बाद कई वर्षों तक मरहठों ने इस पर शासन किया। अन्ततः अंग्रेजों ने 1803 ई0 में आगरे पर अधिकार कर लिया। कवि नज़ीर के काव्य में हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, जैन, सिक्ख, ईसाई आदि विभिन्न धर्मावलम्बी भारत में निवास कर रहे थे। इनमें बहुसंख्यक हिन्दू धर्म मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन का क्षीण रूप था। मुसलमानों में सुन्नी, शिया, बोहरा तथा खोजाओं जैसे विभिन्न वर्णों के अतिरिक्त एक मुख्य सम्प्रदाय सूफियों का था। इन सूफियों ने व्यक्ति और ईश्वर के सम्बन्धों को प्रेमी और प्रेमिका के रूप में व्यक्त किया है।

नज़ीर अकबराबादी ने तत्कालीक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, और धार्मिक परिस्थितियों को जिस अदम्य साहस से अपनी रचनाओं का प्रस्तुतिकरण किया है उसका जीता–जागता उदाहरण अन्य कवियों की कृतियों में बहुत ही कम पाया जाता है, किन्तु विडम्बना इस बात की नहीं है कि नज़ीर ने किस स्तर का लेखन किया, बल्कि इस बात की है कि इतना अच्छा कविता, नज़्म और गजलों का प्रस्तुतिकरण इतनी गम्भीर और सुन्दरता से प्रस्तुत किये जाने के पश्चात् ही तत्कालीन कवि और रचनाकारों ने एक लम्बे अन्तराल तक उसे गम्भीरता से नहीं लिया। उनके साहित्य पर विद्वानों की दृष्टि बहुत कम रही, जो नगण्य कही जा सकती है, जिसका परिणाम देखने में आया कि धीरे–धीरे 20वीं शताब्दी के पूर्व तक उनकी रचनाओं को सामान्य स्तर का लोक काव्य मानकर उनकी उपेक्षा की जाती रही।

नज़ीर अकबराबादी के व्यक्तित्व को तो पूर्व में ही वर्णित कर चुके हैं, किन्तु उनके कृतित्व को निश्चित रूप में प्रस्तुत किये जाने के लिए उनके जीवन मूल्यों और सामाजिक पृष्ठ भूमि का आंकलन और उनके तत्कालीन देश, काल और

वातावरण का, जिसमें उन्होंने अपना लेखन किया। उसका विश्लेषण किया जाना अपेक्षित होगा, क्योंकि किसी भी रचनाकार के व्यक्तित्व की संरचना में उसकी पारिवारिक परिस्थितियों, शैक्षिक स्तर और उसके स्वभाव के साथ ही साथ उसकी प्रवृति, चिन्तन, विचारण और उसकी आजीविका के साधन इत्यादि की भूमिका का अधिक महत्व होता है।

इसे इस प्रकार से निम्न भागों में विभाजित किया जाना आवश्यक होगा

1. नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियाँ :

नज़ीर अकबराबादी का समय सन् 1735 से सन् 1830 तक रहा। उनका युग राजनैतिक दृष्टि से भी व्यवस्था के पतन का युग था। मुगल सम्राट औरंगजेब के 499 वर्ष के लम्बे शासन काल (1658–1707 ई.) अनन्तर मुगल साम्राज्य का सूर्य धीरे–धीरे अस्ताचल की ओर अग्रसर होने लगा। औरंगज़ेब की घोर दमनवादी नीति व शासन के अत्यधिक केन्द्रीयकरण के विरोध स्वरूप उनके साम्राज्य की नाव खुद हिचकोले ले रही थी।

उनका जीवन काल बड़ा ही अव्यवस्थित था, क्योंकि उस समय भारतीय इतिहास का मध्यकालीन युग था, जिसमें भारत में मुस्लिम सुल्तान स्वयं को महिमा मण्डित किये जाने के लिये साम–दाम–दण्ड–भेद को अपनाकर दूसरे को नीचा दिखाये जाने के लिये कार्य किया करते थे। अपने राज्य का विस्तार किया जाने लगा अथवा स्वयं राजा बनने के लिये किसी की भी जब मन चाहे हत्या कर दिया करते थे। जी चाहे जब किसी के राज्य पर आक्रमण कर दिया करते थे। काल के

अनुसार उस समय के इतिहास को मध्यकालीन भारत के इतिहास के नाम से जाना जाता है, जिसे इतिहासकार विद्वानों ने 1200 ई0 से 1760 ई0 तक माना।

अपने पिता की हत्या कर के औरंगज़ेब ने उन के तख्त को हड़प लिया। फिर अपने–अपने राज्य के विस्तार के लिये लड़ना शुरू कर दिया। बीजापुर, गोलकुण्डा तथा मराठों के राज्य पर कब्जा करने के लिये सन् 1682 से औरंगजेब को लड़ते–लड़ते पूरे 24 साल हो गये। उस समय औरंगज़ेब की उम्र 88 वर्षहो गयी थी। अपनी वृद्धावस्था के कारण औरंगज़ेब पूरी तरह अशक्त हो गया था। वह हर समय इसी धुन पट में लगा रहता था कि 'दार–उल–हर्ब' (ऐसे व्यक्ति, जो नास्तिक हों। अल्लाह को न मानते हों। जिन का बहुमत हो। जिनमें शरीयत विधि का चलन न हो), को कैसे अपने साम्राज्य से बाहर का रास्ता दिखाया जाये। वह अपने साम्राज्य को 'दर–उल–इस्लाम' (मुस्लिम देश) बनाये जाने की सोचता रहता था। वह 24 घण्टे में मात्र 3–4 घण्टे ही सोया करता था।

''औरंगजेब मुगल वंश का छठवाँ बादशाह था। चूँकि वह गैर मुस्लिमों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करता था। इस कारण दक्षिण भारत के सभी जाट, मराठे और राजपूत उसके खिलाफ हो गये थे। ''औरंगजेब की दो पत्नी थीं, जो दोनों ही हिन्दू थीं। एक का नाम उदयपुरी महल था, जो राजपूत परिवार से थी और दूसरी का नाम दिल रसबानो बेगम नबाब बाई औरंगबादी था।

उदयपुरी ने औरंगज़ेब से कहा कि यदि उससे पहले औरंगज़ेब की मृत्यु हो गयी तो वह सती हो जायेगी, जिसका वर्णन औरंगजेब ने अपने पुत्र कामबक्श को लिखे पत्र में किया था। ''औरंगज़ेब अकबर के बाद सबसे अधिक समय तक शासन करने वाला मुगल सम्राट था।''

औरंगज़ेब ने भारत में सन् 1658 से 1707 तक लगभग 49 सालों तक राज्य किया। औरंगज़ेब का पूरा नाम अब्दुल मुज़फ़्फ़र मुहीउद्दीन मौहम्मद औरंगज़ेब आलमगीर था, जिसका जन्म 14 अक्टूबर 1618 को गुजरात के दाहौद, जिले में हुआ था। उसकी माँ का नाम मुमताज बेगम और पिता का नाम शाहजहाँ था। औरंगज़ेब ने अपने नाम के आगे 'आलमगीर' स्वयं लिखा था, जिसका अर्थ होता है– विश्वविजेता। वे मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर के वंशज थे।

नज़ीर अकबराबादी के साहित्य में राजनीतिक परिस्थितियों के बारे में और विस्तार से चर्चा करने से पूर्व यहाँ औरंगज़ेब के जीवन परिचय के इतिहास का कुछ विस्तार से उल्लेख करना आवश्यक होगा। औरंगजेब के 5 बेटे थे, जो–

आलम शाह : आलम शाहको शहजादा मुअज्जम भी कहते थे, जो आगे चलकर बहादुर शाह के नाम से जाना गया। वह औरंगज़ेब का पहला लड़का था।

आजम शाह : औरंगज़ेब के दूसरे लड़के का नाम आजम शाह था, जिसे शहजादे आजमशाह के नाम से पुकारा जाता था।

मौहम्मद कामबक्श : औरंगज़ेब का तीसरा लड़का था, जिसे शहजादा कामबक्श के नाम से भी जाना जाता था।

मुहम्मद सुल्तान : औरंगज़ेब के चौथे लड़के का नाम था।

औरंगज़ेब के 5वें लड़के का नाम **मुहम्मद अकबर** था।

तब लड़कों के नाम के आगे शहजादा इसलिये लगाया जाता था, क्योंकि उर्दू में राजा के बेटे को शहजादा यानि राजकुमार और बिटियों को शहजादी यानि राजकुमारी कहा जाता था।

औरंगजेब के 5 बेटियाँ थीं– जिनमें एक का नाम–ज़ेब–उन–निसा, दूसरी का नाम ज़ीनत–उन–निसा, तीसरी लड़की का नाम ज़ुबदत्त–उन–निसा, चौथी लड़की का नाम बद्रउन–निसा और पाँचवी लड़की का नाम मेहर–उन–निसा था।

भारतवर्ष में उस समय एक ओर ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने सन् 1700 में कलकत्ता से पदार्पण किया। वहीं 03 मार्च सन् 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् औरंगज़ेब के ज़िन्दा तीनों पुत्र– शहजादा मुअज़्ज़म, शहजादे आज़म और कामबक्श अपने पिता के साम्राज्य पर आधिपत्य जमाने के लिए आपस में लड़ने लगे। वे आपस में इतने कट्टर हो गये थे कि एक दूसरे के खून के प्यासे हो गये थे। शहज़ादे मुअज़्ज़म को औरंगज़ेब ने धर्म की शिक्षा दी और "शाह आलम" की उपाधि से विभूषित कर दिया। उस समय वह जमरूद में था। सन् 1707 में उसने दिल्ली पर कब्ज़ा किया और बहादुरशाह के नाम से शासन किया।

उधर औरंगज़ेब के दूसरे पुत्र शहज़ादे आज़म ने दक्षिण भारत में जो अहमदनगर के निकट था, स्वयं को मुगल बादशाह घोषित कर दिया। इधर मराठे खानदेश, गुजरात और मालवा पर आधिपत्य करने के लिए लूट खसोट कर रहे थे। उधर जाट सिक्ख, सतनामी, बुन्देले, रूहेले और राजपूत मुगलों के शत्रु होकर उन्हें बरबाद करने का पूरा प्रयासकर रहे थे। इस प्रकार राजनैतिक स्थिति बड़ी खराब चल रही थी। दिल्ली पर एक के बाद एक हमले होते रहे और स्थिति खराब होने के कारण नज़ीर अकबराबादी की माँ और नानी उन्हें लेकर आगरा भाग आ गयीं।

2. नज़ीर अकबराबादी के समय सामाजिक परिस्थितियाँ :

उस समय मुगल साम्राज्य का अन्त्योदय हो रहा था। एक दूसरे छोटे– बड़े राजा महाराजाओं का यही प्रयास होता था कि कैसे भी हो उनका दूसरे राज्यों पर

कब्ज़ा हो जाए। चारों ओर अराजकता व्याप्त थी। उस समय ये कह सकना अत्यन्त कठिन था कि कल क्या होगा? लोगों की सामाजिक स्थिति बड़ी दयनीय थी। किसी की कहने सुनने वाला नहीं था। ग़रीबी का माहौल था।

3. नज़ीर अकबराबादी के समय तत्कालीन आर्थिक परिस्थितियाँ :

उस समय लोगों पर पैसे की मार पड़ रही थी, क्योंकि जिस किसी का वश चलता था। वह दूसरे राज्यों पर आक्रमण करके लोगों की धन सम्पत्ति को लूटकर ले जाते थे, जिसमें काफ़ी लोगों की हत्यायें होनी एक सामान्य सी बात हो गयी थी। लोगों पर खाने की भी पर्याप्त व्यवस्था न थी। न ही उनकी आय के पर्याप्त साधन ही थे। ऐसी स्थिति में चारों ओर त्राहिमाम्–त्राहिमाम् मची हुयी थी।

उन्होंने 18वीं शताब्दी के आगरा का यह हाल आँखों से देखा था और अत्यन्त दुःखी होकर वर्णन किया है। यह दृष्टव्य है कि सेठ, साहूकार, कारीगर और धार्मिक लोग इस काल में ही आगरे से जयपुर पलायन कर गये थे। जहाँ सवाई राजा जयसिंह ने दूरदर्शितापूर्वक उन्हें सभी सुविधायें प्रदान कीं और अपना नया नगर बसाया और समृद्ध किया। जयपुर आगरा के ही सांस्कृतिक और आर्थिक खण्डहरों पर बना और विकसित हुआ।

उस त्राहि–त्राहि के कारण ही उस समय कारीगरों की भी ऐसी ही दुर्दशा थी, जिसका वर्णन नज़ीर अकबराबादी जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार किया है–

"ज़र के भी जितने काम थे वह सब दुबक गये।
औररेशमी किवाम यकसर चटक गये।
ज़रदार उठ गये तो बटैये सरक गये।
चलने से काम तारकाशों के भी थक गये–
क्या हाल बाल खींचे जो हो जाये तार बन्द।।"

शहर की ख़ुशहाली चली गयी तो पढ़ने–लिखने, धर्म–मज़हब का काम भी बन्द हो गया–

"आमद न खादिमों[1] के तईं[2] मकबरों के बीच।
बामन भी सर पटकते हैं सब मन्दिरों के बीच।।
आजिज़[3] हैं इल्म[4]वाले भी सब मदरसों के बीच।
हैराँ[5] हैं पीरजादे[6] भी अपने घरों केबीच।।
नज़रों नियाज़[7] हो गई सब एक बारबंद।।"

दरबार न रहा तो दरबार के साथ जुड़े लोगों की रोजी–रोटी चली गयी और वे शहर छोड़कर भागने लगे–

"जितने सिपाही यॉं थेन जाने किधर गये।
दक्खिन के तईं निकल गये यों पेशतर[8]गये।।
हथियार बेच, हो के गदा घर व घर गये।
जो घोड़े, भाले वाले भी यूँ दर–बदर गये।
फिर कौन पूछे उनको जो अब हैं कटार बंद।।"[1]

नज़ीर सहृदय होने के कारण किसी का दुःख–दर्द नहीं देख सकते थे। कहते हैं एक बार वे अपना वेतन लेकर घर लौट रहे थे। रास्ते में किसी ने अपनी बेटी के विवाह के लिए उनसे धन की याचना की। उन्होंने अपना पूरा वेतन उसे दे दिया। यह कारण था कि पूरे ब्रज प्रदेश में उनका साधु की भाँति सम्मान होता था।

---

1 डॉ. प्रणवीर चौहान द्वारा सम्पादित 'हमारा आगरा' पुस्तकमाला – द्वितीय पुष्प आगरा की सांस्कृतिक धरोहर नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : रानी सरोज गौरिहार ट्रस्टी उदयन शर्मा स्मृति फ़ाउण्डेशन ट्रस्ट, दिल्ली।

शब्दार्थ :– 1. नौकरों, 2. वहीं/के लिये, 3. परेशान, 4. ज्ञान, 5. हतप्रभ/हैरान, 6. पुजारी, 7. साक्षात्कार/मुलाकात, 8. पूर्व में

नज़ीर की भाषा उनकी अपनी भाषा थी, जन–मानस की भाषा थी। वैसे तो नज़ीर के काव्य में हिन्दी, उर्दू तथा हिन्दी–उर्दू, फारसी मिश्रित भाषा का प्रयोग हुआ है, परन्तु भाषा–वैज्ञानिकों, समालोचकों तथा विद्वानों ने नज़ीर को खड़ी बोली हिन्दी का कवि माना है।

उस समय चारों ओर लोग आर्थिक समस्याओं से जूझ रहे थे। राजे–रजवाड़ों में लोकहित नाम की कोई बात नहीं थी और अगर बात थी तो बस चाटुकारिता की बात थी। लोक सामान्य के खाने के लाले पड़े हुए थे। चारों ओर लोग दाने–दाने को परेशान थे। लोग अभावों में जीवन यापन कर रहे थे। नज़ीर साहब ने उसे समझा और उस पर भी कविता लिख दी और उसका नाम भी रोटियाँ ही रखा, जिसमें उन्होंने ने लिखा–

"रोटियाँ"

पूछा किसी ने यह किसी कामिल[1] फ़कीर से।
यह मेहरो–माह[2] हक[3] ने बनाए हैं काहे से।।
वह सुनके बोला–''बाबा ख़ुदा तुझको ख़ैर दे।
हम तो न चाँद समझें, न सूरज हैं जानते।।
बाबा हमें तो यह नज़र आती हैं रोटियाँ ।।6।।[1]

रोटी न पेट में हो तो फिर कुछ जतन न हो।
मेलेकी सैर ख़्वाहिशे बागो चमन न हो।।
भूखे ग़रीबदिल की ख़ुदा से लगन न हो।
सच है कहा किसी ने कि ''भूखे भजन न हो''।।
अल्लाह की भी याद दिलाती हैं रोटियाँ ।।9।।

1 रोटियाँ, पुस्तक– नज़ीर ग्रन्थावली, लेखक– डॉ. नज़ीर मुहम्मद, प्रकाशक– उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ 214.

रोटी से नाचे प्यादा क़वायद दिखा–दिखा।
असवार[4]नाचे घोड़े को कावा[5] लगा–लगा।।
घुँघरू को बाँधे पैक[6]भी फिरता है नाचता।
और इसके सिवा ग़ौर से देखो तो जा–ब–जा।।
सौ–सौ तरह के नाच दिखाती हैं रोटियाँ ।।12।।
रोटी के नाच तो हैं सभी खल्क[7] में पड़े।
कुछ भांड भगैते ये नहीं फिरते नाचते।।
यह रंडियाँ तो नाचे हैं घूँघट को मुँह पे ले।
घूँघट न जानो दास्तो[8] तुम ज़ीनहार[9] उसे।।
इस परदे में ये अपने कमाती हैं रोटियाँ ।।13।।
दुनिया में अब बदी न कहीं और निकोई[10] है।
या दुश्मनी व दोस्ती या तुन्द–ख़ूई[11] है।।
कोई किसी का और किसी का न कोई है।
सब कोई है उसी का कि जिस हाथ डोई है।।
नौकर, नफ़र, गुलाम बनाती हैं रोटियाँ ।।17।।
रोटी का अब अजल से हमारा तोहै खमीर।
रूखी भी रोटी हक में हमारे है शहदो शीर।।
या पतली हो वे मोटी खमीरी हो या पुतीर ।।23।
गेहूँ,ज्वार, बाजरे की जैसी भी हो 'नज़ीर'।।
हमको तो सब तरह की खुश आती है रोटियाँ ।।18।।[1]

---

[1] 'रोटियाँ' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 85–86.

शब्दार्थ :– 1. ज्ञाता, 2. सूर्य व चाँद, 3. हरकत, 4. सवार, 5. भाव, 6. तैयार, 7.संसार, 8. कहानी, 9. शरण, 10. भलाई, 11. क्रोधी

4. नज़ीर अकबराबादी के समय साँस्कृतिक परिस्थितियाँ :

चूँकि उस समय मुगल बादशाहों का साम्राज्य था, जो अपनी प्रशंसा सुनना ही पसन्द करते थे, जो उनकी बुराई करते थे। उनका सिर काट दिया जाता था। या किसी और प्रकार से उनकी हत्याएँ कर दी जाती थीं। जो कवि बादशाहों की प्रशंसा में गाने गाया करते थे। या रचनाएँ किया करते थे। उनको सोने–चाँदी की विशेष भेंटें दी जाती थीं, किन्तु नज़ीर अकबराबादी को किसी की चाटुकारिता करना पसन्द नहीं था। इसलिए उन्होंने राजाओं की ओर से राजकवि बनने के प्रस्ताव को ठुकराकर जनमानस से जुड़कर रचनाएँ किया जाना ही पसन्द किया।

नज़ीर अकबराबादी ने उस समय प्रचलित संस्कृति के अन्तर्गत कोठे पर अपने ग्राहकों के लिये तैयार होकर अपनी सेवायें दिये जाने के बारे में अपनी इस रचना में लिखा है। उसमें बताया है कि वह कैसी लगती थीं। उन्होंने उससे क्या कहा और उसके उत्तर में उसने उनसे क्या कहा और उसका उन्होंने क्या प्रत्युत्तर दिया।

"अँगिया"

सफ़ाई उसकीझलकती है गोरे सीने में,
चमक कहाँ है ये अलमास[1]के नगीने में।
न तूई[2] है, न किनारी, न गोखरू तिस पर,
सजायी है शोख ने अँगिया बनत के मीने में।।
जो पूछा मैं कि''कहाँ थी'',तो हँसके यों बोली,
मैं लग रही थी इस अँगिया मुई[3] के सीने में।
पड़ा जो हाथ मेरा सीने पर, तो हाथझटक,
पुकारी, आग लगे आह, इस करीने[4] में।।
जो ऐसा ही है, तो अब हम न रोज आवेंगे,

कभू[5]जो आए, तो हफ्ते में या महीने में।
कभू मटक, कभू बस–बस, कभू पिलाया पटक,
दिमाग़ करती थी क्या–क्या शराब पीने में।।
चढ़ी जो दौड़ के कोठे पे वो परी इक बार,
तो मैंने जा लिया उसको उधर केज़ीने में।
वो पहना करती थी अँगिया जो सुर्ख़ लाही की,
लिपट के तन से वो तर हो गई पसीने में।।
वो सुर्ख अँगिया जो देखी है उस परी की 'नज़ीर'
मुझे तो आग–सी कुछ लग रही है सीने में।।[1]

उस समय कोठा कैसा लगता था। वहाँ का वातावरण क्या था? वे अनुभव के पल क्या थे? उन्होंने अपनी अनुभूति के पलों को कोठे नामक इस रचना में कितनी सुन्दरता के साथ प्रस्तुत है–

"कोठे पर"

''रहे जो शब[1]को हम उस गुल के साथ कोठे पर
तोक्याबहार से गुज़री है रात कोठेपर?
वो धूमधाम रही सुबहतक अहा–हा–हा
किसीकीउतरे है जैसे बरात कोठे पर
मकाँ[2] जो ऐश का हाथ आया ग़ैर[3]से खाली
पटे के चलने लगे फिर तो हाथ कोठे पर
गिराया, शोर किया, गालियाँ दीं, धूम मची

[1] 'अंगिया' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 51.

शब्दार्थ :– 1. सफेद रंग का सबसे कीमती, 2. तू ही, 3. मरी, 4. सजधज / ठीक से, 5. कभी

अजब तरह की हुईवारदात कोठे पर
लिखें हम ऐश की तख्ती को किस तरह ऐ जाँ
कलम ज़मीन के ऊपर, दवात कोठे पर
कमन्द[4] जुल्फ़ की लटका के दिल को ले लीजे
ये जिन्स[5] यूँ नहीं आने की हाथ कोठे पर
खुदा के वास्ते जीने की राह बतलाओ
हमें भी कहनी है कुछ तुमसे बात कोठे पर
लिपट के सोये जो उस गुलबदन के साथ 'नजीर'
तमाम हो गईहल मुश्किलात[6]कोठे पर।।''[1]

5. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में संगीत का समावेश :

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का विश्लेषण किये जाने पर ऐसा लगता है कि उन्हें राग, ताल, लय और सुरों का भी अच्छा ज्ञान था। सम्भवतः यही कारण रहा होगा कि उनकी कविताओं में कई प्रकार के राग, ताल, लय और सुर व्याप्त थे।

इससे पहले कि हम उनके काव्य में व्याप्त संगीतज्ञता पर विचार करें। उससे पूर्व हमें रागों, लयों व तालों के संदर्भ में दृष्टिपात करना होगा।

---

1 'कोठे पर' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 53.

शब्दार्थ :– 1. रात, 2. मकान, 3. अन्य, 4. लट, 5. चीजें, 6. समस्यायें

"राग"

संगीतज्ञों के विचार से यूँ तो संगीत में 200 से अधिक राग हैं, लेकिन प्रचलन में मात्र 32–33 राग ही हैं जिनके नाम हैं–

1. राग यमन 2. राग बिलाबल 3. राग दरबारी 4. राग भैरवी 5. राग भोपाली 6. राग जोगिया 7. राग पहाड़ी 8. राग रामकली 9. राग बिहाग 10. राग भैरव 11. राग पीलू 12. राग देस 13. राग मालकोन्स 14. राग काफी 15. राग धानी 16. राग हमीर 17. राम चन्द्रकौस 18. राग खमाग 19. राग भाँड़ 20. राग मेघ मल्हार 21. राग सोहनी 22. राग माखा 23. राग बहार 24. राग भीम पलासी 25. राग पूर्वी 26. राग तोड़ी 27. राग धनाश्री 28. राग कजरी 29. राग बिहागरा 30. राग मिश्रकाली 31. राग जै–जैबन्ती 32. राग कालिंगड़ा 33. राग छायानट।

ये वे राग हैं, जिनका प्रयोग उत्तरी भारतीय शास्त्रीय संगीत में होता है।

"स्वर भेद के हिसाब से राग"

स्वरभेद के हिसाब से राग 3 प्रकार के होते हैं–

1. सम्पूर्ण राग, 2. षाड़व राग और 3. ओड़व राग। अब विस्तार से–

1. **सम्पूर्ण राग**– ये राग वे होते हैं, जिनमें संगीत के 7 सुरों का प्रयोग किया जाता है।

2. **षाड़व राग**– ये वह राग होता है, जिसमें कोई भी एक स्वर वर्जित होता है और मात्र छह स्वर ही आते हैं।

3. **औड़व राग**– इस राग में कोई भी दो राग वर्जित होते हैं और इस प्रकार मात्र 5 राग ही प्रयोग में आते हैं। सही अर्थों में जो रचना मनुष्यके मन को मानसिक आनन्द के रंगों से रंग दे। वही राग कहलाते हैं।

राग को सदैव प्रहर (समय) के हिसाब से गाया जाता है। रागों को गाये जाने से पहले प्रहर (समय) के सन्दर्भ में जानना अपेक्षित होगा।

एक दिन में कुल मिलाकर 8 प्रहर होते हैं। दिन के चार और रात्रि के चार। प्रत्येक प्रहर मात्र 3 घण्टे या साढ़े सात घटी का होता है। किसी भी प्रहर की एक घटी 24 मिनट की होती है। इस प्रकार साढ़े सात घटी में कुल मिलाकर 180 मिनट अर्थात् 3 घण्टे होते हैं।

प्रत्येक प्रहर की एक पहचान होती है, जिसके आधार पर भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रत्येक राग के गायन का समय सुनिश्चित होता है। इन आठों प्रहरों के नाम इस प्रकार हैं–

(क) **पूर्वाह्न प्रहर**– ये प्रहर सूर्योदय के समय से होता है। यानि सुबह 06:00 बजे से 09:00 बजे तक। इसे दिन का पहला प्रहर कहा जाता है।

(ख) **मध्याह्न प्रहर**– ये प्रहर सुबह 09:00 बजे से दोपहर 12:00 बजे तक का माना जाता है। जब सूरज सिर पर चढ़ आता है। ये दिन का दूसरा प्रहर कहा जाता है।

(ग) **अपराह्न प्रहर**– ये प्रहर दोपहर 12:00 बजे के बाद से शुरू होकर 3:00 बजे साँय तक चलता है, जिसे दिन का तीसरा प्रहर कहा जाता है।

(घ) **साँयकाल प्रहर**–ये साँय 03:00 बजे के बाद से साँय 06:00 बजे तक चलता है, जिसे दिन का चौथा प्रहर कहा जाता है।

इसके बाद रात्रि में शेष 4 प्रहर आते हैं, जो –

(ङ) **प्रदोष प्रहर**– रात्रि के प्रथम प्रहर को प्रदोष काल कहते हैं, जो शाम 06:00 बजे से रात्रि 09:00 बजे तक का होता है । इस प्रहर में सतोगुण की प्रधानता होती है। इसे किसी दिन का पाँचवाँ प्रहर कहा जाता है।

(च) **निशिथ प्रहर**– ये प्रहर रात्रि 09:00 बजे से लेकर रात्रि 12:00 के बीच तक का होता है। इसे दिन का छटवाँ प्रहर कहा जाता है।

(छ) **त्रियामा प्रहर**– ये प्रहर मध्य रात्रि 12:00 बजे के बाद से रात के 03:00 बजे तक का होता है और ये दिन का सातवाँ प्रहर कहा जाता है।

(ज) **उषा प्रहर**– उषा प्रहर का समय रात के 03:00 बजे के बाद से सुबह के 06:00 बजे तक का माना जाता है।

राग यमन को रात्रि के प्रथम प्रहर या संध्या के समय गाया जाता है।

"संगीत में ताल का अर्थ"

संगीत में ताल का मुख्य स्थान होता है, जो संगीत का मुख्य आधार होता है। जिसे संगीत की रीढ़ की हड्डी भी कह सकते हैं, यदि संगीत से ताल को अलग कर दिया जाये तो उसकी स्थिति ठीक वैसी ही होती है। जैसी किसी मनुष्य के शरीर से आत्मा के अलग होने पर। जैसे शरीर निष्प्रभाव हो जाता है। भारतीय संगीत ने ताल की परम्परा एक लम्बे अंतराल से चली आ रही है तो ताल ही लय को दर्शाने की क्रिया है। ताल की उत्पत्ति ताल से मिलकर हुई है।

दामोदर द्वारा रचित संगीत दर्पण ग्रन्थ में बताया गया है कि ताल शब्द ''ताकार'' (शिव) तथा लकार (शक्ति) के योग से निर्मित है, लेकिन 'संगीत रत्नाकर' में ताल की परिभाषा इस प्रकार की गयी है–

''ताल स्तस्य प्रतिष्ठा यामिति धातो धार्म स्मृतः।
गीतं, वाद्यं तथा नृत्यं यतस्ताले प्रतिष्ठातिम्।।''

अर्थात् जिस रचना में गीत, वाद्ययन्त्र और नृत्य का समावेश होता है उसे ताल कहते हैं।

एक अच्छा संगीतकार ताल के साथ स्वरों का अच्छा संयोजन करके श्रोताओं को भाव–विभोर कर देता है। ताल के बिना कोई संगीत ऐसे होता है जैसे बिना नाक के मुँह से गायन किया जाये।

ताल देने के लिये मुख्यतः तबला या पखावज का प्रयोग किया जाता है। हमारे संगीत में ताल अनेक प्रकार के आते हैं जैसे–झपताल, रूद्रताल, रूपक और ब्रह्म ताल इत्यादि।

बिना ताल के कोई भी रचना गेय रचना हो ही नहीं सकती।

"लय"

लय शब्द स्त्रीलिंग है, जो किसी रचना के गाने का एक प्रस्तुतिकरण है। लय विभिन्न प्रकार की होती हैं। इस के गाने का तारीका रचना पर आधारित होता है। जब भी हम गाते, बजाते या नाचते हैं तो उस समय कोई न कोई लय अवश्य ही होती है।

क. एक प्रकार/लय में कविता पढ़ना– इस लय को प्रायः किसी कविता के पठन में प्रयोग किया जाता है।

ख. दूसरी प्रकार की लय : दूसरी प्रकार की लय का प्रयोग प्रायः गीत गाने में किया जाता है।

वर्गीकरण के हिसाब से लय प्राय 3 प्रकार की होती हैं –

1. विलम्बित लय :

2. मध्य लय :

3. द्रुत लय :

लय के बिना स्वर पैदा नहीं हो सकता। लय के बिना संगीत पूरी तरह अधूरा है। निश्चित ताल की गति होने से संगीत के क्रमिक आरोह, अवरोह और विराम अत्यन्त ही प्रयोगशाली हो जाते हैं। इसी से एक गीत में ध्वनि मौन और जोर का पैटर्न समाहित होता हैं।

नज़ीर अकबराबादी की कुछ संगीतमयी रचनाऐं

आनन्द कन्द भगवान श्री कृष्ण जी की छवि का वर्णन नज़ीर साहब ने कितने सुन्दर शब्दों में किया है, जिसे पढ़कर जब हम सहज ही इतने भाव विभोर हो जाते हैं। वो भी तब। जब आज के समय में इतने सारे भजन, काव्य कृतियाँ, गीतकायें, गेय रचनायें, गीत रचनायें व संगीत रचनायें उपलब्ध हैं और वह भी सिर्फ़ एक क्लिक पर। तब आज भी उनकी रचनाओं की प्रासंगिकता जीवन्त बनी हुयी है।

(814) राग बहार–ताल दादरा

———नज़ीर अकबराबादी

(1.)

यारो, सुनो य दधि के लुटैया का बालपन,
औ मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन।
मोहनसरूप नृत्य–करैया का बालपन,
बन–बन के ग्वाल गौवें चरैया का बालपन।।
ऐसा था बॉसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैंकृष्ण–कन्हैयाका बालपन।।

(2.)

जाहिर में सुत वो नंद जसोदा के आप थे,
बरना वो आपी माई थे और आपी बाप थे।
परदे में बालपन के ये उनकेमिलाप थे,
जोती सरूप कहिये जिन्हें सो वो आप थे।।
ऐसा था बाँसुरी के बजैयाका बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(3.)

उनको तो बालपन से न था काम कुछ जरा,
संसार की जो रीत थी उसको रखा बजा।
मालिक थे वह तो आपी, उन्हें बालपन से क्या?
वाँ बालपन, जवानी, बुढ़ापा सब एक था।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(4.)

बाले थे बिर्जराज, जो दुनियाँ में आगये,
छीला के लाख रंग तमासे दिखा गये।
इस बालपन के रूप में कितनों को भा गये,
एक यह भी लहर थी जो जहाँको जता गये।
ऐसा था बाँसुरी के बजैयाका बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(5.)

परदा न बालपन का वो करते अगर जरा,
क्या ताब थी जो कोई नजर भर के देखता।
झाड़ औ पहाड़ देते सभी अपना सर झुका,
पर कौन जानता था जो कुछ उनका भेद था।
ऐसा था बाँसुरी के बजैयाका बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(6.)

अब घुटनियों का उनके मैं चलना बयाँ करूँ?
या मीठी बातें मुँह से निकलना बयाँ करूँ?
या बालकों में इस तरह पलना बयाँ करूँ?
यागोदियों मेंउनका मचलना बयाँ करूँ?
ऐसा था बाँसुरी के बजैयाका बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(7.)

पाटी पकड़ के चलने लगे जब मदन गोपाल,
धरती तमाम हो गयी एक आन में निहाल।
बसुकि चरन छुअन को चले छोड़ के पताल,
आकास पर भी धूम मची देख उनकी चाल।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(8.)

करने लगे ये धूम जो गिरधारी नंदलाल,
इक आप और दूसरे साथ उनके ग्वाल–बाल।
माखन दही चुराने लगे सब के देखभाल,
दी अपनी दूध चोरी की घर–घर में धूम डाल।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(9.)

कोठे में होवे फिर तो उसी कोढँढोरना,
मटका हो तो उसी में भी जा मुखको बोरना।
ऊँचा हो तो भी कंधे पै चढ़के न छोड़ना,
पहुँचा न हाथ तो उसे मुरली से फोड़ना।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(10.)

गर चोरी करते आ गई ग्वालिन कोई वहाँ,
औ उसने आ पकड़ लिया तो उससे बोले वाँ।
मैं तो तेरे दही की उड़ाता था मक्खियाँ,
खाता नहीं मैं उसको निकाले था चींटियाँ।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(11.)

गुस्से में कोई हाथ पकड़ती जो आन कर,
तो उसको वह स्वरूप दिखाते थे मुर्लीधर ।
जो आपीला के धरती वो माखन कटोरी भर,
गुस्सा वो उसका आन में जाता वहाँ उतर।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(12.)

उनको तो देख ग्वालिनें जो जान पाती थीं,
घर में इसी बहाने से उनको बुलाती थीं ।
जहिर में उनके हाथ से वे गुल मचाती थीं,
परदे सबी वो कृष्ण की बलिहारी जाती थीं।
ऐसा था बाँसुरी के बजैयाका बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(13.)

कहती थीं दिल में, दूध जो अब हमछिपायेंगे,

श्रीकृष्ण इसी बहाने हमें मुँह दिखायँगे।

और जो हमारे घर में ये माखन न पायँगे,

तो उनको क्या गरज है वो काहे को आयँगे।

ऐसा था बाँसुरी के बजैयाका बालपन,

क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(14.)

सब मिलजसोदा पास यह कहती थीं आके बीर,

अब तो तुम्हारा कान्हा हुआ है बड़ा शरीर।

देता है हमको गालियाँ, औ फाड़ता हैचीर,

छोड़े दही न दूध, न माखन मही नखीर।

ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,

क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(15.)

माता जसोदा उनकी बहुत करतीं मिंतियाँ,

औ कान्ह को डरातीं उठा मन की साँटियाँ।

तब कान्ह जी जसोदा से करते यही बयाँ,

तुम सच न मानो मैयाये सारीहैं झूठियाँ।

ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,

क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(16.)

माता, कभी ये मुझको पकड़कर लेजाती हैं,
औ गाने अपने साथ मुझे भी गवाती हैं।
सब नाचती हैं आप मुझे भी नचाती हैं,
आपी तुम्हारे पास ये फरियादीआती हैं।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(17.)

मैया, कभी ये मेरी छगुलियाछिपाती हैं,
जाता हूँ राह में तो मुझे छेड़े जाती हैं।
आपी मुझे रुठाती हैं आपी मनाती हैं,
मारो इन्हें ये मुझको बहुत–सा सताती हैं।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(18.)

इक रोज मुँह में कान्हा ने माखन छिपालिया,
पूछा जसोदा ने तो वहाँ मुँह बना दिया।
मुँह खोल तीन लोकका आलम दिखा दिया,
इक आन में दिखा दिया और फिर भुला दिया।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(19.)

थे कान्हा जी तो नंद–जसोदा के घर केमाह,

मेहननवल किशोर की थी सबके दिल में चाह।

उनको जोदेखता था, सो करता था वाह–वाह,

ऐसा तो बालपन न किसी का हुआ है आह।

ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,

क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(20.)

राधा रमन के यारो अजब जाये गौरथे,

लड़कों में वो कहाँ हैं जो कुछ उनमें तौर थे।

आपी वो प्रभु नाथ थे आपी वो दौर थे,

उनके तो बालपन ही में तेवर कुछ और थे।

ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,

क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(21.)

होता है यों तो बालपन हर तिफ्ल का भला,

पर उनके बालपन में तो कुछ औरी भेद था।

इस भेद की भला जो किसी को खबर है क्या,

क्या जाने अपनी खेलने आयेथे क्या कला।

ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,

क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

(22.)

सब मिल के यारो, कृष्ण मुरारी की बोलोजै,
गोबिंद–कुंज–छैल–बिहारी की बोलो जै।
दधिं चोर गोपी नाथ, बिहारी की बोलो जै,
तुम भी नज़ीर कृष्ण मुरारी की बोलो जै।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 307.

(815) राग पीलू– ताल कहरवा

———नज़ीर अकबराबादी।

(1.)

जब मुरलीधर ने मुरली को अपने अधर धरी,
क्या–क्या परेम–प्रीत–भरी उसमें धुन भरी।
लै उसमें राधे–राधे की हरदम भरी खरी,
लहराई धुन जो उसकी इधर औ उधर जरी।
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण–कन्हैया ने बाँसुरी।।

(2.)

ग्वालों में नंदलाल बजाते वो जिस घड़ी,
गौएँ धुन उसकी सुननेको रह जातींसब खड़ी।
गलियों में जब बजाते तो वह उसकी धुन बड़ी,
ले–ले के अपनी लहर जहाँ कानमें पड़ी।
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण–कन्हैया नेबाँसुरी।।

(3.)

मोहन की बाँसुरी के मैं क्या–क्या कहूँ जतन,
ले उसकी मन की मोहिनी धुनउसकी चितहरन।
उस बाँसुरी का आन के जिस जा हुआ वजन,
क्या जल, पवन, 'नज़ीर' पखेरू व क्या हरन
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण–कन्हैया नेबाँसुरी।।[1]

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 307.

(816) राग धनाश्री–ताल तिताला

———नज़ीर अकबराबादी।

(1.)

है आशिक और माशूक जहाँ,
वाँ शाह वजीरी है बाबा!
नै रोना है, नै धोना है,
नै दर्दे असीरी है बाबा!
दिन–रात बहारें–चोहलें हैं,
औ ऐसे सफीरी है बाबा!
जो आशिक हुए सो जानै हैं,
यह भेद फ़क़ीरी है बाबा!
हरआन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक मस्त फकीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(2.)

कुछ जुल्म नहीं, कुछ जोर नहीं,
कुछ दाद नहीं, फरियाद नहीं।
कुछ कैद नहीं, कुछ बंद नहीं,
कुछ जब्र नहीं, आजाद नहीं।।
शागिर्द नहीं, उस्ताद नहीं,

बीरान नहीं, आबाद नहीं।
हैं जितनी बातें दुनियाँ की,
सब भूल गये कुछ याद नहीं।।
हर आन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक मस्त फकीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(3.)

जिस सिम्त नजर कर देखें हैं,
उस दिलवर की फुलवारी है।
कहीं सब्जी की हरियाली है,
कहीं फूलों की गुलक्यारी है।।
दिन–रात मगन खुस बैठे हैं
और आस उसी की भारी है।
बस, आप ही वो दातारी हैं,
और आप ही वो भंडारी हैं।।
हर आन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक मस्त फकीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(4.)

हम चाकर जिसके हुस्न के हैं,
वह दिलवर सबसे आला है।
उसने ही हमको जी बख्शा,
उसने ही हमको पाला है।।
दिल अपना भोला–भाला है,
और इश्क बड़ा मतवाला है।
क्या कहिये और 'नजीर' आगे,
अब कौन समझने वाला है?
हर आन हँसी, हर आन खुशी,
हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक मस्त फकीर हुए,
फिर क्या दिलगीरी है बाबा![1]

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 308.

(817) राग कजरी–ताल तिताल

———नज़ीर अकबराबादी।

(1.)

क्या इल्म उन्होंने सीख लिये,
जो बिन लेखें को बाँचे हैं।
और बात नहीं मुँह से निकले,
बिन होंठ हिलाये जाँचे हैं।
दिल उनके तार सितारों के,
तन उनके तबल तमाँचे हैं।
मुँह चंग जबा, दिल सारंगी,
पा घुँघरू हाथ कमाँचे हैं।।
हैं राग उन्हीं के रंग–भरे,
और भाव उन्हीं के साँचे हैं।
जो बे–गत बे–सुरताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं।

(2.)

जब हाथ को धोया हाथों से,
जब हाथ लगे थिरकाने को।
और पाँव को खींचा पाँवों से,
और पाँव लगे गत पाने को।।
जब आँख उठाई हस्ती से,
जब नयन लगे मटकाने को।
सब काछ कछे, सब नाच नचे,
उस रसिया छैल रिझाने को।।

हैं राग उन्हीं के रंग–भरे,
औ भाव उन्हीं के साँचे हैं।
जो बे–गत बे–सुरतालहुए,
बिन ताल पखावज नाचे हैं।।

(3.)

था जिसकी खातिर नाच किया,
जब मूरत उसकी आयगई।
कहौं आप कहा,कहीं नाचकहा,
औ तान कहीं लहराय गई।।
जब छैल–छबीले सुन्दरकी,
छबि नैनों भीतर छाय गई।
एक मुरछा–गत–सी आय गई,
और जोतमें जोतसमाय गई।।
हैं राग उन्हीं के रंग–भरे,
औ भाव उन्हीं के साँचे हैं।
जो बे–गत बे–सुरताल हुए,
बिन ताल पखावज नाचे हैं।।

(4.)

सब होस बदन का दूर हुआ,
जब गत पर आ मिरदंग बजी।
तन भंग हुआ, दिल दंग हुआ,
सब आन गई बे आन सजी
यह नाचा कौन 'नजीर' अब यॉं,

और किसने देखा नाच अजी !

जब बूँद मिली जा दरिया में

इस तानका आखिर निकला जी।।

हैं राग उन्हीं के रंग– भरे,

औ भाव उन्हीं के साँचे हैं।

जो बे–गत बे–सुरताल हुए,

बिन ताल पखावज नाचेहैं।।[1]

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 309.

(818) राग बिहागरा–ताल दादरा

———नज़ीर अकबराबादी।

(1.)

गर यार की मर्जी हुई, सर जोड़ के बैठे।
घर–बार छुड़ाया तो, वहीं छोड़ के बैठे।।
मोड़ा उन्हें जिधर वहीं, मुँह मोड़ के बैठे।
गुदड़ी जो सिलाई तो, वहीं ओढ़के बैठे।।
औ शाल उढ़ाई तो उसी, शाल में खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो, हर हाल में खुश हैं।

(2.)

गर खाट बिछाने को मिली खाट में सोये ।
दूकाँ में सुलाया तो वो जा हाट में सोये।।
रस्ते में कहा सो तो, वह जा बाट मेंसोये।
गर टाट बिछाने को दिया, टाट में सोये।।
औ खाल बिछा दी, उसी खाल में खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो, हर हाल में खुश हैं।।

(3.)

उनके तो जहाँ में अजब, आलम हैं नज़ीर आह!
अब ऐसे तो दुनिया में वली कम हैं नज़ीर आह!
क्या जाने, फ़रिश्ते हैं कि आदम हैं नज़ीर आह!
हर वक्त में हर आन में, खुर्रम हैं नज़ीर आह!
जिस ढाल में रखा वो, उसी ढालमें खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो, हरहाल में खुश हैं।।[1]

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 310.

(819) राग मिश्रकाफी–ताल तिताला (द्रुतलय)

–––नज़ीर अकबराबादी।

है बहारे बाग दुनियाचंदरोज,
देख लो इसकातमाशा चंदरोज।
ऐ मुसाफ़िर कूच का सामान कर,
इस जहाँ में है बसेरा चंदरोज।
पूछा लुकमाँ से जिया तू कितने रोज?
दस्त हसरत मल के बोला, चंदरोज।
बादे मदफन क़ब्र में बोली कजा,
अब यहाँ पै सोते रहना चंदरोज।।
फिर तुम कहॉ, औ मैं कहॉ ऐ दोस्तो!
साथ हैमेरा तुम्हारा चंदरोज।
क्या सताते होदिले बेजुर्म को,
जालिमो, है ये जमाना चंदरोज।।
याद कर तू ऐ नज़ीर! कबरों के रोज,
जिंदगी का है भरोसा चंदरोज।।[1]

1 पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 310.

तृतीय अध्याय

नज़ीर अकबराबादी की लोकदृष्टि

हिन्दी में कहा जाता है कि–"यथो नाम तथो काम।" अर्थात् जैसा नाम वैसा काम। ठीक उसी प्रकार से जिस प्रकार दिल्ली में जन्मे शेख वली मुहम्मद ने अपना तख़ल्लुस (उपनाम) नज़ीर (उदाहरण) रखा था। ठीक वैसे ही वे ऐसे बेनज़ीर (जिसका कोई उदाहरण न हो) हुए कि जिस प्रकार उन्होंने समाज के हर वर्ग के व्यक्ति और प्रत्येक विषय पर अपनी लेखनी चलायी। उसको सजीव किया। ऐसा किसी ने नहीं किया। उन्होंने मुसलमान होकर भी जिस तरह राग–द्वेष और धर्म से परे हटकर अथवा अलौकिक प्रेम के परिचायक और प्रमाणक आनन्द कंद भगवान श्रीकृष्ण जी के व्यक्तित्व पर अपनी लेखनी को जीवन्त रूप देकर हिन्दी काव्य जगत में एक अनोखा काम कर दिखाया है। ऐसा मेरी समझ में सम्भवतः ही ऐसा किसी दूसरे शायर (उर्दू कवि) ने किया हो। सच मायने में माना जाए तो वे उर्दू शायरी की एक अनौखी आवाज़ थे। बस यही कारण था कि उनकी रचनाएँ तत्कालीन कवि/शायरों को अनौखे रूप में आश्चर्यचकित कर देने वाली थीं, लेकिन फिर भी नज़ीर को कोई शायर मानने को तैयार ही न था। ''इस सम्बन्ध में आगरा के प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ0 प्रणवीर सिंह चौहान ने नज़ीर अकबराबादी पर लिखी अपनी पुस्तक ''आगरा की सांस्कृतिक धरोहर जनकवि नज़ीर अकबराबादी'' के बारे में लिखा है कि– ''कहने को था वो नज़ीर, मगर बेनज़ीर था।''[1]

1 'हमारा आगरा' पुस्तक माला – द्वितीय पुष्प आगरा की सांस्कृतिक धरोहर जनकवि नज़ीर अकबराबादी।'' सम्पादकीय के पृष्ठ 4 पर।

नज़ीर अकबराबादी एक कवि, शायर और ग़ज़लकार होने के साथ ही साथ सूफी रचनाकार भी थे। उनकी दृष्टि इतनी तेज़ थी कि उनकी नज़र से मानव जीवन का या समाज का कोई भी पहलू वंचित नहीं रहा। अर्थात् दूसरे शब्दों हम यह भी कह सकते हैं कि कविवर नज़ीर ने अपनी दृष्टि से सभी को एक कड़ी के रूप में एक से दूसरे को और दूसरे को तीसरे से जोड़ दिया है।

1. नज़ीर अकबराबादी के समय में लोक जीवन और सामाजिकताः

नज़ीर अकबराबादी ने सामाजिक लोक जीवन को बहारों के रूप में अपने शब्दों द्वारा बड़े ही सुन्दर अन्दाज़ में व्यक्त किया है, जिन्हें कहीं पर्व का नाम देकर। तो कहीं मेलों की व्याख्या के रूप में रचना करके परिणति देकर। इतना ही नहीं, उन्होंने सामाजिक जीवन के कुछ रंग ऐसे भी अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किये हैं, जिनका विश्लेषण किया जाये तो हम सहसा अवाक् रह जायेंगे। हमारे अन्तर्मन से एक ही स्वर गूँजेगा–कि क्या ऐसा?

उन्होंने लोक जीवन के रंगों को ऐसा उभारा है कि सम्भवतः हमें उनकी कृतियों के पठन के पश्चात् स्वयं ही एक नारा उद्घोषित करना पड़े –

"नज़ीर अकबराबादी की दृष्टि के लोकरंग।
उनके, हमारे और आपके संग।।"

उनकी रचनाओं का एक रंग ऐसा भी है, जिसे उन्होंने उर्दूदाँ (उर्दू भाषी) होने के कारण बहारों के रूप में व्यक्त किया है। इन बहारों को जो– बरखा बहार, मेघ मल्हार, फाल्गुन की बहार और बसन्त बहार के रूप में मुख्यतः जानी जाती हैं। विगत दिनों इसी शोध के मध्य होली की बहार के बीच एक दिन जब सुबह की बेला में बैठे हुए दैनिक समाचार पत्र का पठन किया जा रहा था कि तभी दैनिक

''हिन्दुस्तान'' समाचार पत्र आगरा संस्करण के पृष्ठ संख्या 13 पर शब्द : होली है पर............"देख बहारें होली की" शीर्षक से छपे आलेख में ''होली की कालजयी कविताऐं'' में पृष्ठ के स्तम्भ संख्या 4 में "जब फागुन रंग झमकते हों" शीर्षक से एक कविता छपी, जिसमें नज़ीर साहब ने होली की बहार के ऊपर क्या खूब लिखा है–

"जब फागुन रंग झमकते हों......."

''जब फागुनरंग झमकते हों, तब देख बहारें होली की।
औरढफ के शोर खड़कते हों, तब देख बहारें होली की।।
परियों के रंग दमकते हों,तब देख बहारेंहोलीकी।
खम शीश–ए–जाम छलकते हों, तब देख बहारें होली की।।
महबूब नशे में छकते हों, तब देख बहारें होलीकी।

हो नाच रंगीली परियों का, बैठे हों गुलरूरंग भरे।।
कुछ भीगी तानें होली की, कुछ नाज़–ओ–अदा के ढंग भरे।
दिल भूले देख बहारों को, और कानों में आहंग भरे।।
कुछ तबले खड़के रंग भरे, कुछ ऐश के दम मुँह चंग भरे।
कुछ घुँघरू ताल झनकते हों, तब देख बहारें होली की।।

वे होली का आगे का दृश्य कुछ इस प्रकार से भी लिखते हैं–

गुलजार खिले हों परियों के और मजलिस की तैयारी हो
कपड़ों पर रंग के छीटों से, खुश रंग अजब गुलकारी हो
मुँह लाल, गुलाबी आँखें हों, और हाथों में पिचकारी हो
उस रंग भरी पिचकारी को, अंगिया पर तक कर मारी हो
सीनों से रंग ढलकते हों, तब देख बहारें होली की।

जिसे देखकर ऐसा लगता है कि नज़ीर साहब उस होली के हुड़दंगे में खुद बैठकर एक सूत्राधार के रूप में उस दृश्य का सजीव वर्णन कर रहे हों।

भारतीय संस्कृति और कला के इतिहास में ब्रज का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। अपने ही रंग में रंगा ये– ब्रज क्षेत्र संगीत, कला, रीति–रिवाज, पर्व, उत्सव, मेले–ठेले तथा धार्मिक मान्यताओं के लिए सदा से ही प्रसिद्ध रहा है। इस क्षेत्र की संस्कृति अपनी एक चिरस्मरणीय विशिष्टता बनाए हुए है। यहाँ की संस्कृति उस अथाह सागर की भाँति है, जिसमें अनेक विचार धारायें समाहित हैं, यदि आप ब्रज–संस्कृति के विषय में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको अवश्य ही जनकवि 'नज़ीर' अकबराबादी द्वारा लिखित काव्य में डुबकी लगानी पड़ेगी। नज़ीर ने अपने अधिकांश काव्य में ब्रज की संस्कृति को एकत्रित करके प्रस्तुत किया है। ब्रज में होली, दिवाली, दशहरा, जन्माष्टमी तथा बसंत आदि त्यौहार बड़े उत्साह के साथ जन मानस द्वारा मनाए जाते हैं। ये ब्रज संस्कृति के प्रमुख रूप हैं। नज़ीर की इन कविताओं में ब्रज की लोक–संस्कृति की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। नज़ीर ने अपनी अनेक कविताओं में इन त्यौहारों की परम्परा का अत्यन्त सजीव ठंग से वर्णन किया है। अकेली 'होली' के ऊपर ही उनकी अनेक कविताएँ जन मानस में प्रचलित हैं।

वे कट्टर मुसलमान होने के बाद भी स्वयं अपने मित्रों के साथ आगरा के गली, मुहल्लों में जाकर लोगों को बधाई देकर उनके साथ होली खेलते थे। नज़ीर ने इसका वर्णन अपनी इस कविता में इस प्रकार किया है–

"सभों को ले के 'किनारी बाजार' में आए,

फिर 'मोती कटरे','फुलहट्टी' के लोग सब धाए,

कि 'पीपल मण्डी' या 'पन्नी गली' के भी आए,

जहाँ तहाँ से ये घर–घर के लोग सब धाए,

कि बेनवाओं के देखे जमाल होली में।।''

इन पंक्तियों में उन्होंने ब्रज की होली का वर्णन कितने सटीक शब्दों में किया है। उनका प्रशंसनीय शब्द भला किसका मन नहीं मोहता–

"ये सैर होली की हमने ब्रज में देखी,

कहीं न होवेगी इस लुत्फ़ की मियाँ होली,

कोई तो डूबा है दामन से लेकर ता चोली,

कोई तो मुरली बजाता है कह 'कन्हैया'जी,

है धूमधाम ये बे–इख़्तियार होली में।।''

कविवर नज़ीर अकबराबादी अपनी वाणी और कलम से अल्प समय में हिन्दू और मुसलमान सबके प्रिय बन गये। सभी वर्गों के स्त्री और पुरूष उनका सानिध्य पाकर प्रफुल्लित रहते थे और उनकी रसपूर्ण दृष्टि जन–जन के जीवन को कृतार्थ किया करती थी। धार्मिक भेदभाव कवि नज़ीर को छू कर के भी ना गुजरा था। वे हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई आदि में किसी भी प्रकार के भेदभाव के पक्षधर नहीं थे और न ही किसी प्रकार का समर्थन करते थे। वे सरल और सरस स्वभाव के थे। जब वे घर से निकलते थे तो आम लोग उनका रास्ता रोककर खड़े हो जाते थे और उनसे किसी भी प्रकार की और किसी भी विषय पर कविता सुनाने का आग्रह कर दिया करते थे। चूँकि वे मुस्लिम समाज के थे। तो आमजन मुस्कराकर उनके रास्ते में खड़ा होकर बोलता था। मियाँ–सबसे पहले आप हमें कविता सुनावें। तब हम आपको आगे जाने देंगे। और कविवर नज़ीर उनके स्नेहपूर्ण आग्रह का

तिरस्कार किसी भी हालत में न करते हुए उनकी इच्छानुसार (मन मुताबिक) उन्हें उनकी माँग पर कविता, गजल, शायरी या नज़्म सुना दिया करते थे।

होली की भाँति दीपावली भी जन–मानस का त्यौहार है। इसे भी सब हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। नज़ीर ने होली की भाँति दिवाली के त्यौहार का वर्णन भी बड़ी सुन्दरता के साथ इन पंक्तियों में किया है।

"हरेक मकाँ में जला फिर दिया दिवाली का,
हरेक तरफको उजाला हुआ दिवाली का,
किसी के दिल को मज़ा खुश लगा दिवाली का।
अजब बहार का है दिन बना दिवालीका।।"

कविवर नज़ीर ने बालपन में बचपन के भोलेपन को अपनी इन पंक्तियों में कुछ इस तरह से उकेरा है।

"बचपन"

''क्या दिन थे यारो वह भी, थे जब कि भोले भाले
निकले थे दाई लेकर, फिरती कभीदिदाले
चोटी कोई रखा ले,बद्धी कोईपिन्हा ले
हँसली गले में डाले, मिन्नत कोई बढ़ाले
मोटे हों या कि दुबले, गोरे हों या कि काले
क्या ऐश लूटते हैं, मासूम भोले–भाले........
दिल में किसी के हरगिज, नै शर्म नै हया है
आगा भी खुल रहा है, पीछा भी खुल रहा है
पहने फिरे तो क्या है? नंगे फिरे तो क्या है?

यॉं यूँ भी वाह–वा है, और वूँ भी वाह–वा है।

कुछ खाले इस तरह से, कुछ उस तरह से खाले

क्या ऐश लूटते हैं, मासूम भोले–भाले........

बालपन में गुड़, बेर, मूली और गाजर खाने के लिये के माँगने वाले बच्चों का दृश्य नज़ीर साहब ने किस सुन्दरता के साथ किया है–

जो कोई चीज देवे, नित हाथ ओटते हैं

गुड़, बेर, मूली, गाजर, सब मुँह में घोटते हैं

बाबा की मूँछ, माँ की चोटी खसोटतेहैं

गर्दोंमें अट रहे हैं,खाकोंमें लौटते हैं

कुछ मिल गया सो पीले, कुछ बन गया सो खाले

क्या ऐश लूटते हैं, मासूम भोलेभाले........[1]

जीवन के क्रमिक विकास के साथ–साथ जैसे–जैसे कोई व्यक्ति अपनी उम्र के सोपानों को पार करता जाता है। वैसे ही वैसे उसकी स्थिति उसकी मानसिकता में परिवर्तन स्वयंमेव ही होते चले जाते हैं। उस समय उसकी भाव–भंगिमाओं में परिवर्तन, उसके वार्तालाप का तरीका, उसके उठने–बैठने, खाने–पीने का तरीका आदि सब कुछ ही बदलता चला जाता है। उसके रूप–सौन्दर्य में भी निखार आ जाता है, जिससे हर कोई उन पर आसक्त होने लगता है या आसक्त हो जाता है। ऐसा ही कुछ नज़ीर अकबराबादी जी ने देखा और तुरन्त ही अपने शब्दों अभिव्यक्त कर दिया–

---

1 'बचपन' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 99–100.

“जवानी”

‘‘क्या ऐश की रखती है सब आहंग जवानी
करती है बहारों के तईंदंग जवानी
हर आन पिलाती है मैऔरभंग जवानी
करती है कहीं सुलह कहीं जंग जवानी
इस ढब के मज़े रखती है और ढंग जवानी
आ़शिक को दिखाती है अ़जब रंग जवानी
अल्ला ने जवानी का वो आ़लम है बनाया
जो हर कहीं आ़शिक,कहीं रुसवा,कहीं शैदा
फन्दे में कहीं जी है कहीं दिल है तड़पता
मरते हैं, सिसकते हैं, बिलखते हैं अहा–हा
इस ढब के मज़े रखती है और ढंग जवानी
आ़शिक को दिखाती है अ़जब रंग जवानी
लड़ती है कहीं आँख, कहीं दिष्ट, कहीं सैन
झूठा है कहीं प्यार किसी से हैं लगे नैन
वादा कहीं, इक़रार कहीं, सैन कहीं नैन
नै जी को फ़राग़तहै नै आँखों के तईं चैन

जवानी के चंचलपन के बारे में बताते हुए नज़ीर साहब आगे और क्या कहते हैं? उनके शब्दों की सुन्दरता को देखिये–

चितवन की लगावट कोई चंचल है दिखाती
कुरती कोई अँगिया कोई काजल है दिखाती
इस ढब के मज़े रखती है और ढंग जवानी

आ़शिक को दिखाती है अ़जब रंग जवानी
कहती है कोई, "रात मेरे पासन आये"
कहती है कोई,"हमको भी खातिर में न लाये"
कहती है कोई, "किसने तुम्हेंपान खिलाये?
कहती है कोई, "घर को जो जाए हमें खाये
इस ढब के मज़े रखती है और ढंग जवानी
आ़शिक को दिखाती है अ़जबरंग जवानी
क्या तुझसे'नज़ीर'अब मैं जवानी की कहूँ बात[1]

नज़ीर अकबराबादी ने शायद समाज का अत्यन्त ही गहनता से अध्ययन किया होगा। तभी तो उन्होंने शब्दों के एक अनौखे चितेरे के रूप में अपनी पहचान बनाने में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया। उन्होंने जीवन के हर क्षण को बड़ी ही सादगी, संजीदगी और तल्लीनता के साथ भी जीया होगा और उन्होंने अपनी प्रस्तुतियों के रूप में विभिन्न शीर्षकों के नाम से उन बातों को पुनरूत्पादन करके समाज को एक ऐसी गति दी जो लोगों को भविष्य के प्रति सावधान कर सके। उन्होंने ऐसा इसलिये भी किया होगा ताकि भविष्य में आने वाली समस्याओं का लोग डटकर सामना करने के लिये सचेत हो जायें। ताकि उनके भविष्य की नैया ठीक से पार लग सके।

एक लम्बी उम्र के सफ़र को पार करके जब नज़ीर अकबराबादी ने बुढ़ापे की खिड़की से स्वयं को निहारा और अपना आंकलन किया तो उन्हें अपने शरीर के

---

1 'जवानी़' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 101—103.

विभिन्न अंगों पर पड़ी झुर्रियों से बड़ी ईर्ष्या हुई और उन्होंने बिना कुछ सोचे समझे अपनी बात को कुछ दूसरे तरह से प्रस्तुत किया।

उन्होंने अपने बारे में अपने मुख पर पड़ी झुर्रियों से स्वयं की निन्दा की तो कहीं मूँछ और सिर के बालों के दूधिया रंग युक्त होने की निन्दा की और उस मध्य स्वयं को अत्यन्त व्यथित होने का सन्ताप भी किया और उसी मध्य उन्होंने मृत्यु के भयानक चित्र का शाब्दिक खाका भी अपनी नज़्म के माध्यम से खींच लिया। अपनी इसी व्यथा–कथा को उन्होंने अपनी नज्म – "बुढ़ापा" के अन्तर्गत कुछ इस प्रकार लिखा–

इस नज़्म में दर्शाया है–

"बुढ़ापा"

क्या क़हर है यारो जिसे आ जाए बुढ़ापा।
और ऐश–ए–जवानी के तईंखाए बुढ़ापा।।
इशरत को मिला ख़ाक में ग़म लाए बुढ़ापा।
हर काम को हर बात को तरसाए बुढ़ापा।।
सब चीज़ को होता है बुरा हाय बुढ़ापा।
आ़शिक़ को तो अल्लाह न दिखलाए बुढ़ापा।।

आगे तोपरीज़ाद ये रखते थे हमें घेर।
आते थे चले आप जो लगती थी ज़रा देर।।
सो आ के बुढ़ापे ने किया हाय येअँधेर।
जो दौड़ के मिलते थे वो अब लेते हैं मुँह फेर।।

सब चीज़ को होता है बुरा हायबुढ़ापा।

आ़शिक़ को तो अल्लाह न दिखलाए बुढ़ापा।।

बीते हुए जवानी के दिनों को याद करके बुढ़ापे का दर्द क्या होता है? कैसे लोग आहें भरते हैं? इस बात को नज़ीर अकबराबादी जी ने कैसे बताया है? इन पंक्तियों को पढ़कर ही अनुभव होगा।

करते थे जवानी में तो सब आप से आ चाह।
और हुस्न दिखाते थे वो सब आन के दिलख़्वाह
यह क़हर बुढ़ापे ने किया आह 'नज़ीर' आह।
अब कोई नहीं पूछता अल्लाह हीअल्लाह।।

सब चीज़ को होता है बुरा हाय बुढ़ापा।
आ़शिक़ को तो अल्लाह न दिखलाए बुढ़ापा।।[1]

कृष्ण भक्ति का केन्द्र रहे ब्रज क्षेत्र में नज़ीर से पहले आगरा में न जाने कितने ही रचनाकारों ने रचनायें कीं।

आगरा के रूनकता (तत्कालीन रेणुका) क्षेत्र में मदन मोहन के रूप में जन्मे सूरदास (हिन्दी साहित्य के सूरज) ने अपनी कृति सूरसागर में एक लाख गीत लिखे, जो यदा–कदा आज मात्र 8000 के लगभग ही मिलते हैं, लिखकर आगरा के नाम को प्रसिद्धि पर पहुँचाया।

सन् 1253 में उत्तर प्रदेश के ज़िला–एटा के पटियाली ग्राम में जन्मे अमीर खुसरो कवि, गायक, शायर और संगीतकार भी ब्रज में ही जन्मे थे, जिनका परिवार

---

1 शीर्षक बुढ़ापा, पुस्तक नज़ीर ग्रन्थावली लेखक– डॉ॰ नज़ीर मुहम्मद, प्रकाशक– उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ 287 से 297.

कई पीढ़ियों से राजदरबार से सम्बन्धित था। खुसरो (स्वयं) ने अपनी आँखों से 8 सुल्तानों का शासन देखा था। वे पहले मुस्लिम कवि थे, जिन्होंने अपनी रचनाओं में खुलकर हिन्दी शब्दों का प्रयोग किया था।

सन् 1548 में दिल्ली के आसपास जन्मे सैयद इब्राहिम, कृष्ण भक्ति से इतने प्रभावित हुए कि गोस्वामी बिट्ठलनाथ जी से दीक्षा लेकर वे ब्रजभूमि में ही जा बसे और रसखान के नाम से रचनायें करके अमर हो गये।

ब्रजक्षेत्र की ख्याति और कृष्ण भक्ति के प्रेम व माधुर्य से ओत–प्रोत होकर ही अवधी कवि तुलसीदास जी को भी विनय पत्रिका, कवितावली, दोहावली आदि प्रसिद्ध काव्य रचनाएँ ब्रजभाषा मैं ही रचने के लिये बाध्य होना पड़ा। यहाँ तक कि केशव, मतिराम, चिन्तामणि, पद्माकर, ग्वालदेव, बिहारी, घनानन्द और भूषण आदि जैसे तमाम लोगों ने ब्रज क्षेत्र से प्रभावित होकर ही ब्रजभाषा में रचनाएँ कीं।

मीर तकी मीर, मिर्ज़ा ग़ालिब, आरज़ू आगरा के ही तो शायर थे, जिन्होंने भारतवर्ष के उर्दू साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाया। आरम्भ से ही आगरा ऐतिहासिक नगरी होने के साथ ही साथ एक साहित्यिक नगरी भी रहा है। जब हम यहाँ के शायरों और कवियों की रचनाओं का विश्लेषण करते हैं तो पता चलता है कि सभी की अत्यधिक रचनाओं का केन्द्र–बिन्दु ब्रज क्षेत्र ही रहा है।

ब्रज क्षेत्र ही भारतवर्ष में मात्र एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ किसी प्रदेश का नाम प्रदेश न होते हुए भी ब्रज प्रदेश है। भौगौलिक और क्षेत्रीय दृष्टि से ब्रज प्रदेश क्षेत्र में उत्तर प्रदेश के आगरा, मथुरा, अलीगढ़, हाथरस, कासगंज, एटा, बुलन्दशहर व मैनपुरी, राजस्थान के भरतपुर और धौलपुर, मध्य प्रदेश के मुरैना और हरियाणा के पलवल क्षेत्र को ब्रजक्षेत्र माना गया है। जिस प्रकार सम्पूर्ण भारत में यूनेस्को विरासत की सबसे ज़्यादा इमारतें ताजमहल, आगरा किला और फतेहपुर सीकरी,

जो आगरा में ही स्थित हैं, को महत्ता दी गयी हैं, जो दिल्ली–आगरा–जयपुर स्वर्णिम त्रिकोंण में (गोल्डन ट्राइंगल) में सम्मिलित हैं। ठीक इसी प्रकार हिन्दी और उर्दू के कवि और शायरों ने लेखन और अभिव्यक्ति क्षेत्र में दूर–दूर तक अपनी ख्याति बिखेरी है।

क्या हिन्दू क्या मुसलमान। सबकी रचनाओं देखकर तो ऐसा प्रतीत होता है कि सभी रचनाकार एकमत होकर ब्रज क्षेत्र के विकास में अपने–अपने क्षेत्रों की कविताओं या शेरों की रचना कर गये हैं। भगवान श्रीकृष्ण की जन्मस्थली व कार्यस्थली माने जाने वाले ब्रज क्षेत्र में, भगवान श्रीराम का नाम कम लेकर लोग भगवान श्रीकृष्ण का ही नाम लेते हैं। जब कभी कोई व्यक्ति एक यात्री अथवा पर्यटक की हैसियत से मथुरा–वृन्दावन की कुँज गलियों में भ्रमण करके भगवान कृष्ण के दर्शन करने जाता है तो देखता है कि क्या पर्यटक, क्या बच्चे, बूढ़े और जवान, यहाँ तक कि भिखारी और भक्तजन भी कृष्ण जी के गीत गाते हुए मिल जायेंगे।

उन गीतों के शब्द, भाव और अभिव्यंजनाओं को यदि आप देखें तो आप के मन में स्वतः ही ये विचार आयेगा कि इन सब गीत और कवित्तों की रचना की गयी थी। या तो वे लोक गीत अथवा लोक रचनाएँ हैं, जो समय के साथ ही साथ क्रमिक रूप से विकसित होती चली गयीं। जब आपको ये पता चलेगा कि ये गीत, छन्द या दोहे किसी हिन्दू द्वारा न लिखकर किसी मुसलमान कवि द्वारा लिखे गये हैं तो आप आश्चर्य चकित हुए बिना भी न रह सकेंगे। ये रचनायें कुछ हैं ही ऐसी, जो जाति धर्म से अलग हठकर हैं। ये वही रचनाएँ हैं, जो जनजीवन की कट्टरता की दीवार से कहीं बहुत दूर हठकर हैं, जिन्हें आप चाहकर भी नहीं हठा सकेंगे।

हिन्दी की 'गंगा–जमुनी संस्कृति' को सहेजकर रखती ब्रज की संस्कृति को, उर्दू कवियों (शायरों) ने अपनी लोकप्रिय रचनाओं के माध्यम से अनजाने में ही इतनी अत्यधिक गति प्रदान की है कि हम अवाक् रह जाते हैं।

कहीं अमीर खुसरो अपनी ग़ज़ल में लिखते हैं कि–

''छाप तिलक सब छी....नी.....रे...
मो... सै......नैना मिलायके''

तो कहीं रसखान ने लिखा है कि– ''मानस हों तो वही रसखान।''

कहीं मलिक मुहम्मद जायसी भगवान श्रीकृष्ण के दर्शन में इतने लीन हो गये कि वे ब्रज क्षेत्र की प्रशंसा किये बिना ही न रह सके और अपनी रचनाओं में श्रीकृष्ण जी के ऊपर बहुत कुछ लिख दिया।

ठीक वैसे ही ''कैसा था बाँसुरी के बजइया का बालपन।'' आदि जैसी गीत रचनाऐं देकर आगरा के बे–नज़ीर शायर, नज़ीर अकबराबादी अपनी पहचान, आगरा का ही होने की दे गये।

नज़ीर अकबराबादी का जीवन बाज़ारू शौक़ से पूरा हुआ। उनके बचपन की कहानी पक्षियों और जानवरों के खेल से शुरू हुई। उनकी रचनाओं को देखकर यूँ लगता था जैसे वे जन्म से ही कवि हों। वे गीत और कविताओं को रचने के लिए ही धरती पर जन्मे हों। उनकी रचनाएँ देखकर ऐसा लगता है जैसे कि उन्होंने अपने बचपन से ही सम्भवतः कविताओं की रचना करना प्रारम्भ कर दिया हो। उनके समय में आगरा– संस्कृति और मनोरंजन का एक महत्वपूर्ण स्थान बना हुआ था। आगरा के मेले, खेल, तमाशे, तीज–त्यौहार और कोठों पर नाच–गाने की

प्रवृत्ति प्रभाव में थी। अपनी कविताओं में इस सबका वर्णन उन्होंने ऐसे किया जैसे मानो आजकल श्रृव्य माध्यम का संवाददाता अपने दर्शकों को करता है।

दूसरे अर्थों में कह सकते हैं कि उनकी अभिव्यक्ति और प्रस्तुतीकरण का ढंग कुछ इस प्रकार का था जैसे महाभारत का संजय रूपी सूत्राधार, जनता को उस स्थान और स्थिति का आँखों देखा हाल सुना रहा हो। उनके बारे में लोग ऐसा भी कहते हैं कि वे अपने हाथ में लोहे का कड़ा डालकर, ढपली पर भी गाकर अपना गीत सुनाया करते थे और नाच गाकर पूरा आनन्द लिया करते थे। उन्होंने आगरा के ब्रज क्षेत्रों के मेले– तमाशों का वर्णन अपनी बहुत सारी रचनाओं में किया है।

हालाँकि वे मुसलमान थे, किन्तु उन्होंने ईद–उल–जुहा, ईद–उल–फितर, रोज़ा, शब–ए–बारात और ईदगाह का वर्णन करने के साथ ही साथ, हम समझते हैं कि हिन्दुओं के तीज–त्यौहारों, मेले–ठेले, खेल–तमाशों, राखी, बसन्तोत्सव, वर्षा, झूला, कंस का मेला, निर्जला एकादशी व पतंग के विभिन्न रंगों के वर्णन बल्देव जी के मेले आदि का वर्णन किया है।

उनकी रचनाओं पर गम्भीरता पूर्वक चिन्तन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे वे कभी किसी एक धर्म के सीमित दायरे में बँधकर नहीं रहे। मुसलमान होने के बाद भी उन्होंने हिन्दुओं के जीवन स्तर, देवी–देवताओं, रंग और संस्कृति पर बहुत ही अधिक रचनाएँ की हैं। वे अगर सार्वजनिक जीवन में अपने आराध्य भगवान श्रीकृष्ण के अलौकिक प्रेम पर राधा के प्रति या कृष्ण के प्रति इतनी सुन्दर रचनाएँ करते थे। तो वे अपने व्यक्तिगत जीवन में वैश्याओं से प्रेम और अगाध स्नेह भी किया करते थे। वे बड़े–बड़े राजा महाराजाओं की भाँति वैश्याओं से कौतुक

क्रीड़ायें करने के लिए उनके कोठे पर वैश्यागमन करने भी जाते थे। जिस समय वैश्याएँ कोठे पर अपने गीत संगीत के कार्यक्रम में रास–रंग बिखेर कर लोगों को अपनी ओर आकृष्ट करके मन्त्रमुग्ध किया करतीं थी। उनका भी उन्होंने बड़े ही सरल और सहज भाव से अभिव्यक्तिकरण किया है। नृत्य एवं कथ्य के प्रस्तुतिकरण में किस तरह से वे वैश्यायें अपने प्रशंसकों और ग्राहकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती थीं। किस प्रकार वे वैश्यायें नृत्य के मध्य अंग–प्रत्यंगों का दिग्दर्शन किया करती थीं।

नज़ीर की भाषा शैली– मुहावरों व लोकोक्तियों युक्त हुआ करती थी। एक ओर यदि उनकी भाषा में अरबी–फारसी शब्दों की अधिकता थी, जो आगे चलकर उर्दूभाषी के रूप में जानी जाती थीं। तो उनकी भाषा में हिन्दी होने के साथ ही साथ संस्कृत और ब्रजभाषा की प्रधानता भी होती थी। वे वृन्दावन में होने वाले स्वामी हरिदास संगीत समारोहों में भी अगाध श्रद्धा और आस्था के साथ बढ़–चढ़कर भाग लेते थे।

लेकिन उनकी रचनाओं का अध्ययन करने के बाद ऐसा लगा कि सही मायने में जो ख्याति उन्हें मिलनी चाहिए थी। वह उन्हें नहीं मिली। या ये कहिए कि नज़ीर ने अपनी पहुँच राजमहलों तक नहीं बनायी। उन्होंने राजा–महाराजा और कथित तौर पर बादशाहों की चाटुकारिता करना पसन्द नहीं किया। इसी कारण उन्होंने अवध के बादशाह द्वारा उनके जीवन के अन्तिम वर्षों में महल में आकर कविता गायन एवं रचना किये जाने के प्रस्ताव को स्वीकार न करके उनके यहाँ पहुँचने के लिए दी गयी धनराशि भी अभावों और ग़रीबी की ज़िन्दगी जीने के बाद भी उन्हें वापस कर दी। ऐसा ही कुछ उन्होंने भरतपुर के राजा के साथ किया कि

जब उनके यहाँ से राजभवन में कविताओं की रचना किये जाने के लिये उन्हें निमन्त्रण मिला तो उन्होंने उसे स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। ये निःसन्देह सत्य है कि जिन कवियों ने राजाओं की प्रशंसा में कविता कीं या अन्य रचनाएँ की तो उन्हें अटूट सम्पत्ति का रातों रात स्वामी बना दिया गया और वे अत्यन्त विख्यात हुए। जबकि नज़ीर अकबराबादी ने राजा–रजबाड़ों से जुड़ने के बजाय आम जनता से ही जुड़ना पसन्द किया। उन्होंने जनमानस और लोक संस्कृति को सर्वोपरि मानते हुए ही रचनाएँ कीं, जो सम्भवतः देवी–देवताओं, मेले उत्सवों, त्यौहारों और निर्धन लोगों की श्रेणी के निमित्त ही थीं। सम्भवतः यही कारण रहा होगा कि तत्कालीन कवि और शायरों ने उन्हें शायर की श्रेणी में न मानकर उनका उपहास उड़ाया होगा।

नज़ीर अकबराबादी ने उस समय किसी एक ऐसे ककड़ी वाले की व्यथा–कथा पर भी एक कविता लिखी, जिसकी कोई ककड़ी नहीं खरीद रहा था। उसे अपनी ककड़ियाँ बेचते–बेचते सुबह से शाम हो गयी, जो हिन्दी के नाट्य लेखन करने वाले हबीब तनवीर साहब को इतनी अच्छी लगी कि उन्होंने ''आगरा बाजार'' के नाम से एक नुक्कड़ नाटक लिख डाला, जिसका निर्देशन हबीब तनवीर के शिष्य अनूप द्विवेदी ने किया, जिस पर विश्व के जाने–माने समाचार चैनल बी.बी. सी. लन्दन ने काफी प्रशंसा की। उसका शीर्षक गीत ही नजीर अकबराबादी के शेर से हुआ–

''मुफ़लिस कहो, फ़कीर कहो आगरे का है।
शायर कहो नज़ीर कहो, आगरे का है।।''

नज़ीर की नज़्मों के इस नाटक का मंचन जब श्रीराम सेण्टर दिल्ली में हुआ, तो आगरा और आगरावासियों की विश्व में ख़्याति फ़ैलने पर हमारा सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है। यद्यपि आगरा बाजार एक नाटक तो था, किन्तु वह एक शहर या जिला का न होकर आगरा की संस्कृति की धरोहर के रूप में दिखाया गया था।

हुआ ये कि सन् 1954 में भारतीय रंग–मंच की दुनियाँ के ख्यातिलब्ध व्यक्तित्व के रूप में चिरपरिचित हबीव तनवीर ने, नजीर अकबराबादी की कुछ कविताओं पर आधारित जामिया–मिलिया विश्वविद्यालय दिल्ली के शिक्षक, छात्रों और ओखला गाँव के कुछ लोगों के साथ एक रूपक तैयार किया, जो लोगों को इतना पसन्द आया कि शनैः–शनैः वह 'आगरा बाजार' एक नाटक के रूप में धरातल पर आ गया। इस नाटक की मुख्य बात ये थी कि इसमें नाट्य जगत से कोई भी कलाकार नहीं था और वह कलाकार के रूप में अपनी भूमिका निभा रहा था। या यूँ कहिए कि जो अभिनय कर रहा था। वह एक अभिनेता न होकर स्थानीय कलाकार के रूप में एक आम आदमी ही था। यह नाटक छत्तीसगढ़ में भी काफी बार खेला गया। नज़ीर अकबराबादी की ख्याति दिन पर दिन बढ़ती चली गयी। इस नाटक के संवादों ने तो कलाकारों की अदाकारी सचमुच ही साकार कर दी। इस नाटक में नज़ीर अकबराबादी की बज़्म "आदमीनामा" के चन्द अशार भी पेश किये।

फिल्म अभिनेत्री निम्मी, जो आगरा के बसई क्षेत्र की एक वैश्या परिवार से सम्बद्ध थीं, जिन्हें भारतीय फ़िल्म जगत के शो मैन के नाम से प्रसिद्ध फ़िल्म निर्माता निदेशक राजकपूर साहब अपने साथ ले गये थे। उस समय ताजगंज का बसई क्षेत्र

वैश्यावृत्ति और मुजरों के लिए काफ़ी बदनाम था। यही बात वैश्या, दरोगा, जनता और राजनीतिक रिश्तों की आपसी जटिलताओं को बिना किसी भय और शर्म के दर्शित किया गया था। 1980 के दशक में यही नाटक टेलीविजन पर प्रदर्शित हुआ औरजिस पर 18 सितम्बर सन् 2014 को वी.वी.सी. लन्दन ने सराहना की।

बसन्त ऋतु के बारे में नज़ीर अकबराबादी जी बड़ी ही तन्मयता के साथ लिखते हैं–

"यारों का बसन्ता"

जब फूल का सरसों के हुआ आके खिलंता
औ' ऐश की नज़रों से निगाहों का लड़ंता
हमने भी दिल अपने के तईकरके पुखंता
औ' हँस के कहा यार से, ऐ लकड़ भवंता
सब की तो बसन्ते हैं, पे' यारों का बसन्ता
यक फूल का गेंदों के मँगा यार से बजरा
दस मन का लिया हार गुँथा, आठ का गजरा
जब आँख से सूरज की ढला रात का कजरा
जा यार से मिलकर ये कहा, ऐ मेरे रजरा
सबकी तो बसन्ते हैं, पे' यारों का बसन्ता
थेअपने गले में तो कई मन के पड़े हार
यार के गजरे भी थे एक धौन की मिक़दार
आँखों में नशे मय के उबलते थे धुआँधार
जो सामने आता था, यही कहते थे ललकार
सबकी तो बसन्ते हैं, पे' यारों का बसन्ता
पगड़ी पे' हमारी थे जो गेंदों के कई पेड़
हर झोंक में लगती थी बसन्तों के तई एड़

साकी ने भी मटके को दिया मुँह के तई भेड़
हर बात में होती थी इसी बात की आ छेड़[1]

बरखा की बहार हो और सावन की मल्हार हो। तो ऐसा हो ही नहीं सकता कि किसी व्यक्ति की कोई प्रतिक्रिया ना हो। ऐसा ही कुछ अच्छा नज़ीर अकबराबादी की बरसात की बहारों की प्रतिक्रिया कुछ इस प्रकार है–

"बरसात की बहारें"

''हैं इस हवा में क्या–क्या बरसात की बहारें।
सब्ज़ों की लह–लहाहट बाग़ात की बहारें।।
बून्दों की झम झमाहट क़तरात की बहारें।
हर बात के तमाशे हर घात कीबहारें।।
क्या क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें.........
बादल हवा के ऊपर हो मस्तछा रहे हैं।
झड़ियों की मस्तियों से धूमें मचा रहे हैं।।
पड़ते हैं पानी हर जा जल–थल बना रहे हैं।
गुलज़ार भीगतेहैंसब्ज़े नहा रहे हैं।।'
क्या क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें..........

कविवर नज़ीर बरसात का बखान अपने शब्दों में आगे इस प्रकार कहते हैं–

''कीचड़ से हो रही है जिस जा ज़मीं फिसलनी।
मुश्किल हुई है वां से हर इक को राह चलनी।।

1 'यारों का बसन्ता' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 34–44.

फिसला जो पाँव पगड़ी मुश्किल है फिर सँभलनी।
जूती गड़ी तो उनसे क्या ताब फिर निकलनी।।
क्या क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें.............
कितने तो दल–दलों की कीचड़ से फँस रहे हैं।
कपड़ेतमाम गन्दे दल–दल में बस रहे हैं।।
कितने उठे हैं मर–मर कितने उकस रहे हैं।
वह दुःख में फँस रहे हैं और लोग हँस रहे हैं।।
क्या क्या मची हैं यारो बरसात की बहारें............[1]'

नज़ीर को दो बार मथुरा जाकर रहने का अवसर मिला था। वहाँ श्रीकृष्ण, बल्देव के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ। वे मथुरा–वृन्दावन के मंदिरों में जाते वहाँ के वातावरण का पूरा–पूरा आनन्द उठाते। तभी उन्हें कन्हैया का जन्म, कृष्ण कन्हैया की तारीफ़, बाँसुरी, कृष्ण–लीला, रास–लीला, रुक्मिणी का विवाह, हरि जी का सुमिरन जैसी कविताएँ लिखने की प्रेरणा मिली।

मथुरा–वृन्दावन सावन–भादों के मास में कृष्णमय हो जाता है। मन्दिरों में विभिन्न प्रकार की छटाओं के दर्शन होते हैं। देश–विदेश से लाखों तीर्थयात्री वहाँ आते हैं। भादों की अष्टमी का दिन तो ब्रजवासियों के लिए अत्यन्त महत्व का होता है। उस दिन भगवान श्री कृष्ण अवतरित हुए थे। वह दिन श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के रूप में हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। नज़ीर को भी यह उत्सव देखने का

---

1 'बरसात की बहारें' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 45–49 .

अवसर मिला और उन्होंने 'कन्हैया का जनम' कविता लिख डाली। उसके कुछ छन्द इस प्रकार हैं–

'है रीत जनम की यूँ होती जिस घर में बालाहोता है।
उस मण्डल में हर मन भीतर सुख चैन दो बाला होता है।।
सब बात बिथा की भूले हैं जब भोला–भाला होता है।
आनन्द बधाये बाजे हैं नित भवन उजाला होता है।।
यों ने नछत्तर लेते हैं इस दुनियाँ में संसार जनम।
पर उनके और ही लच्छन हैं जब लेते हैं औतार जनम।।

इस प्रकार लगभग तीस छंदों की इस कविता में नज़ीर ने श्रीकृष्ण–जन्म का बहुत सुन्दर और यथार्थ वर्णन किया है।

महाकवि सूरदास ने श्रीकृष्ण के बालपन, उनकी बाल–लीलाओं का वर्णन अपने काव्य में किया है। उसी प्रकार नज़ीर ने भी श्रीकृष्ण के बालपन, बाँसुरी, कालिय–दमन, कन्हैया जी का रास, ब्याह कन्हैया का, दसम कथा (रुक्मिनी का ब्याह) हरी की तारीफ, श्रीकृष्ण व नरसी मेहता, सुदामा चरित आदि श्रीकृष्ण से सम्बन्धित कविताएँ लिखीं।

'कन्हैया का बालपन' कविता की यह पंक्तियाँ कितनी मनोहारी हैं–

"यारो सुनो! यह दधि के लुटैया का बालपन।
और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन।।
मोहन सरूप निरतकरैया का बालपन।
बन–बन के ग्वाल गौएं चरैया का बालपन।।
क्या–क्या कहूँ मैं किशन कन्हैया का बालपन........

'बाँसुरी' नामक कविता की यह पंक्तियाँ देखिए–

"जब मुरलीधर ने मुरली को अपनी अधर धरी।
क्या–क्या प्रेम प्रीति भरी उसमें धुन भरी।।
लै उसमें राधे–राधे की हरदम भरी खरी।
लहराई धुन जो उसकी इधर और उधर ज़री।।
सब सुनने वाले कह उठे जय जय हरी–हरी।
ऐसी बजाईकिशन कन्हैया ने बाँसुरी।।"

नज़ीर अकबराबादी की दृष्टि से लोक जीवन का या समाज का कोई भी पहलू वंचित नहीं रहा। अर्थात् हम कह सकते हैं कि कविवर नज़ीर अकबराबादी ने अपनी दृष्टि से सभी को सरोकार कर दिया है। वे एक सूफी कवि भी थे।

कविवर नजीर अकबराबादी अपनी वाणी और कलम से अल्प समय में हिन्दू और मुसलमान सबके प्रिय बन गये। सभी वर्गों के स्त्री और पुरूष उनका सानिध्य पाकर प्रफुल्लित रहते थे। उनकी रसपूर्ण दृष्टि उनके जीवन को कृतार्थ किया करती थी। धार्मिक भेदभाव कवि नज़ीर को छू कर के भी ना गुजरा था। वे हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई आदि में किसी भी प्रकार के भेदभाव के पक्षधर नहीं थे और न ही किसी प्रकार का समर्थन करते थे।

2. नज़ीर अकबराबादी की दृष्टि में लोक पर्व :

हमारा मानना है कि नज़ीर साहब ने धरती पर जन्म लेकर कोई बोझ नहीं बढ़ाया, बल्कि उन्होंने ज़िन्दगी को जिया है। उन्होंने सही अर्थों में लोक जीवन पर अपनी पैनी नज़र रखकर समाज को दिशा दी है, जिसके सन्दर्भ में सहज ही कुछ कह देना उतना सहज नहीं है, जितनी कि सहजता और सरलता से उन्होंने अपनी

कलम से अपनी अभिव्यक्ति को काग़ज़ पर उकेरा। शब्दों का वो चितेरा, जिसने एक ओर समाज में व्याप्त समस्याओं पर विचार किया तो दूसरी ओर भारत में– ''अनेकता में एकता भारत की विशेषता'' के इस नारे को मूर्त रूप दिया है।

आप कहीं मत जाइये और होली पर लिखी उनकी इस रचना को देखिये, पढ़िये और समझिये– कि वे होली के बारे में अपनी बात किस तरह कहते हैं और उन्होंने ऐसा क्या अनुभव किया कि उन्हें इतना सब कुछ लिखने के लिये विवश होना पड़ा। लेकिन वे अपनी रचनात्मक कृतियों में अपनी मोहब्बत का एक और रंग होली पर्व पर अपनी रचनाएँ करना नहीं भूले हैं। होली पर उनकी की गई रचनाएँ बड़ी ही सहज और सरल शब्दों में की गई हैं, यदि होली के ऊपर की गई उनकी "होली" शीर्षक से लिखी रचना को गम्भीरता से पढ़ा जाये तो सहज ही ये बात समझ आ जायेगी कि वे अपनी सार्थक रचनाएँ कितनी गम्भीरता से लिखा करते थे। अपनी रचनात्मक कृतियों में अपनी मोहब्बत का एक और रंग होली पर्व पर अपनी रचनाएँ करना नहीं भूले हैं। होली पर उनकी की गई रचनाएँ बड़ी ही सहज और सरल शब्दों में की गई हैं। यदि होली के ऊपर की गई उनकी "होली" शीर्षक से लिखी रचना को गम्भीरता से पढ़ा जाये तो सहज ही ये बात समझ आ जायेगी कि वे अपनी सार्थक रचनाएँ कितनी गम्भीरता से लिखा करते थे।

"होली"

''होली की बहार आई, फ़रहत[1] की खिली कलियाँ।
बाजों की सदाओं[2] सें, कूचे भरे और गलियाँ।।
दिलबर सेकहा हमने, टुक छोड़िए छलबलियाँ।
अबरंग गुलालों की, कुछ कीजिए रंगरलियाँ।।

होली में यही धूमें, लगती हैं बहुत भलियाँ।

होली की बहार आई, फ़रहत की खिली कलियाँ.......

है सब में मची होली, अब तुम भी ये चरचा लो।

रखवाओ अबीरे जां और मै को भी मँगवा लो।।

हम हाथ में लोटा लें, तुम हाथ में लुटिया लो।

हम तुमको भिगो डालें,तुम हमको भिगा डालो।।

होली में यही धूमें, लगती हैं बहुत भलियाँ।

होली की बहार आई, फ़रहत की खिली कलियाँ.......

है तर्ज़ जो होली की, उस तर्ज़हँसो–बोलो

जो छेड़ है इशरत की, अब तुम भी वही छेड़ो

हम डालें गुलाल ऐ जां! तुम रंग इधर छिड़को

हमबोले 'अ हा हा हो', तुम बोलो'उ हो हो हो'।।[1]

नज़ीर अकबराबादी ने सामाजिक लोक रंग को अपने शब्दों में बड़े ही सुन्दर अन्दाज़ में व्यक्त किया है, जिन्हें कहीं पर्व का नाम देकर वर्णित किया गया है। तो कहीं मेलों की व्याख्या में वर्णन देखने को मिल जायेगा। इतना ही नहीं उन्होंने सामाजिक जीवन के कुछ रंग ऐसे भी अपनी रचनाओं के माध्यम से व्यक्त किये हैं, जिनका विश्लेषण किया जाये तो हम सहसा स्तब्ध रह जायेंगे। हमारे अन्तर्मन से एक ही स्वर गूँजेगा–कि क्या ऐसा?

उन्होंने लोक जीवन के रंगों को ऐसा उभारा है कि सम्भवतः हमें उनकी कृतियों के पठन के पश्चात स्वयं ही एक नारा उद्घोषित करना पड़े–

---

1 'होली' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पुष्ठ 35.

शब्दार्थ : 1. फ़रहत–आनन्द, 2. सदाओं–सूफ़ीनामा

हमने आज तक के इतिहास में काफी कवियों, गद्यकार और लेखकों की रचनाएँ पढ़ी हैं और उनका अध्ययन करने के पश्चात् विश्लेषण किया है तो हमें ऐसा अनुभव हुआ कि कथित लेखक, कवि, रचनाकार या नाट्यकार ने जो भी रचनाएँ की हैं वे अपनी जाति के परिप्रेक्ष्य तक ही सीमित होकर रह गये हैं, लेकिन हिन्दुओं के व्यापारिक त्यौहार के रूप में विशेष पहिचान रखने वाले त्यौहार दिवाली पर भी नज़ीर अकबराबादी जी ने अपनी रचनाएँ बड़ी ही सटीक शब्दों में की हैं। उनके द्वारा रचित "दीवाली" शीर्षक वाली रचना इसका ज्वलन्त उदाहरण है। इस त्यौहार के सन्दर्भ में उनकी इस रचना को ही देखिये आप की स्वतः ही जानकारी में आ जायेगा कि वे कितने पारंगत लेखक थे।

दिवाली पर उन्होंने विस्तार से लिखा है–

"दीवाली की अदाएँ"

''हमें अदाएँ दीवाली की ज़ोर भाती हैं
कि लाखों झमकें हरेक घर में जगमगाती हैं
चिराग़ जलते हैं औरलौएँ झिलमिलाती हैं
खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गतबजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं

गुलाबी बर्फियों के मुँह चमकते फिरते हैं
जलेबियों के भी पहिये ढुलकते फिरते हैं
हरके दाँत से पेड़े अटकते फिरते हैं
इमरती उछले है, लड्डू ढुलकते फिरते हैं
खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गत बजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं

जो बालूशाही भी तकिया लगाये बैठे हैं
तो लौंज, खजले भी मसनद लगाये बैठे हैं
इलायची दाने भी मोती लगाये बैठेहैं
तिल अपनी रेवड़ी में ही समाये बैठेहैं

खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गत बजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं

दुकान सब में जो कमतर है और लंडूरी है
तो आज उसमें भी पकती कचौड़ी पूरी है
कोई जली कोई साबित कोई अधूरी है
कचौरी कच्ची है, पूरी की बात पूरी है

खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गत बजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं

औ' चिरागों की दुहरी बँध रही कतारें हैं
औ' हर सू कुमकुमे क़ंदीलें रंग मारेहैं
हुजूम भीड़ झमक शोरोगुलपुकारें हैं
अजब मज़ा है अजब सैर है बहारें हैं

खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गतबजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं

अटारी छज्जे दरो–बामपर बहाली है
दिवाल एक नहीं लीपने से खाली है
जिधर को देखो उधर रोशनी उजाली है
गरज ये क्या कहूँ, ईंट–ईंट पर दीवाली है

खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गत बजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं
जो गुलाबरूहैं सो हैं उनके हाथ में छड़ियाँ
निगाहें आशिकों की हार हो गले पड़ियाँ
झमक–झमक की दिखावट से अँखड़ियाँ लड़ियाँ
इधर चिराग, उधर छूटती हैं फुलझड़ियाँ
खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गतबजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं
कलम कुम्हार की क्या–क्या हुनर जताती है
कि हर तरह के खिलौने नये दिखाती है
चूहा अटेरे है चर्खा चूही चलातीहै
गिलहरी तो नौ रूई की पोइयाँ बनाती है
खिलौनेनाचे हैं, तस्वीरें गत बजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं
'नज़ीर' इतनी जो अब सैर है, अहा–हा–हा
फक़त दीवाली की सब सैर है, अहा–हा–हा
निशातो–ऐशो–तरबसैर है, अहा–हा–हा
जिधर को देखो अजब सैर है, अहा–हा–हा
खिलौने नाचे हैं, तस्वीरें गत बजाती हैं
बताशे हँसते हैं और खीलें खिलखिलाती हैं।।[1]

1 'होली' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 37–39.

नज़ीर साहब ने होली, दिवाली, दशहरा तथा बसन्त आदि हिन्दुओं के त्यौहारों की भाँति मुसलमानों के 'शव बरात' तथा 'ईदुल फ़ितर' का वर्णन अपनी कविताओं में बड़े ही अच्छे ढंग से किया है। इन पंक्तियों में देखिये कि नज़ीर अकबराबादी ने 'ईदुल फ़ितर' का वर्णन किस प्रकार किया है–

"ईद–उल–फ़ितर"

मुस्लिम धर्म में प्रत्येक वर्ष दो ईद मनायी जाती हैं जिन्हें सामान्यतः मीठी ईद और बकरा ईद के नाम से जाना जाता है, ये दोनों ईदें मुस्लिम धर्म में मीठी ईद या बकरीद के नाम से न कहकर ईद–उल–जुहा और ईद–उल–फ़ितर के नाम से प्रचलित हैं। ये दोनों ही ईदें मुस्लिम जाति में बड़े सम्मान के साथ मनायी जाती हैं। चाहे ईद–उल–जुहा हो या ईद–उल–फ़ितर दोनों ही ईदों पर मुसलमान लोग आपस में गले मिलकर अपनी खुशी की अभिव्यक्ति करते हैं, जिसे सामान्य अर्थों में कहा जाता है कि वे ईद पर आपस में गले मिलकर अपनी खुशी का इज़हार करते हैं। ईद वाले दिन बड़े व्यक्ति अपने से छोटे लोगों और बच्चों को अपनी प्रसन्नता की अभिव्यक्ति स्वरूप उपहार उन्हें देते हैं और इन्हीं उपहार स्वरूप दी जाने वाली प्रक्रिया को उर्दू में ईदी बोलते हैं।

नज़ीर साहब ने मुसलमान जाति से सम्बन्धित उनके लोकप्रिय और बहुप्रतीक्षित त्यौहार "ईद–उल–फ़ितर" पर भी अपनी रचना लिखकर सामाजिक लोक संस्कृति को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। चाहे ईद–उल–जुहा हो या ईद–उल–फ़ितर और चाहे शब बारात ही क्यों न हो।

उन सब त्यौहारों पर तो उन्होंने लिखा ही लिखा है। ईद–उल–फ़ितर पर वे लिखते हैं–

"ईद–उल–फ़ितर"

''है आबिदा[1]कोताअ़तो–तजरीद[2] कीखुशी
और ज़ाहिदों[3]को जुह्द[4]को तमहीद[5]की खुशी
रिन्द[6]आ़शिकों को है कोई उम्मीद की खुशी
कुछ दिलबरों के वस्ल की कुछ दीद की खुशी
ऐसी न शब–बरात न बक़रीद की खुशी
जैसी हर एक दिल में है इस ईद की खुशी

पिछले पहर से उठके नहाने की धूम है
शीरो–शकर[7]सिवय्याँपकानेकीधूमहै
पीरो–जवां को नेअ़मतें खाने की धूम है
लड़कों को ईदगाहके जाने की धूम है
ऐसी न शब–बरात न बक़रीद की खुशी
जैसी हर एक दिल में है इस ईद की खुशी

कोई तो मस्त फिरता है जामे–शराब से
कोई पुकारता है कि छूटेअ़ज़ाब[8] से
कल्ला किसी का फूला है लड्डू की चाब से
चटकारे जी में भरते हैं नाना–कबाब से
ऐसी न शब–बरात न बक़रीद की खुशी
जैसी हर एक दिल में है इस ईद की खुशी

क्या ही मुआनक़े[10] की मचीहै उलट–पलट

मिलते हैं दौड़–दौड़ के बाहम[10]झपट–झपट

फिरते हैं दिलबरों के भी गलियों में ग़ट[11]के ग़ट

आ़शिक मजे उड़ाते हैं हरदम लिपट–लिपट

ऐसी न शब–बरात न बक़रीद की ख़ुशी

जैसी हर एक दिल में है इस ईद की ख़ुशी

काज़ल हिना ग़ज़ब मिसी–ओ–पान की धड़ी

पिशवाज़ें सुर्ख़ सौसनी, लाही की फुलझड़ी

कुरती कभी दिखा कभी अंगिया कसी कड़ी

कह 'ईद–ईद' लूटे हैं दिल को घड़ी–घड़ी

ऐसी न शब–बरात न बक़रीद की ख़ुशी

जैसी हर एक दिल में है इस ईद की ख़ुशी

रोजों की सख्तियों में न होते अगरअसीर[12]

तो ऐसी ईद की न ख़ुशी होती दिल–पिज़ीर[13]

सब शाद हैं गदा[14]से लगा शाह–ता–वज़ीर[15]

देखा जो हमने खूब तो सच है मियाँ 'नज़ीर'

ऐसी नशब–बरात न बक़रीद की ख़ुशी

जैसी हर एक दिल में है इस ईद की ख़ुशी।।[1]

---

1 'ईदुलफ़ितर' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 32–33.

शब्दार्थ : 1. भक्तों, 2. उपासना, 3. कर्मकाण्डियों, 4. धार्मिक कृत्य, 5. पालन, 6. शराबी, 7. दूध–चीनी, 8. मुसीबत, 9. गले मिलना, 10. आपस में, 11. झुण्ड, 12. क़ैद, 13. आनन्दकारी, 14. भिखारी, 15. बादशाह से मन्त्री तक

मुसलमानों की दीवाली माने जाने वाले शव बारात के बारे में नज़ीर अकबराबादी ने लिखा है–

"शब–बारात"

''आलम के बीच जिस घड़ी आती है शब–बारात[1]
क्या–क्या जहूरे–नूर[2]दिखाती है शब–बारात
देखे है बन्दगी में[3]जिसे जागता तो फिर
फूली नहीं बदनमें समाती है शब–बारात
रोशन हैं दिल जिन्हों के इबादत के नूर से
उनको तमाम रात जगाती है शब–बारात
बख़्शिश[4] खुदा की राह में करते हैं जो मुहीब[5]
बरकत[6]हमेशा उनकी बढ़ती है शब–बारात
ख़ालिक[7] की बन्दगी करो और नेकियों के दम
यह बात हर किसी को सुनाती है शब–बारात
ग़ाफ़िल न बन्दगी से हो और ख़ैर से ज़रा[8]
हर लहजा यह सभों को जताती है शब–बारात
हुस्ने–अमल[9] करके जोभला आक़िबत[10] में हो
सबको ये नेक राह बताती है शब–बारात
लेकर अमीर हम्जा के हर बार नाम को
ख़ल्कत[11]को उनकी याद दिलाती है शब बारात
क्या–क्या मैं शब–बारात की खूबी कहूँ 'नज़ीर'
लाखों तरह की खूबियाँ लाती है शब बारात''[1]

---

1 'शब बारात' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 34.

शब्दार्थ : 1. मुसलमानों का एक त्यौहार, जिसमें दिवाली जैसी ख़ुशियाँ मनायी जाती हैं, 2. रोश्नी की चहल–पहल, 3. पूजा/अभ्यर्थना, 4. ख़ैरात/दान पुण्य, 5. प्रेमीजन, 6. समृद्धि, 7. ईश्वर, 8. अभ्यर्थना, 9. शुभ कार्य, 10. परलोक, 11. संसार

वे हिन्दुओं के चिर परिचित त्यौहार रक्षा बन्धन, जिसे आम जन मानस में राखी के नाम से जाना जाता है, के बारे में क्या लिखते हैं? उनकी इन पंक्तियों में देखिये–

"राखी"

''चली आती है अब तो हर कहीं बाजार की राखी
सुनहरी, सब्ज़[1], रेशम, ज़र्द औ गुलनार[2] की राखी
बनी है गो कि नादिर खूब[3] हर सरदार की राखी
सलूनों में अजब रंगीं हैं उस दिलदार कीराखी
न पहुँचे एक गुल[4] को यार जिस गुलज़ार[5] की राखी
अयाँ है[6]अब तो राखी भी,चमन भी,गुल भी,शबनम भी
झलक जाता है मोती औ झलक जाता हैरेशम भी
तमाशा है अहा–हा–हा, गनीमत है येआलम भी
उठाना हाथ, प्यारे, वाह–वा, टुक देख लें हम भी
तुम्हारी मोतियों की औ ज़री के तार की राखी
मची है हर तरफ क्या–क्या सलूनों की बहार अब तो
हरेक गुलरू[7] फिरे है राखी बाँधे हाथ में खुश हो
हवस[8] जो दिल में गुज़रे है कहूँ क्या आह में तुमको
यही आता है जी में, बन के बाम्हन[9] आज तोयारो
मैं अपने हाथ से प्यारे के बाँधूं प्यार की राखी
हुई है ज़ेबो–ज़ीनत[10] और खूबाँ[11] को तो राखी से
लेकिन तुमसे ऐ जान और कुछ राखी के गुल फूले
दिवानी बुलबुलें हों देख गुल चुनने लगीं तिनके

तुम्हारे हाथ ने, मेहंदी ने, अंगुश्तों[12] ने, नाखुन ने

गुलिस्ताँ की, चमन की, बाग़ की गुलज़ार[13] की राखी

अदा से हाथ उठने में गुले–राखी[14] जो हिलते हैं

कलेजे देखने वालों के क्या–क्या आह छिलते हैं

कहाँ नाजुक ये पहुँचे[15] और कहाँ ये रंग मिलते हैं

चमन में शाख पर कब इस तरह के फूलखिलते हैं

जो कुछ ख़ूबी में है उस शोख़ गुल रुख़सार[16] की राखी

फिरे हैं राखियाँ बाँधे जो हरदम हुस्न के मारे

तो उनकी राखियों को देख, ऐ जाँ, चाव के मारे

पहन जुन्नार[17] और क़श्का[18] लगा माथे ऊपर वारे

'नजीर' आया है बाम्हन बन के राखी बाँधने प्यारे

बँधा लो उससे तुम हँस कर अब इस त्यौहार की राखी''[1]

शिशिर ऋतु के पश्चात् जब मौसम करवट लेता है और चहुँदिस में रंग–बिरंगे फूलों की बहार आती है तो कैसा लगता है। इसके बारे में नज़ीर साहब लिखते हैं–

---

1 'राखी' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 40–41.

शब्दार्थ : 1. हरी, 2. अनार के फूलों जैसी सुर्ख, 3. हाँलाकि बहुत खूब बनी है, 4. फूल, 5. बाग, अपभ्रंश, 10. श्रृंगार और सजावट, 11. सुन्दरियाँ, 12. उँगलियाँ, 13. रौनकदार, 14. राखी के फूल, 15. कलाई, 16. फूल जैसे बालों वाली उस चंचल सुन्दरी की राखी, 17. नेऊ, 18. तिलक

"बसन्त"

''आने को आज धूम इधर है बसन्त की
कुछ तुमको मेरी जान खबर है बसन्त की
होते हैं जिससे ज़र्द ज़मीं–ओ–ज़माँ[1] तमाम
ऐ मेहर तलअतो[2] वो सहर[3]है बसन्त की
लचके है ज़र्द जामा में[4] ख़ूबाँ[5]की जो कमर
उसकी कमर नहीं, वो कमर है बसन्तकी
जोड़ा बसन्ती तुमको सुहाता नहींज़रा
मेरी नज़र में है वो नज़र है बसन्त की
आता है यार तेरा वो होके बसन्त रू
तुझको भी कुछ'नज़ीर' ख़बर है बसन्त की!''[1]

3.नज़ीर अकबराबादी का सामाजिक जीवन एवम् मेलों पर दृष्टिपात :

आगरा भारतवर्ष के उत्तर प्रदेश राज्य में निःसन्देह स्थापित हो, किन्तु आगरे का क्षेत्र ब्रज के क्षेत्र की परिधि में स्थित है और जब ब्रज के प्रदेश अर्थात् ब्रज प्रदेश की बात हो तो यहाँ के मेले ठेलों की चर्चा न हो ये कैसे हो सकता है? आगरा में आगरा के चारों कोनों पर भगवान शिव के मन्दिर स्थापित हैं, जिनमें हिन्दू धर्म के लोगों द्वारा नियमित पूजा अर्चना की जाती है। सावन में तो इन चारों

---

1 'बसन्त' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 42.

शब्दार्थ : 1. ज़मीन और ज़माना/धरती और समय, 2. खूब सूरत रूपवान, 3. सुबह/भोर, 4. पीली पोशाक, 5.सुन्दरियों की।

ही मन्दिरों का महत्व उस समय और बढ़ जाता है। जब सावन का प्रत्येक सोमवार अलग–अलग शिव मन्दिरों के रूप में अपनी महिमा मण्डित करता है।

इसी श्रृंखला में सावन का पहला सोमवार "राजेश्वर महादेव" मन्दिर की पूजा अर्चना के निमित्त है। यहीं से सावन में शुभारम्भ होता है–भगवान शिव की पूजा अर्चना का। सावन का दूसरा सोमवार "बल्केश्वर महादेव" मन्दिर के नाम से शिव पूजा के लिए जाना जाता है। इस सोमवार की पूजा के लिए भगवान शिव के श्रद्धालू उस मेले की पूर्व संध्या पर अर्थात् रविवार की शाम से शहर के चारों कोनों पर स्थित शिव मन्दिरों–सर्वप्रथम राजेश्वर शिव मन्दिर, उसके बाद पृथ्वीनाथ शिव मन्दिर उसके बाद कैलाश शिव मन्दिर होते हुए अन्त में बल्केश्वर महाराज शिव मन्दिर तक पैदल परिक्रमा देकर पहुँचते हैं और सावन के तीसरे सोमवार को भगवान शिव की दो जलहरी वाले शिव मन्दिर की पूजा होती है, जिसे कैलाश महादेव मन्दिर के नाम से जाना जाता ह। इसके बाद सावन के अन्तिम अर्थात् चौथे सोमवार को पृथ्वीनाथ महादेव मन्दिर की पूजा अर्चना की जाती है। पूजा की यही परिपाटीआज भी जारी है। इन्हीं चारों मन्दिरों पर बड़ी ही ज़ोर के भव्य मेले लगते हैं और इन्हीं चारों मन्दिरों की पूजा अर्चना को जन–मानस द्वारा एक उत्सव के रूप में मनाया जाता है।

ब्रज क्षेत्र में इन मेलों का बड़ा ही महत्व है। ब्रज क्षेत्र में ये मेले नगर और गाँव के विभिन्न क्षेत्रों में किसी न किसी रूप में आयोजित किये जाते हैं।

नज़ीर अकबराबादी को मेले और विभिन्न पर्वों पर आयोजित होने वाले कार्यक्रमों को देखने का बड़ा शौक था। इसलिए वे प्रायः प्रत्येक मेले को स्वयं देखने जाते थे और आनन्दित होते थे। जिसका वर्णन नज़ीर साहब ने अपनी

विभिन्न रचनाओं यथा–बल्देव जी का मेला, कंस का मेला, लल्लू जगधर का मेला, हजरत सलीम चिश्ती का उर्स/मेला तथा आगरे की यमुना नदी पर प्रतिवर्ष और नियमित आयोजित होने वाले तैराकी मेले पर भी अपनी रचना की है।

आगरा के तैराकी मेले में समाज के प्रत्येक वर्ग के लोग अपने–अपने तैराकों की टोलियाँ अपने–अपने समूह की निशानी (झंडे) लेकर ढोल–बाजे के साथ यमुना नदी के दोनों किनारों पर इकट्ठे होते थे और फिर उस यमुना नदी में जल का आचमन करके उन समूहों के विभिन्न तैराके यमुना नदी में तैरते थे। यह उस समय वह खूबसूरत मेला हुआ करता था, जिसे देखने के लिए अपने ही लुक में सजधज कर नज़ीर अकबराबादी भी वहाँ जाते थे। वे उस तैराकी के कथित मेले से इतने प्रभावित हुए कि वे उस पर भी अपनी रचना सजीव दृष्टि के रूप में करने से नहीं चूके। तैराकी के मेले को उन्होंने अपने शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया।

"आगरे की तैराकी'' (''आगरे की तैराकी मेला'')

''जब पैरने की रुत में दिलदार पैरते हैं
आ़शिक भी साथ उनके ग़मख़्वार पैरते हैं
भोले सयाने नादाँ हुशियार पैरते हैं
पीरो–जवान लड़के अ़य्यार पैरतेहैं
अदना[1] ग़रीब मुफ़लिस[2] जरदार[3] पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ये यार पैरते हैं
तिरबेनी में अ हा हा होती हैं क्या बहारें
ख़िलक़त[4] के ठठ, हज़ारों पैराक की क़तारें
पैरें, नहावें, उछलें, कूदें, लड़ें, पुकारें
ले ले वो छींट ग़ोते खा खा के हाथ मारें

क्या–क्या तमाशे कर कर इज़हार[5] पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ऐ यार पैरते हैं

जमना के पाट गोया सहने–चमन हैं बारे
पैराक उसमें पैरें जैसे कि चाँद तारे
मुँह चाँद के से टुकड़े तन गोरे प्यारे–प्यारे
परियों से फिर रहे हैं मँझधार और किनारे

कुछ बार पैरते हैं कुछ पार पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ऐ यार पैरते हैं

कितने खड़े हैं पैरें अपना दिखा के सीना
सीना चमक रहा है हीरे का ज्यूँ नगीना
आधे बदन पे पानी आधे पे पसीना
सर्वों[6] का बह चला है गोया कि इक क़रीना[7]

दामन कमर पे, बाँधे दस्तार[8]पैरतेहैं
इस आगरे में क्या–क्या ऐ यार पैरते हैं

कुछ नाच की बहारें पानी के कुछ किनारे
दरिया में मच रहे हैं इन्दर के सौ अखाड़े
लबरेज़[9] गुलरुखों[10] से दोनों तरफ़ कगारे
बजरे व नाव चप्पू डोंगे बने निवाड़े

इन जमघटों से होकर सरशार पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ऐ यार पैरते हैं

नावों में वह जो गुल–रू[11]नाचों में छक रहे हैं
जोड़े बदन में रंगीं, गहने भभक रहे हैं

तानें हवामें उड़तीं तबले खड़क रहे हैं
ऐ–तरब[12] की धमें, पानी छपक रहेहैं
सौ ठाठ के बनाकर अतवार[13]पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ऐ यार पैरते हैं

हर आन बोलते हैं सय्यद कबीर की जै
फिर इसके बाद अपने उस्ताद पीर की जै
मोरो–मुकुट कन्हैया जमुना के तीर की जै
फिर ग़ोल के सब अपने ख़ुर्दो–कबीर[14] की जै
हर दम ये कर ख़ुशी की गुफ़्तार पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ये यार पैरते हैं

क्या–क्या 'नजीर' के यॉं के हैं पैरने केबानी[15]
है जिनके पैरने की मुल्कों में आन मानी
उस्ताद और ख़लीफा शागिर्द यारे–जानी
सब ख़ुश रहें, है जब तक जमुना के बीच पानी
क्या–क्या हँसी–ख़ुशी से हर बार पैरते हैं
इस आगरे में क्या–क्या ये यार पैरते हैं''[1]

---

1 'आगरे की तैराकी' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 76/78.

शब्दार्थ : 1. छोटे, 2.निर्धन, 3.धनी, 4.दुनिया, 5.दिखाकर, 6.सर्व ईरान का एक सीधा और सुन्दर वृक्ष होता है, 7.पंक्ति, 8.पगड़ी, 9.भरे हुए, 10.सुन्दर व्यक्तियों, 11.सुन्दरियों, 12.रास–रंग, 13.ढंग, 14.छोटे–बड़े, 15. आविष्कारक

4. नज़ीर अकबराबादी और कृषि जीवन :

नज़ीर अकबराबादी जी ने अपनी रचनाओं में सन्तरे का बड़ी ही खूबसूरती से वर्णन किया है –

"सन्तरा"

क्या–क्या हरेक दरख्त पे आया है सन्तरा।
फल जोर ही मजे का कहाया है सन्तरा।।
नरंगी और अनार कब अच्छे लगें उसे।
जिस रसभरी के दिल में समाया है सन्तरा।।

यक बाग हुस्न का है,जवानी है उसका नाम।
वाँ से हमारे हाथ ये आया है सन्तरा।।
जोबन के बागबान ने, उठती बहार से।
ताजा अभी ये हमको भिजाया है सन्तरा।।

कूल्हे ही लग रहा है हमारे तमाम उम्र।
जिसको कभी हमने ये दिखाया है सन्तरा।।
जब तो 'नज़ीर' मैंने ये हँस कर कहा उसे।
मेवा खुदा ने खूब बनाया है सन्तरा।।

तरबूजे की बनाबट, उसके मिठास और फायदे का बखान करते हुए नज़ीर अकबराबादी ने इतना अच्छा लिखा है कि कुछ कहते नहीं बनता।इतना ही नहीं

उन्होंने''तरबूज'' शीर्षक से लिखी अपनी रचना में तो सारा प्रकृति सौन्दर्य और उसके रसास्वादन का वर्णन इस प्रकार किया है जैसे वे तरबूज खाते जा रहे हों और कोई उनसे उस तरबूजे का स्वाद पूछता जा रहा हो और वे उनका स्वाद बताते जा रहे हों। उन्होंने कितनी रोचकता के साथ उसे व्यक्त किया है।

"तरब्ज"

क्यों न हो सब्ज़ जर्मुरद केबराबर तरबूज।
करता है खुश्क कलेजे के तईंतर तरबूज।।
दिल की गर्मी को निकाले है ये अक्सर तरबूज।
जिस तरफ देखिये बेहतर से है बेहतर तरबूज।।
अब तो बाजार में बिकते हैं सरासर तरबूज.........
मीठे और सर्द हैं इतने कि ज़रा नाम लिये।
होंठ चिपके हैं जुदा, दाँत हैं कड़कड़ बजते।।
शब को दो—चार मँगाकर जो तराशेमैंने।
क्या कहूँ मैं कि मिठाई में वो कैसे निकले।।
कोई ओला, कोई मिसरी, कोई शक्कर तरबूज.........
मुझसे कल यार ने मँगवाया जो देकरपैसा।
उसमें टाँकी जो लगाई तो वो कच्चा निकला।।
देख, त्योरी को चढ़ा, हा के ग़ज़ब, तैश में आ।
कुछ न बन आया,तो फिर घूर के यूँ कहने लगा।।
क्यूँ बे लाया है उठाकर ये मेरा सर तरबूज............

जबकहा मैंने, मियाँ यह तो नहीं है कच्चा।
और कच्चा है तो मैं पेट में पैठा न तोथा।।
इसके सुनते ही ग़ज़ब हो के वो लाल अंगारा।
लाठी–पाठी जो न पाई तो फिर आखिर झुंझला।।
खींच मारा मेरे सीने पे उठा कर तरबूज.............
क्यों मियाँ हमको तो तुम करते हो ककड़ी खीरा।
कोसना हर घड़ी हर आन का होता है बुरा।।
तुम को तो पड़ गया मिलने का रकीबों से मजा।
झूठी कस्में ये मेरे सिर की जो खाते हो भला।।
क्या मेरे सर का किया तुमने मकर्रर तरबूज...........
प्यार से जब है वहतरबूज कभीमँगवाता।
छिल्का उसका मुझे टोपी की तरह देवे पिन्हा।।
और यह कहता है, फेंका तो चखाऊँगामजा।
क्या कहूँ यारो, मैं उस शोख के डर का मारा।।
दो–दो दिन रक्खे हुए फिरता हूँ सर पर तरबूज...........
रात उस शोख से मैंने ये पहेली में कहा।
भीगी बकरी किसे कहते हैं, बताओ तो भला।।
इस पहेली के तईं सुन के बड़े सोच में आ।
जब न समझा तो कहा हार के, अब तू ही बता।।
हँस के जब मैंने कहा, ऐ मेरे दिलबर तरबूज...........[1]

[1] नज़ीर ग्रन्थावली', लेखक : डॉ. नज़ीर मुहम्मद / प्रकाशक : उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ 537.

5. नज़ीर अकबराबादी मात्र एक साहित्यकार ही नहीं, बल्कि एक व्यापार वृद्धि के प्रवर्तक भी :

नज़ीर जब अपने घर (ताजगंज) से अपने घोड़े पर माईथान राजा विलासराय के बच्चों को पढ़ाने जाते तब रास्ते में बालक, वृद्ध, फेरी वाले, दुकानदार उनका बेसब्री से इन्तज़ार करते थे। कभी उन्हें ककड़ी बेचने वाला पकड़ लेता। तो कभी नारंगी और कभी तरबूज बेचने वाला। वे उनसे कुछ सुनाने का आग्रह करते तो नज़ीर ककड़ी, नारंगी और तरबूज पर ही कविता कहने लगते। दूसरे दिन वही फेरी वाले नज़ीर की उन कविताओं को याद कर गाते और अपना सामान बेचते। इनके लोक जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना उद्घृत करना उचित समझता हूँ कि जब एक बार एक ककड़ी बेचने वाला सुबह से शाम तक अपनी ककड़ियों की बोहनी भी न कर पाया था और दुखी होकर वह निराशा के अन्धकार में गोते लगाते हुए अपने घर वापस जा रहा था कि तभी अचानक कविवर नज़ीर साहब का वहाँ से गुजरना हुआ कि उन्होंने उस ककड़ी बेचने वाले के लटके हुए चेहरे के बारे में उससे पूछा। तो उसने उन्हें पूरी बात उन्हें विस्तार से बतायी, जो उन्होंने बड़े ग़ौरसुनी और उस ककड़ी बेचने वाले के मर्म को आत्मसात करते हुए उसका समाधान ढूँढ़ निकाला।

फिर उन्होंने मुस्कुराकर उसे इस तरह बताया कि भाई तुम इन पंक्तियों को गाकर अपनी (ककड़ियाँ) बेचो, जिसकी कविता का शीर्षक उन्होंने 'आगरे की ककड़ी' ही रखा। जो इस प्रकार हैं–

“आगरे की ककड़ी”

”पहुँचे न इसको हरगिज़काबुल दरे की ककड़ी
ने पूरब और नपच्छिम, खूबी भरे की ककड़ी।
ने चीन के परे की और ने वरे की ककड़ी।
दक्खिन की और ने हरगिज,उससे परे की ककड़ी।
क्या खूब नर्मो नाज़ुक, इस आगरे कीककड़ी।
और जिसमें ख़ास काफ़िर, इस्कन्दरे की ककड़ी.........

इन पंक्तियों ने नज़ीर ने ककड़ी की तुलना लैला की उंगलियों से की है, देखिये–

”क्या प्यारी–प्यारी मीठी और पतली पतलियाँ हैं।
गन्ने की पोरियाँ हैं, रेशम की तकलियाँ हैं।
फ़रहाद की निगाहें, शीरीं की हँसलियाँहैं।
मजनू की सर्द आहें, लैला की उंगलियाँ हैं।“
या ख़ूब नर्मो नाज़ुक, इस आगरे की ककड़ी।
और जिसमें ख़ास काफ़िर, इस्कन्दरे की ककड़ी......

छूने में बर्गे गुल हैं, खाने मेंकुरकुरी है।
गर्मी के मारने को एक तीर की सरीहै।।
आँखों में सुख कलेजे, ठंडक हरी भरी है।
ककड़ी न कहिए इसको, ककड़ी नहीं परी है।।
या ख़ूब नर्मो नाज़ुक, इस आगरे कीककड़ी।
और जिसमें ख़ास काफ़िर, इस्कन्दरे की ककड़ी.....

बेल उसकी ऐसी नाजुक, जूं जुल्फ़ पेच खाई।
बीज ऐसे छोटे–छोटे, ख़शख़ाश या कि राई।।
देख उसकी ऐसी नरमी बारीकी और गुलाई।
आती है याद हमको महबूब कीकलाई।।
या खूब नर्मो नाजुक, इस आगरे की ककड़ी।
और जिसमें खास काफिर, इस्कन्दरे की ककड़ी.....

लेते हैं मोल इसको गुल की तरह से खिलके।
माशूक़और आशिक़ खाते हैं दोनों मिलके।।
आशिक तो हैं बुझाते शोलों को अपने दिलके।
माशूक हैं लगाते, माथे पै अपनेछिलके।।
या खूब नर्मो नाजुक, इस आगरे की ककड़ी।
और जिसमें खास काफिर, इस्कन्दरे की ककड़ी.....

जो एक बार यारो, इस जा की खाये ककड़ी।
फिर जा कहीं की उसको हरगिज न भाए ककड़ी।
दिल तो 'नज़ीर' गश है यानी मंगाए ककड़ी।
ककड़ी है या कयामत, क्या कहिए हाय ककड़ी।
या खूब नर्मो नाजुक, इस आगरे की ककड़ी।
और जिसमें खास काफिर, इस्कन्दरे की ककड़ी.....[1]

---

1 'नज़ीर ग्रन्थावली', लेखक : डॉ. नज़ीर मुहम्मद। प्रकाशक : उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ 535से 537.

नज़ीर अकबराबादी के काव्य का विश्लेषण

जिस प्रकार बड़े–बड़े कवियों, शायरों और लेखकों ने चन्द्रमा के सौन्दर्य का वर्णन अपनी रचनाओं में किया है। उससे एक बार को तो सभी अभिभूत हो जाते हैं और सभी हाँ में हाँ मिलाते हैं, किन्तु वास्तविकता तब सामने आती है जब चन्द्रमा की वास्तविक स्थिति का गम्भीरता से अध्ययन किया जाता है।

शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा से परे हठकर जब हम कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा पर विचार करते हैं तो उसके गुणों के साथ ही साथ अवगुणों पर भी चर्चा की जाती है। तब सत्यता और वास्तविकता सामने निकलकर आती है। जब तक किसी लेखक अथवा रचनाकार की रचनाओं के गुण–दोषों का विश्लेषण नहीं किया जायेगा। तब तक वास्तविक स्थिति स्पष्ट न हो सकेगी, क्योंकि जब तक किसी व्यक्ति का कोई सटीक विरोध करने वाला नहीं होगा। तब तक उस लेखक को अपने लेखन में सुधार करने और आने वाले लेखकों अथवा रचनाकारों को उससे सीख लेकर अच्छे नव साहित्य का सृजन करने की जानकारी कैसे मिलेगी? हम समझते हैं कि समीक्षा तो प्रत्येक व्यक्ति की होनी ही चाहिए। चाहे उसे बुरा ही क्यों ना माना जाय, लेकिन नियति का एक नियम है कि जब विपक्ष सशक्त होता है। तभी सरकार अच्छा काम करती है, जिसका लाभ जनता को मिलता है। ठीक वैसे ही जब किसी लेखक अथवा रचनाकार की समीक्षा की जाती है तो एक बार को कटु सत्य होने के विरोध का सामना करना कठिन पड़ता है, लेकिन उस परीक्षा से लेखक के गुजरने से उसमें आत्मसम्मान और आत्म विश्वास की वृद्धि होती है,

यदि कोई सही बात कहने वाला ना होगा या सभी चाटुकार यानि ''यस मैन'' या ''आया राम, गया राम'' होंगे तो अच्छे कृतित्व की स्थापना कदापि न हो सकेगी। कबीरदासजी ने भी कहा है कि–

''निन्दक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय।।''

अर्थात् जो हमारी निन्दा करता है। उसे अपने अधिकाधिक पास ही रखना चाहिए, क्योंकि वही एक ऐसा व्यक्ति है, जो बिना पानी और साबुन के हमारे स्वभाव को साफ करता है (सन्दर्भ : ज्ञान जगत काम पर कबीरदास के दोहे अर्थ सहित हिन्दी में)।

हिन्दी में आलोचना का प्रारम्भ 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में भारतेन्दु युग से ही माना जाता है। जब समालोचना शब्द निकलकर आया, जिसका अर्थ होता है किसी चीज के गुण–दोषों की विवेचना करना,जिसके लिए अँग्रेजी में क्रिटिज़्म शब्द का प्रयोग किया जाता है, जिसकी सहायता से किसी भी रचना का आँकलन आलोचक द्वारा किया जाता है, जिसे सामान्य भाषा में समीक्षा कहा जाता है।

जन–जन में नये विचारों को प्रचारित किये जाने के लिए पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन की शुरुआत जब भारतेन्दु युग में हुई। तब उस युग की कृतियों की समीक्षाएँ प्रकाशित होना शुरू हुआ। जब लाला श्रीनिवासदास की नाट्य कृति से 'संयोगिता स्वयंवर' की विस्तृत समीक्षा चौधरी प्रेमधन ने सन् 1882 में आनन्द कादम्बिनी में प्रकाशित की थी और 'संयोगिता स्वयंवर' नाटक की समीक्षा बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप' में प्रकाशित की।

नज़ीर का स्वरूप हिन्दी साहित्य के कृष्ण भक्ति कालीन सन्तों/सूफ़ियों की श्रेणी में आता है, जिस समय नज़ीर अकबराबादी ने अपनी रचनाओं को लिखने की गति प्रदान की। उस समय भारत में मुगलकाल का पतन होने की शुरुआत हो चुकी थी। राजा प्रायः छोटे–छोटे साम्राज्यों पर राज कर रहे थे। जहाँ राजकवियों को तो जनता के दुख–दर्दों व आमजीवन की समस्याओं पर लिखने का समय ही नहीं मिलता था और सही मायने में वे जनता से जुड़ने में रुचि भी नहीं रखते थे, क्योंकि राजा या बादशाहों से जुड़े रहने में उनका लाभ होता था और उनके अपने राजाओं की छविगान करने से राजाओं के प्रसन्न होने पर उन्हें अच्छी धन–दौलत पुरूस्कार स्वरूप मिलती थीं, जहाँ उनकी व्यक्तिगत रुचि निहित थी। राजाओं के यशोगान में लिखी गयी रचनायें, गीत, कविता और शेरों की जब उसी स्तर के राज कवियों द्वारा अभिव्यक्तियाँ की जाती थीं। तो उनकी प्रशंसा और ख्याति एक सीमित क्षेत्र तक ही सीमित होकर रह जाती थी। वे एक–दूसरे के शेरों की प्रशंसा किया करते थे, लेकिन नज़ीर अकबराबादी को कोई शायर होना ही नहीं स्वीकारता था। जबकि नज़ीर अकबराबादी को राजमहल में जाकर राजाओं या बादशाहों की प्रशंसा में शेर पढ़ना कदापि पसन्द नहीं था। नज़ीर अकबराबादी ने जो भी लिखा वह जनता और जनसामान्य से जुड़े लोगों के साथ ही कृष्ण भक्ति के लिये ही लिखा। सही अर्थें में उनकी अपनी आठ भाषाओं के योग से की गई रचनाएँ न तो ठेट उर्दू की होती थीं और ना ही हिन्दी की। ना ही अरबी की होती थीं । ना ही फ़ारसी की, लेकिन ब्रज की मिश्रितता होने के कारण उनकी रचनाओं को लोग उर्दू भाषा की कविता अवश्य मान लिया करते थे। जबकि वे रचनायें पूरी तरह से उर्दू की होती ही नहीं थीं, लेकिन उनकी लेखनी चलती बिल्कुल सटीक थी। वे जो कुछ भी लिखते थे। गाते थे या कहते थे, बिल्कुल खुलकर और निर्भीक और निडर होकर गाते थे। इस सम्बन्ध में हमें दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन

निदेशालय की सतीशचन्द द्वारा लिखी गयी (1707 से 1740 के मध्य) उत्तर मध्यकालीन भारत नाम की पुस्तक के पृष्ठ 5 पर प्रकाशित तत्कालीन भारतवर्ष में बोली जाने वाली भाषाओं के बारे में 14वीं सदी में अमीर खुसरो की किताब 'नुहसपेहर' में की गयी चर्चा मिलती है, जिसमें ये कहा गया है कि दिल्ली के आसपास के क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा को हिन्दवी कहते थे, जो प्राचीन काल से ही बोली जाती थी।

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में सामाजिक विरह–वेदना, समाज का दर्शन, भक्तिभाव, आस्था और श्रद्धा का दर्शन होता है। नज़ीर साहब ने जो भी रचनायें रचीं। चाहे वे शेर हों या ग़ज़ल। या ग़ज़लों के अशार ही क्यों न हों। वे सभी समाज में व्याप्त अव्यवस्थाओं, विलासिता में साधनों का दुर्प्रयोग और जनमानस की दुर्दशाओं को केन्द्रित करते हुयीं। अपनी रचनाओं के माध्यम से उन्होंने समाज में लोगों की दुर्दशाओं को केन्द्रित करके, रचनायें रचकर लोगों में लोक चेतना पैदा किये जाने को उद्बोधन भी किया। उन्होंने जनमानस को इस बात के लिये भी प्रेरित किया कि वे समाज में व्याप्त अव्यवस्थाओं को देखकर व्यथित न हों, बल्कि उन सब से सीख लेकर स्वयं को सँभालें। उनका सामना करें और जन–जन में नयी चेतना का संचार करके समाज को उन्नति के पथ पर अग्रसित करें।

उल्लेखनीय हैकि सम्भवतः उन्हीं की रचनाओं से ओत–प्रोत होकर हिन्दी के छायावादी राष्ट्रकवि मैथिली शरणगुप्त ने भी अपनी ये रचना भी इसीलिये की होगी कि–

"नर हो, न निराश करो मन को।
कुछ काम करो,कुछ काम करो।।

जग में रहकर कुछ नाम करो।
यह जन्म हुआ किस अर्थ अहो।।
समझो जिसमें यह व्यर्थ न हो।
कुछ तो उपयुक्त करो तन को।।
नर हो, न निराश करो मन को........

इस रचना को रचे जाने से लगभग एक शतक से भी अधिक समय पूर्व अपनी रचनाओं में लोक चेतना का नज़ीर अकबराबादी ने श्रीगणेश किया। जीवनके अन्तिम क्षणों में दुखद परिस्थितियों में समस्याओं का सामना करने के परिणामस्वरूप भी नज़ीर अकबराबादी विचलित न होकर अपनी रचना यात्रा को निरन्तर जारी रखे रहे और अपने कृतित्व से हिन्दी साहित्य जगत के धरातल पर साहित्य की सेवाकरते रहे। उन्हें राजशाही ठाठ–बाट में अपना जीवन व्यतीत करने के लिये राजे–रजवाड़ों से मिले निमन्त्रण के बाद भी उन्होंनेउन्हें सहज स्वीकार न करके वे जन सामान्य से जुड़े रहे और वे उसी के इर्द–गिर्द अपनी रचनाओं को रचते रहे।

दुःख के सन्दर्भ में उल्लेखनीय होगा कि सामान्यता दुःख के दो रूप होते हैं, जिनमें पहला वह रूप होता है, जो जगजीवन की विषमता और वेदना से युक्त होता हैऔर दूसरा वह रूप होता है जो किसी अपार्थिव अनुभूति से मिलता है, जिसमें दुख के मूल में कहीं न कहीं वस्तु जगत की पीढ़ा का बोध रहता है।

नज़ीर अकबराबादी के दुख में भी जग जीवन में व्याप्त पीढ़ा का बोध अभिव्यंजित हुआ है। उन्होंने केवल दुखों की ही रागिनी का राग नहीं अलापा, बल्कि समाज को भी सचेत किया और उनमें लोक चेतना का संचार किया।

1. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं मं समाहित भाव पक्ष और कला पक्ष :

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का भाव पक्ष और कला पक्ष इस प्रकार हैं–

1.1 भाव पक्ष क्या है?

अब हमारे मन में एक बात ये आती है कि आखिर भाव पक्ष होता क्या है?

भाव पक्ष किसी भी कविता का वह पक्ष होता है, जो किसी कवि की रचना के उस प्रस्तुतिकरण का एक पक्ष होता है, जिसमें कवि की रचनाओं में समाहित व्याकरणात्मक मूलों यथा– कल्पना, रस, विचार और सन्देशों का मिश्रण समाहित होता है। भाव पक्ष को कविता का मूल आधार और अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है।

1.2 नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का भाव पक्ष :

किसी भी कवि की रचनाओं का विश्लेषण करने के लिए सबसे पहले हमें उनकी रचनाओं के भाव पक्ष और कला पक्ष पर मन्थन करना होगा।

किसी भी कविता, गीत या गद्य की रचनाओं के लिये रचनाकार को सर्वप्रथम शब्दों को संयोजित करने के लिये किसी प्रकार के चिन्तन की आवश्यकता तो होती ही है। साथ ही उसके अनुभव उससे भी कहीं अधिक उसे प्रभावित करते हैं। कवि की रचना स्वयं ही बता देती है कि कवि के रहन–सहन का वातावरण क्या है? वह किस परिवेश में पला–बढ़ा है, किन्तु ऐसा भी नहीं है जिसमें उसे दुख–सुख, आचार–विचार, चेतना–अवचेतना मात्र ही नहीं, बल्कि उसकी मुक्तावस्था भी कविता को जन्म देती है। अनुभूतियों का एक स्तर वह भी होता है, जब वह

उस स्तर पर पहुँचकर स्वयं को भूल जाता है और अपनी निजता को लोक व्यवहार में खो बैठता है। या फिर वह सत्ता और सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध खड़ा हो जाता है। वहाँ वह विचारवान मानव जैसे कवि हो जाता है। संकुचन समाप्त प्रायः हो जाता है। फिर जैसा मन, वैसी कविता। व्यक्ति यदि मानसिक रूप से धार्मिक है तो धार्मिक कवितायें रचित होंगी। राजनीतिक हैं तो राजनीतिक कवितायें। किसी का प्रेम से सम्बन्ध है तो प्रेमान्ध कविताओं की ही उत्पत्ति होगी। और यदि रचनाकार उत्पीड़ित है तो प्रताड़ना के खिलाफ़ चीखती–चिल्लाती कवितायें सामने निकलकर आयेंगी अर्थात् देश, काल और परिस्थितियाँ कविताओं को सदैव प्रभावित करते हैं।

कवि तो प्रत्येक व्यक्ति जन्म से ही होता है, यदि उसे होने दिया जाए, किन्तु सच यह है कि प्रत्येक बच्चा जैसे–जैसे बड़ा होता जाता है, ठीक वैसे ही वैसे वह सांसारिक उलझनों से परिचित होता जाता है। उसका अपना मूल समाप्त होता जाता है और वह बाहरी झंझटों में उलझकर रह जाता है। उसकी अपनी वास्तविक बचपनता समाप्त होती चली जाती है, लेकिन कुछ बच्चे ऐसे भी होते हैं जो अनेकों उलझनों में पड़कर भी अपने कविपन को वैचारिक उन्नति परक शब्द देकर कविता को जीवन्त कर जाते हैं।

कविता किसी कवि की अपनी ही बात हो। यह भी आवश्यक नहीं, किन्तु कविता अनुभूति अर्थात् अहसास और संवेदना का परिणाम भी हो सकती है। कविता अपने दुख–दर्द से भी प्रेरित हो सकती है। इसे चेतावनी देना सम्भवतः ही तर्कसंगत होगा। यह आवश्यक नहीं है कि कवि की अपनी पीड़ा की अनुभूति किसी और की हो, किन्तु औरों की पीड़ा किसी कवि की पीड़ा हो सकती है। यह अलग बात **है** कि कवि समस्या का समाधान करने मेंनिःसन्देह हीअक्षम नहो, किन्तु

समस्या के विरोध में वह न केवल अपने स्वर को मुखर करता है, बल्कि समस्या के समाधान का मार्ग भी प्रशस्त करता है। यह जानना भी अति आवश्यक है।

जहाँ तक दर्शन की बात करें तो यह जग एक है, किन्तु इसने अनेकों रूपों के मुखौटे पहने हुए हैं। अब कविता बेचारी क्या करेगी, जब संवेदनायें ही शून्य हो गई हों। तो शेष ही क्या रह गया? केवल व्यभिचार, भ्रष्टाचार, अनाचार और क्या? ठीक इसी प्रकार कवि एक है। उसका हृदय एक है, किन्तु भाव अनेक हैं। इस विभिन्न प्रकार की भावनात्मकता का निर्वाह, कार्य–व्यवहार तब ही समझा जा सकता है, जब इस भावनात्मकता का जगत के विभिन्न रूपों के साथ आदान–प्रदान या तथ्यों के साथ सामन्जस्य स्थापित करे।

यहाँ यह समझना भी अपेक्षित होगा कि किसी काव्य दृष्टि में भाव–पक्ष मूल होता है, लेकिन विषय भिन्न हो सकते हैं। भोगे हुए सच में भी भाव–पक्ष का निर्वहन आवश्यक है। भोगा हुआ सच नंगा और अशोभनीय हो सकता है, किन्तु उसका प्रस्तुतिकरण नंगा–उघाड़ा न होकर अत्यन्त मार्मिक और वीभत्स हो जाता है। सही अर्थों में कविता भाव–पक्ष की चहेती होती है। सामाजिक परिवर्तन के साथ कविता भी अपने वस्त्र बदलती है, क्योंकि विचार निरन्तर बदलता रहता है। ऐसे में कवियों का काम ही नहीं बढ़ जाता, अपितुपरम्परागत विषयों से नए विचारों तक लौटकर आना, उनके गले की हड्डी बन जाता है।

कविता मूलतः सभ्यता और संस्कृति की विवेचना है। कविता ही समाज की पहचान है। कविता समाज में व्याप्त गुण–दोषों का विषय रही हैं। इसे नकारा नहीं जा सकता। इस सत्य को नकारना ठीक वैसे ही होगा जैसे किसी कविता को नकारना।

कविता मूलतः किसी स्थान की सभ्यता और संस्कृति की विवेचना है। कविता की सार्थकता भी इसी में ही है कि उसमें रसात्मकता हो न हो, किन्तु क्रान्ति–बोध अवश्य सम्मलित हो। जिनके लिए कविता बनायी गयी है। उन्हें चलने को, उठने को, अन्याय से निपटने को खड़ा करने का मार्ग प्रशस्त करे। कविता में मीरा, सूरदास या फिर तुलसी के जैसा भक्ति–भाव ही पर्याप्त नहीं हैं। महाराणा प्रताप को भूख–प्यास से उबरने के लिए संयम और विवेक उत्पन्न करना भी कविता की मूल आत्मा है। बात सीधी–सपाट हो या चक्रदार, पर लक्ष्य से विमुख न हो। यह कविता की मूल आवश्यकता है।

कवि मुक्त–भाव होता है। कोई रोता है तो कवि भी रोता है। कोई हँसता है। तो कवि भी हँसता है। कवि समय के साथ–साथ चलता है। वह स्वयं का कम और जग का प्रतिनिधित्व अत्यधिक करता है। कोई इसे समझे या न समझे। दरसल में कवि एक प्रवाह है। नदी के साथ–साथ बहता है। कभी किनारों में फँसा होता है। तो कभी नदी की भाँति किनारों को छोड़कर दूर तक बढ़ जाता है। इतना ही नहीं, समंदर का–सा ठहराव भी कवि में होता है। कभी सुनामी लहरों–सा भी उफनता है कवि। प्रेम–प्रीत और वियोगदोनों को जीने का दम कवि में ही होता है। यदि किसी कवि में ऐसी शक्ति विद्यमान नहीं होती है तो वह किंचित मात्र भी कवि नहीं हो सकता, कुछ और ही होता है। वास्तव में कवि वह है जो तमाशबीन नहीं, भावुक और सह्दय होता है। उसकी भावुकता और सह्दयता की वर्षा भी उसे नहीं भिगो पाती। तो कभी वह सर्दी में भी ग्रीष्म के प्रचंड आतप में तपता रहता है। कभी मधुमास में पतझर तो कभी पतझर में मधुमास का अनुभव भी कवि ही करता है। तब वह रचनायें रचता है। दरअसल विभिन्न विशेष परिस्थितियाँ किसी कवि की भावुकता को नाना–प्रकार से प्रभावित करती हैं। कवि की दृष्टि, सृष्टि के क्षेत्र को

घटा–बढ़ा देती हैं। कवि की दृष्टि यदि सजीव है तो उजड़ा जंगल भी हरा–भरा सा लगता है। यानी सौन्दर्य–बोध को प्रबलता प्रदान करता है। हाँ, यदि कहीं अनाचार ही अनाचार है तो कवि का धर्म अनाचार से लड़ना होता है। कवि की दृष्टि यदि निर्जीव है तो सब–कुछ गुड़–गोबर सा हो जाता है। हास–परिहास तो क्या क्रान्ति का भाव तक उत्पन्न नहीं होता। वस्तुतः कविता किसी की धरोहर अथवा सौतन नहीं है। सत्य और अनुभूति का योग है। अब चाहे इसे कवि की अनुभूति कहें अथवा तथ्य की सजीवता कहें अथवा तथ्य की निर्जीवता। इसी से कविता जन्म लेती है।

जिससे किसी कवि की रचना की सजीवता और निर्जीवता का अध्ययन करना सहज, सुलभ और सरल हो जाता है। सजीव कविता में ही जीवन के प्रवाह को गतिमिलती है। सच्ची कविता से जीवन प्रवाह को गति मिलती है। कविता समसामयिक हो। प्रासंगिक हो। वस्तु–निष्ठ हो। तो बात ही कुछ और होती है। जहाँ हर ओर करूक्रन्दन हो। या यूँ कहें कि कौतूहल और कोलाहल हो। तोकौतूहल और कोलाहल के काल–चक्र में कविता (साहित्य) फुसकारेगी नहीं तो और भला क्या करेगी? और ये कहा भी जाता है कि थके–हारे लोग ही सच्चा साहित्य रचते हैं।

अब प्रश्न चाहे उर्दू साहित्य का हो या हिन्दी साहित्य का। साहित्य पहले रचा गया है या साहित्यिक व्याकरण। यह प्रश्न आज भी अपने उत्तर की खोज में विचरण कर रहा है। हिन्दी साहित्य में कबीर, मीरा, सूरदास, रहीम, रैदास ऐसे चर्चित नाम हैं, जिन्होंने अपने–अपने अन्दाज़ में साहित्य की रचना की हैं। कोई पूछे कि इन्होंने मठ में शिक्षा–दीक्षा ली थी? उधर उर्दू साहित्य में अमीर खुसरो, मीर तकी मीर से लेकर मिर्जा ग़ालिब तक के ज़माने तक ग़ज़ल का कोई व्याकरण ही

नहीं था। व्याकरण बना तो बाद में ही बना। आरम्भ में मात्र भाषाई पकड़ थी, जिसमें हिन्दुस्तानी बोलचाल का बोलबाला रहा।

कविता के बारे में जो सत्यता है। उसे कदापि झुठलाया नहीं जा सकता। वर्तमान काल में कवितायें दो प्रकार से रची जा रही हैं, जिनमें एक तो मन से और दूसरी खुले मस्तिष्क से। ऐसा होना स्वाभाविक ही लगता है। समग्र साहित्य ने समय के साथ–साथ स्वयं भी करवट ली है। भक्ति–काल और छायावाद के बाद कविता मुक्त–छन्द में लिखी जाने लगीं। शिक्षा का क्षेत्र जो बढ़ गया। शिक्षा के प्रचार और प्रसार के साथ–साथ मन के बजाय मस्तिष्क ने अत्यधिक काम करना आरम्भ जो कर दिया। जो व्यावहारिक स्वाभाविक ही है।

प्रायः कहा जाता है कि आज कविता भी गद्य में लिखी जा रही है। क्या कविता पर भी किसी का 'पेटेंट' है कि कविता ऐसे लिखो? समय परिवर्तन के साथ–साथ न जाने कितने आयाम बदलते चले जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में कविता (साहित्य) पर ये सवाल क्यों उठाये जा रहे हैं? आज कविता में छन्द–विधान का सवाल उठाना प्रासंगिक नहीं है। छन्द–विधान की परिधि में रहकर कविता करना शायद आज के कवि के वश की बात नहीं है, क्योंकि आज की कविता नितान्त मन की बात नहीं, मस्तिष्क की भी बात है।

कविता मात्र कविता है। कविता एक मन की बात है। कविता ठीक उस पेड़ की शाखाओं पर सहज अवस्था में उगने वाली पत्तियों की तरह है, जिसे वर्तमान में देश में व्याप्त साम्प्रदायिकता ने आज मनुष्य के विवेक को एक ओर करके सामाजिक वातावरण को दूषित कर दिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि डर का वह दंश व्यक्तियों में मतभेद उत्पन्न करने के लिए स्वछन्द घूम रहा है। यह

सम्भवतः वह उन्माद है, जो समाज से भ्रातृत्व की भावना को समूल ध्वस्त कर देना चाहता है, जिसे समाज का प्रत्येक व्यक्ति जानना चाहता है कि उस उन्माद को भड़काने का दोषी कौन है? इस पर घर के दर्शक कक्ष (ड्राइंग रूम) से लेकर सरकारों तक वाद–विवाद और चर्चायें जारी हैं।

जनमानस के विवेक की जब आँखें खुलेंगी तो सत्यता सामने आने पर दोषी अवश्य ही चिन्हित होंगे और तब उनको दण्डित किया जा सकेगा, किन्तु अभी तो मात्र ये ही अपेक्षित होगा कि मिलन के वे पुरातन सेतु बचाकर उन्हें अद्यतन किया जाये। जो एक लम्बे काल के अन्तराल से हमारी संयुक्त संस्कृति की पहचान के प्रतीक रहे हैं। ये सेतु उस समय निर्मित किये गये थे, जब जनमानस के मन में बढ़ते भेद भाव की मत वैभिन्यता को समूल नष्ट किये जाने के लिये हिन्दू और मुसलमान समान और संयुक्त रूप से आगे आये थे। हिन्दू संतों और मुस्लिम फ़कीरों ने ऐसा आन्दोलन छेड़ा कि, जिससे सभी जाति–वर्गों के व्यक्तियों ने एक साझे मंच पर एकत्रित होकर साँस्कृतिक एकता और सामंजस्य के लिये गीत गाए।

प्रेम के लिए हिन्दू और मुसलमान के मध्य किसी प्रकार का भेद का कोई अर्थ नहीं रखता। इस बात को कुछ इस प्रकार भी कह सकते हैं कि लाखों लोगों के दिलों में धड़कने वाले नज़ीर अकबराबादी की रचनाऐं दो सौ वर्षों से लोकजीवन का हिस्सा बनी हुई हैं। नज़ीर अकबराबादी जब तक ब्रज के लोक जीवन में घुले मिले रहे। तब तक वे जन–जन के कण्ठों से भक्ति गीत के रूप में मेले–तमाशों में लोगों के अधरों से प्रस्फुटित होते रहे।

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं से अमृत छलकता था, लेकिन उन्माद की चिंगारी के उत्पन्न होते ही वे सब समूल नष्ट होते चले गये।नज़ीरअकबराबादी के

काव्य ने उन्हें उनके शब्दों के तिलिस्म के प्रभाव के कारण ही जनकवि की ख्याति प्रदान करायी।

ब्रज की मिट्टी की सोंधी महक वाली उनकी रचनायें आज भी अपना एक विशेष तिलस्मी प्रभाव रखती हैं। यही कारण है कि नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं की प्रासंगिकता आज भी एक लम्बे अन्तराल से अनुभव की जा रही है।

नज़ीर अकबराबादी बहुत ही अच्छे व्यक्ति थे। वह जन–जन को सम्बोधित रचनायें लिखते थे। अपनी रचनाओं में शब्दों की जादूगरी के कारण ही वे बिना मुकुट के राजा कहलाते थे। उनकी रचनाओं के शब्द उनके भावों को सफलतापूर्वक अभिव्यक्ति देने में समर्थ हैं। इसे कुछ इस तरह से भी कहा जा सकता है कि नज़ीर अकबराबादी के मन में जैसे ही किसी विषय को लेकर विचार जागृत होता था। ठीक वैसे ही वे बड़ी ही चातुर्यता एवं कुशलता के साथ उनका शब्द–चित्रण कर दिया करते थे। ऐसी उक्तियाँ नज़ीर अकबराबादी के सम्बन्ध में सदा ही कही व लिखी जाती रही हैं।

नज़ीर अकबराबादीके काव्य की विषय–वस्तु मात्र एक ही विषय तक सीमित न होकर लोक जीवन के विभिन्न पहलुओं तक विकसित हुयी। उन्होंने लोक जीवन की समस्याओं पर दूर तक दृष्टिपात करके लोगों में जन चेतना की प्रेरणा का संचार किया। इसके साथ ही साथ उन्होंने समाज के अनछुए प्रसंगों को भी छुआ। उन्होंने सभी समुदायों और समाज के सभी वर्ग के लोगों पर केन्द्रित करके रची गयी अपनी रचनाओं से प्रसिद्ध जन कवि की ख्याति पाकर अपनी अनूठी छाप छोड़ी। वे जन–जन के हृदय के मनोभावों की अभिव्यक्ति के माध्यम रहे।

उन्होंने जाति से मुसलमान होने के परिणामस्वरूप भी भगवान श्री कृष्ण की लौकिक भावनाओं को ऐसी ब्रज शब्दों की शैली में प्रस्तुत किया, जिससे उनकी रचनाओं का हिन्दू–देवी देवताओं के प्रति भक्ति भावना के साथ–साथ आध्यात्मिकता का आभास होता है। इससे उनकी कविता में रहस्य भावना का समावेश हो गया है।

नज़ीर अकबराबादी अपने जीवनकाल में ही मिथक के नायकों की तरह प्रसिद्ध हो गए थे। उनकी काव्य प्रतिभा को साहित्यिक इतिहास में उनकी मृत्यु के बाद स्वीकृति मिली पर उसके बहुत पहले ही उनकी कविताओं का जादुई संगीत आगरा के बाज़ारों, राहों और गली–कूँचों में गूंजता रहा–

''सब ठाठ पड़ रहा जावेगा, जब लाद चलेगा बंजारा।''

जो नज़ीर साहब की नज़्म ''बंजारानामा'' के शीर्षक रचित है, उनकी पूरी नज़्म इस प्रकार है–

हमने यहाँ पूरी नज़्म इसलिए दी है ताकि आने वाले समय में उनकी पूरी रचना सहेजकर रखी जा सके और उनके रचना प्रेमी उनका आनन्द ले सकें।

"बंजारा नामा"

टुक हिर्से–हवा को छोड़ मियां, मत देश विदेश फिरे मारा।
कज्जाक़ अजल का लूटे है, दिन रात बजाकर नक्कारा।।
क्या बधिया, भैंसा, बैल, शुतर क्या गौने पल्ला सर भारा।
क्या गेहूँ,चावल, मोंठ, मटर,क्या आग, धुँआ और अंगारा।।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा, जब लाद चलेगा बंजारा।।

गर तू है लक्खी बंजारा और खेप भी तेरी भारी है।
ऐ गाफिल, तुझसे भी चढ़ता एक और बड़ा व्यापारी है।।
क्या शक्कर मिश्री वंफद गरी क्या सांभर मीठा खारी है।
क्या दाख, मुनक्का सोंठ, मिरच,क्या वेफसर लौंग सुपारी है।।
सब ठाठ पड़ रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा।।

तू बधिया लादे बैल भरे, जो पूरब पश्चिम जावेगा।
या सूद बढ़ाकर लावेगा, या टोटा घाटापावेगा।।
कज्जाक़ अजल का रस्ते में जब भाला मार गिरावेगा।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा।।

यह खेप भरे जो जाता है, यह खेप मियां मत गिन अपनी।
अब कोई घड़ी,पर साअत मैं,यह खेप बदन की है कपफनी।।
क्या थाल कटोरे चाँदी के, क्या पीतल की डिबिया ढकनी।
क्या बरतन सोने चाँदी के, क्या मिट्टी की हंडिया चपनी।।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा।

धन दौलत, नाती पोता क्या, एक वुफनबा काम न आवेगा।
क्यों जी पर बोझ उठाता है, इन गौनों भारी–भारी के।।
जब मौत का डेरा आन पड़ा, तब कोई नहीं गुनतारी के।
क्या साज जड़ाऊ जर जेबर, क्या गोटे थान किनारी के।।
क्या घोड़े जीन सुनहरी के, क्या हाथी लाल अमारीके।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा।

मगरफर न हो तलवारों पर, मत फूल भरोसे ढालों के।
सब पट्टा तोड़के भागेगा, मुंह देख अजल के भालों के।।
क्या डिब्बे मोती हीरों के, क्या ढेर खजाने मालोंके।
क्या बुगचे ताश मुशज्जरके क्या तख्ते शाल दुशालों के।।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा।

जब मुर्ग पिफरा कर चाबुक को, यह बैल बदन का हांकेगा।
कोई नाज समेटेगा तेरा, कोई गौन सियेऔर टाँकेगा।।
होढेर अकेला जंगल में, तू खाक लहद की फांकेगा।
उस जंगल में पिफर आह 'नजीर' एक भुनगा आन न झांकेगा।।
सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा।

ये नज़ीर साहब की रचना के भाव का ही तो एक दृष्टान्त है कि उन्होंने निराश ककड़ी विक्रेता की पीढ़ा से प्रभावित होकर अपनी नज़्म ''आगरे की ककड़ी'' लिखकर उसकी निराशा को एक नयी आशा और दिशा दी।

''क्या खूब नर्मो नाजुक इस, आगरे की ककड़ी।
और जिसमें खास काफिर, इस्कंदरे की ककड़ी।।''

नज़ीर की रचनाऐं लोकगीत व ईश वंदना की तरह मंदिरों, घरों व उत्सवों में गाई जाती रहीं–

''तेरी सरन गही है, कर तू निहाल भैरों।''
ऐ पर्तपाल देवत, मदमस्त काल भैरों।।

जन सामान्य के बीच उनकी कविता की पैठ और वृहद जन स्वीकृति ने आलोचकों को इस सीमा तक बाध्य किया कि उन्हें नज़ीर को उर्दू मिश्रित खड़ी बोली का अन्यतम् और विशिष्ट कवि घोषित करना पड़ा।

नज़ीर अकबराबादी संभवतः ऐसे अकेले कवि रहे, जिन्होंने युगीन चुनौतियों का जवाब एक अलग प्रकार से दिया और अपनी आत्मिक शक्ति के बल पर टिके रहे।

नज़ीर अकबराबादी ने अपने काव्य में एक नयी राह को आलोकित किया, जिसमें उनका साथी जनसामान्य ही रहा और उनका गंतव्य सामान्य रहा। उन्होंने तत्कालीन समय के व्यक्तियों की दयनीय स्थिति का वर्णन अपनी ''इंसान'' नामक कविता में इस प्रकार किया–

"इंसान"

''गालियाँ, मार खाते हैं, कौड़ी के वास्ते।
शर्मो हया उठाते हैं, कौड़ी के वास्ते।।
सौ मुल्क छान आते हैं, कौड़ी के वास्ते।
मस्जिद को दम में ढाते हैं, कौड़ी के वास्ते।।
''कौड़ी फेंक सब जहान में नक्शों नगीन है।
कौड़ी न हो तो कौड़ी के बिगर तीन–तीन है।।''

नज़ीर अकबराबादी ऐसे अकेले कवि हैं, जिन्होंने लोगों के बारे में, लोगों के लिए गाया। इसके लिए इन्होंने सम्प्रदाय, सीमित तत्वों या किसी रहस्यवादिता का सहारा नहीं लिया। इनके बारे में जानना प्रकारान्तर से उनके युग–जीवन को

जानना व अनुभव करना है। इनकी मेहनत, हर्षोल्लास और छोटी–छोटी उपलब्धियों को जीवन्त रूप में देखना है।

कविवर नज़ीर अकबराबादी को आगरा व सम्पूर्ण ब्रज क्षेत्र के उत्सव–त्यौहार होली, दिवाली, बसन्त, शब बरात, ईद, बसन्त मेले, बल्देव मेला, तैराकी मेला, व कंस मेला, आदि का मेला, खेल, कबूतरबाज़ी, पंतगबाज़ी, मदारी की कलाबाज़ी, रीछ का नाच बहुत पसन्द थे। इनसे सम्बन्धित कविताओं में जीवन की वास्तविक सच्चाइयों और सुख का अनुभव पाठक को आनन्दित कर देता है।

तत्कालीन विषम परिस्थितियों में आम आदमी के लिए ये कविताऐं संजीवनी शक्ति का काम करती थीं।

आज भी राजनीतिज्ञों के छल–छद्म के चलते भाषा–संस्कृति, प्रेम और सद्भाव समाज से दूर हैं। अब हिन्दी, उर्दू और हिन्दू–मुसलमान का बँटवारा ही नहीं हो रहा है, वरन् बड़ी दिलेरी के साथ सुनियोजित साम्प्रदायिक दंगों के संचालन के बाद राज्य सरकार के संरक्षण में गौरव रथ–यात्रा निकलती हैं। आत्ममुग्ध नायिका की भाँति शीर्षस्थ नेता वर्तमान स्थितियों से सन्तुष्ट और सहज दीखते हैं। आज भी आम आदमी की पीड़ा को सुनने, समझने व दूर करने वाला कोई नहीं है। नज़ीर अकबराबादी जैसे जनकवि की कविताऐं ऐसे में बहुत प्रासंगिक लगती हैं।

''झगड़ा न करे मिल्लतो मजहब का कोई यां।
जिस राह में आज पड़े खुश रहे हर आं।''

1.3कला पक्ष क्या होता है?

कला पक्ष में कवि की कविता के शिल्प सौन्दर्य का एक विशेष प्रकार का प्रस्तुतिकरण होता है, जिसमें कवि अपनी रचनाओं के सृजन में शब्दों का चयन, भाषा प्रवाह, छन्द, अलंकार और अपनी परिमार्जित भाषा शैली को मिश्रित करते हुए प्रयोग करता है, जिसे साहित्यिक भाषा में कला पक्ष कहते हैं।

किसी कविता में होने वाले भाव पक्ष और कला पक्ष ही उस कवि की रचना का शिल्प सौन्दर्य होता है। कविता के इस शिल्प सौन्दर्य पर विचार करने से पूर्व हम यह जानना चाहेंगे कि आखिर कविता होती क्या है?

सही अर्थों में कविता किसी अभिव्यक्ति का वह साधन है, जिससे सृष्टि के साथ मनुष्य के रागात्मक सम्बन्धों की रक्षा और उसका निर्वाण होता है। कविता में भावों और कल्पना की प्रमुखता व किसी कवि की सम्वेदन शीलता की अभिव्यक्ति तो रहती है, किन्तु अत्यन्त की अल्प शब्दों में अपनी बात कहता है।

कला पक्ष पद्य काव्य और गद्य काव्य दोनों ही में निहित होता है। प्रायः पद्य काव्य को कविता के रूप में ही मान्यता दी जाती है, लेकिन गद्य काव्य को हिन्दी में कविता के रूप में मान्यता नहीं दी जाती। गद्य काव्य की उत्पत्ति का मूल स्रोत मूलतः उर्दू को माना जाता है, क्योंकि नज़्में उर्दू में ही लिखी जाती थीं और आज भी प्रचलन में हैं।

1.4 नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में कला पक्ष :

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का कला पक्ष समझने के लिए हमें यह जानना भी अपेक्षित होगा कि भाषा के कौन से ऐसे अवयव होंगे, जिनकी उपलब्धता से किसी भी कवि की कोई रचना कला पक्ष युक्त होगी, जो इस प्रकार है–

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में भाव के साथ ही साथ कला पक्ष भी बड़े ही सुन्दर तराके से दृश्यमान होता है, जो बिन्दुवार इस प्रकार है–

1. नज़ीर साहब के काव्य की मुख्य स्वर धारा तन–मन को आनन्दित करती है। जब हम उनकी रचना–"कैसा था बाँसुरी की बजैया का बालपन" को गाते हैं। उनकी कई रचनाएँ इसी भाव विभोर करने वाली रस धारा से अभिसिंचित हैं।

2. उनकी पीढ़ा में भी आनन्द की अनुभूति तब होती है जब उनकी रचना–"कोठे पर" या "वैश्या" या ''अंगिया'' को पढ़कर उसकी शब्दावली पर ध्यान देते हैं। यद्यपि ये समाज के वे घृणित पहलू हैं– जिन पर चर्चा करना तो दूर, बल्कि उनका नाम लेना भी किसी व्यक्ति की गलत सोच और उसकी दूषित मानसिकता का प्रतीक माना जाता है और उसकी ऐसी सोच वाले व्यक्तित्व को बड़ी ही हेय दृष्टि से देखा जाता है। वह बात अलग है कि ऐसी बातें एक पल को मानव मन को आनन्दित करती हों।

नज़ीर अकबराबादी ने अपनी पीढ़ा को गरीबी का दर्शन कराती हुई स्थिति से अवगत कराते हुए आगे लिखा है–

"रोटियाँ"

जब आदमी के पेट में आती हैं रोटियाँ
फूली नहीं बदन मेंसमाती हैं रोटियाँ
आँखें परी–रुखोंसे लड़ाती हैं रोटियाँ
सीने ऊपर भी हाथ चलाती हैंरोटियाँ
जितने मज़े हैं सब ये दिखाती हैं रोटियाँ
जब आदमी के पेट में आती हैं ।।1।।

उन्होंने रोटियों से पेट भरे लोगों की स्थिति का वर्णन किस सुन्दरता के साथ अपने शब्दों में किया है। ये देखिये तो सही–

''रोटी से जिसका नाक तलक पेट है भरा
करता फिरे है क्या वो उछल–कूद जा–बा–जा
दीवार फाँदकर कोई कोठा उछलगया
ठट्ठा, हँसी, शराब, सनक, साक़ी, उस सिवा
सौ–सौ तरह की धूमें मचाती हैंरोटियाँ
जब आदमी के पेट में आती हैं ।।2।।[1]

"मुफ़लिसी"

यह दुख वो जाने जिस पे कि आती है मुफ़लिसी[1]
जो पहले–फ़ज़्ल[2]आलिमो–फ़ाज़िल कहाते हैं

1 'रोटियाँ' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 85 / 86.

मुफ़लिस हुए तो कलमा तलक भूलजाते हैं
पूछे कोई 'अलिफ़' जो उसे 'बे' बताते हैं
वह जोग़रीबो–ग़ुरबा के लड़केपढ़ाते हैं
उनकी तो उम्र भर नहीं जाती हैमुफ़लिसी
जब रोटियों के बँटने का आकरपड़े शुमार
मुफ़लिस को देवेंएक तवंगर[3] कोचार–चार
गर और माँगे वह तो उसे झिड़केबार–बार
इस मुफ़लिसी काआह बयां क्या करूँ मैं यार
मुफ़लिस को इस जगह भी चबाती है मुफ़लिसी
यह दुख वो जाने जिस पे कि आती है ....[1]

3. नज़ीर की कविताओं में दोनों लोक कला और वर्गीकृत काव्य के तत्त्व मिलते हैं, पर दोनों में समकालीन तत्कालीन वास्तविकता का प्रयास मुखर है। भोग–विलास के साधनों से भरपूर राजमहलों की रंगीन, लेकिन दमघोंटू सीमित ज़िन्दगी को छोड़कर कवि नज़ीर लगातार वंचित लोगों के जीवनसे सम्बद्ध रहे। उन्हीं को नज़ीर की समस्त शब्द व कलाऐं समर्पित थीं। इस प्रकार नज़ीर की कविताऐं तत्कालीन समाज से हमारा पुनर्साक्षात्कार कराती हैं। नज़ीर की कविताऐं भाव और भाषा–शिल्प की दृष्टि से इतनी सहज है कि कहीं–कहीं ऐसा लगता है कि कवि नज़ीर आज की स्थितियों का चित्रण कर रहे हैं। कवि की 'खुशामद','मुफ़िलसी','रोटियाँ','आदमीनामा'

---

1 'मुफ़लिसी' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ 81/84.

शब्दार्थ :1.गरीबी, 2.विद्वान, 3.मालदार

आदि कविताऐं आज भी उतनी ही प्रासंगिक और जनसामान्य स्थितियों के अनुरूप हैं, जितनी उस समय थीं। यह विशिष्टता किसी कवि की काव्यगत विशिष्टता का महत्व सिद्ध करती है।मनुष्यता के गायक नज़ीरअकबराबादी का जीवन हो या शायरी– वह सचमुच जनकवि सिद्ध होते हैं। आम आदमी के प्रतिनिधि, मनुष्यता के समग्र गायक, उनके सारे कृतित्व को एक नाम देना हो तो वह उनकी एक अच्छी नज़्म का शीर्षक 'आदमीनामा' के अतिरिक्त कोई अन्य हो ही नहीं सकती, जो इस प्रकार है–

"आदमीनामा"

''दुनिया में बादशाह है सो है वह भी आदमी,
और मुफ़लिसो–गदा है सो है वह भी आदमी।
ज़रदार, बे–नवा है सो है वह भी आदमी,
नेअ़मत जो खा रहा है सो है वह भी आदमी।।
टुकड़े चबा रहा है सो है वह भी आदमी,
अब्दाल, कुत्ब, ग़ौस, वली आदमी हुए।

नज़ीर अकबराबादी जी ने आदमी के बारे में मात्र इतना ही नहीं कहा, बल्कि उन्होंने ये भी कहा कि–

''चलता है आदमी ही मुसाफ़िर हो,लेके माल,
और आदमी ही मारे है फांसी गलेमें डाल।
यां आदमी ही सैद है और आदमी ही जाल,
सच्चा भी आदमी ही निकलता है,मेरे लाल।।
और झूठ का भरा है सो है वह भी आदमी,

यां आदमी ही शादी है आदमी ही विवाह।
काज़ी, वकील आदमी और आदमी गवाह,
ताशे बजाते आदमी चलते हैं ख़ामख्व़ाह।।
दौड़े है आदमी ही तो मशअल जला के राह,
और ब्याहने चढ़ा है सो है वह भी आदमी।
और आदमी नक़ीब सो बोले है बार–बार,
और आदमी ही प्यादे है और आदमी सवार।।
हुक़्क़ा, सुराही, जूतियां दौड़ें बग़ल में मार,
कांधे पे रख के पालकी हैं दौड़ते कहार।
और उसमें जो पड़ा हैसो है वह भी आदमी,
बैठे हैं आदमी ही दुकानें लगा–लगा।।
और आदमी ही फिरते हैं रख सर पे ख़्वामचा,
कहता है कोई 'लो',कोई कहता है'ला, रे ला'।
किस–किस तरह की बेचें हैं चीज़ें बना–बना,
और मोल ले रहा है सो है वह भी आदमी।।
तबले, मजीरे, दायरे सारंगियांबजा,
गाते हैं आदमी ही हर इक तरह जा–ब–जा।
रंडी भी आदमी ही नाचते हैं गत लगा,
और आदमी ही नाचे हैं और देख फिर मज़ा।।
जो नाच देखता है सो है वह भी आदमी,
दुनिया में बादशाह है सो है वह भी........''

जीवन के सबसे दुखद पहलू ''मृत्यु'' पर अपनी इस रचना में नज़ीर साहब ने आदमी की मृत्यु के बाद के दृश्य का बखान किस सुन्दरता के साथ किया है, जो दुख में भी अपनी बात कहे बिना नहीं चूके हैं। वे कहते हैं–

''मरने में आदमी ही कफ़न करते हैं तैयार,
नहला–धुला उठाते हैं कांधे पे कर सवार।
कलमा भी पढ़ते जाते हैं रोते हैं ज़ार–ज़ार,
सब आदमी ही करते हैं मुरदे के कारोबार।।
और वह जो मर गया है सो है वह भी आदमी,
दुनिया में बादशाह है सो है वह भी........''

4. उन्होंने 'नज़ीर' के नाम से रचनायें करके अपने दर्द को लोकव्यापी बना दिया है। उनकी इष्ट–देवों की प्रशंसा में रची गयीं रचनाओं को देखकर ऐसा लगता है कि वे उन आराध्यों के सुन्दर समागम का साधन न होकर उनके भक्त और अनुयायी हों, यदि देखा जाये और उनका विश्लेषण किया जाये तो नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में अथ से लेकर इति तक सब कुछ समाहित है, लेकिन इसके परिणामस्वरूप भी विभिन्न विषयों और समाज के विभिन्न वर्गों के इष्ट–देवों के प्रति लोकप्रिय और सराहनीय भक्ति भाव की रचनायें, कविता, गीत व नज़्म के रूप में ही उनको देखने को मिलती है। रचना में समाज के सभी वर्गों के आराध्यों पर उनकी रचनायें आधारित होने के कारण एक सुखद अनुभूति की सैर कराती है।

5. उन्होंने अपनी रचनाओं में उर्दू व हिन्दी मिश्रित शैली के साथ ही साथ बृज की भाषा शैली का भी बहुतायत में अनन्य उपयोग किया है, जिसमें उन्होंने लोकोक्ति और मुहावरों पर आधारित रचनाओं का प्रस्तुतिकरण किया है।

2. नज़ीर अकबराबादी को रचनाओं का शिल्पगत वैशिष्ट्य :

नज़ीर अकबराबादी अपने समय के एक ऐसे अकेले शायर (उर्दू कवि) थे, जिन्होंने शायरी दरबारों के मखमली वस्त्रों को ना छूकर निर्धनता के थेगड़ों में शान्ति की साँस लेती अपनी रचनायें कीं। उनके समय में राजशाही साम्राज्य राज्य कर रहे थे, जिनका काम जनता की सेवा ना होकर स्वान्तः सुखाय में लिप्त रहना था। जो अपनी हँसी हँसते थे, जिनका जनता से सीधे काई लेना–देना न होकर अपने खजाने में धन की बढ़ोतरी मात्र के लिये ही सम्बन्ध होता था। उस समय जो कविता प्रचलन में थी। उनमें मात्र राजाओं या बादशाहों की चाटुकारिता करना या उनकी प्रशंसा में कविता करना ही मात्र कवियों का काम था और उन शेरों को लिखने के लिये बाहशाह अपने शायरों को काफी कीमती वस्त्र, आभूषण, धन दौलत देते थे। इसलिये सिर्फ अय्याशी पर आधारित मौहब्बत भरी शायरी अपने पूरे यौवन पर थी। तब नज़ीर अकबराबादी ने अपनी शायरी के लिये अपने आस–पास के लोगों की बिखरी हुयी ज़िन्दगियों से सम्बन्धित विषय चुने। उन्होंने उस समय वे विषय चुने, जो तत्कालीन शायरों और रचनाकारों के लिये निरर्थक थे।

जिसके लिये नज़ीर अकबराबादी उस समय के आलोचकों की आलोचनाओं के शिकार बने, जिसके बारे में उस समय के आलोचकों ने कहा कि सड़क छाप रचनाओं के लिखने का क्या औचित्य है? लेकिन नज़ीर अकबराबादी को मन की शान्ति ही तब मिलती थी। जब वे राह चलते लोगों के विषयों पर रचनायें करते थे। नज़ीर साहब ने ककड़ी बेचने वाले, ठेले वाले, मूँगफली बेचने वाले, फल–सब्जियाँ, पशु–पक्षियों, अनाज और दलहनों पर लेखन के प्राथमिकता दी।

आज अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर विश्व के सातवें आश्चर्य के रूप में जाना जाने वाले ताजमहल के शहर आगरा की कहानी कोई नयी नहीं है, बल्कि यह बहुत ही पुराना शहर है जो अपनी पुरातनता के लिये आरम्भ से ही चिर परिचित है। ब्रज रज की गन्ध वाला आगरा शहर प्रत्येक साहित्य के सतरंगी रंगों से सराबोर होने के कारण कला एवं साहित्य का विराट हस्ताक्षर है। साहित्य की मिली–जुली संस्कृति वाला नज़ीर अकबराबादी का ये शहर आज भी विश्व के पटल पर अपनी गंगा–जमुनी संस्कृति के लिये एक अनौखी पहचान रखता है, जिसमें नज़ीर अकबराबादी की रचनायें जन–जन के स्वरों को विशेष ऊँचाईयों पर पहुँचा रही हैं। हमें कहना होगा कि नज़ीर साहब अपने समय के एक वे अनौखे शायर थे, जिनका कोई जबाव नहीं। जिन्होंने समाज के प्रत्येक पहलू पर अपनी रचनायें कीं।

3. अकबराबादी नज़ीर की रचनाओं की काव्यगत वैशिष्टता :

नज़ीर अकबराबादी अपने समय में और उसके एक लम्बे अन्तराल के पश्चात् भी जनता में लोकप्रिय तो रहे, किन्तु उन्नीसवीं शताब्दी में वे कोई साहित्यिक मान्यता प्राप्त न कर सके। तत्कालीन समालोचकों ने तो उनकी पूरी उपेक्षा ही कर दी। वास्तव में उस समय हिन्दी में रीतिकालीन कविता अति प्रचलित थी तो उर्दू में दरबारी शायरी। नज़ीर की चेतना अपने समय से बहुत आगे बढ़ी हुई थी, जिसे उन के समकालीनों ने बहुत पिछड़ी वस्तु समझा था और उसको कोई महत्त्व नहीं दिया था। नज़ीर के समय का भारत सामन्तवादी भारत था, जिसमें या तो धर्म और दर्शन के आधार पर साहित्य का सृजन किया जाता था। या फिर सौंदर्य बोध का ऐसा आधार ढूँढा जाता था, जो सामन्त वर्ग के जीवन में घुल–मिल सके।

नज़ीर बिल्कुल जनसाधारण के कवि थे, जो सारे जीवन को उसी की दृष्टि से देखा करते थे। उन्होंने जीवन की प्रत्येक अनुभूति का चित्रण किया, किन्तु उनकी चेतना जनसाधारण के जीवन के परिप्रेक्ष्य में ही देखी जा सकती है। वे प्रेम की बातें करेंगे तो भी उसमें साधारणजन का तूफ़ानी प्रेम होगा, भक्ति की बातें करेंगे तो भी उस साधारण जन की भावना का चित्रण करेंगे, जो कृष्ण और मुहम्मद दोनों के आगे नतमस्तक हो जाता है। महलों और दरबारों की सजावट की चकाचौंध और शाही सवारियों या शिकार के वर्णन के बजाय उनके यहाँ तैराकी बल्देव जी का मेला, आगरे की ककड़ी, ताजमहल और रीछ का तमाशा दिखाई देगा। इसके अलावा वे कुछ ऐसी भी बातें कह जाऐंगे, जो सामन्ती युग के सभ्य समाज में वर्जित थीं–जैसे गरीबी का रोना, मौत का डर और रोटियों का महत्व। स्पष्ट है कि साधारण किन्तु सम्पूर्ण जीवन के ऐसे यथार्थवादी कवि को सँभालना उस युग की सामन्ती दरबारी चेतना के वश की बात नहीं थी। इसलिए तत्कालीन आलोचकों ने बाज़ारूपन के नाम पर उनकी लोकप्रियता से छुट्टी पा ली। विदेशी कवियों बर्न्स और विलों की तरह नज़ीर एक प्रतिभावान आवारा कवि थे। आवारा की कोटि में केवल असामाजिक तत्व ही नहीं आते, बल्कि समय की मान्य सीमाओं का अतिक्रमण करने वाले सर्जक मनीषा को भी इसी कोटि में धकेल दिया जाता है।

नज़ीर ने जीवन और जगत के कुछ पक्षों को जान–बूझकर अस्वीकार किया, लेकिन इसमें इन पक्षों से उनकी अज्ञानता नहीं थी, बल्कि सफल प्रयत्न था। वे उस समुदाय के लोगों को अच्छी तरह जानते थे। जो उनके प्रबल विरोधी भी थे। एक आम आदमी की दृष्टि में कवि नज़ीर ने भी अपनी रचनाओं को जमा नहीं किया। जिससे आगरा की समृद्धि, खुशहाली और जवानी को, इसके आकर्षण की

चमक और मस्ती को, मज़ाक, छेड़छाड़ और नंगेपन को सुन्दरता एवम् स्वतन्त्रता के साथ नज़ीर ने अपनी कविता में अभिव्यक्ति दी है। फूहड़पन को लिखने का अपराध–बोध इन्हें कभी नहीं हुआ। इनके काव्य में स्वच्छन्द अभिव्यक्ति की जो पारदर्शिता है। उसे समाज से छुपाकर कोई कार्य नहीं करती। जीवन के प्रत्येक क्षण को व्यक्त करने में उन्हें कोई दुविधा या हिचकिचाहट नहीं होती।

उस समय महलों के भीतर वर्गीकृत काव्य परम्परा का निर्वाह था। महलों की चाहरदीवारी के बाहर असंख्य कामगार जनता थी, जो अभावों का जीवन व्ययतीत करते हुए भी लोक गीत, नृत्य, पहेलियाँ कहानियों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक मौखिकता और मौलिकता प्रदान कर रही थी। इस प्रकार यह सजीव वृहद रचना–संसार और लोक कला–सृजन जीवित रहा। इन दोनों में यद्यपि कोई दीवार नहीं थी, फिर भी अलिखित लोक साहित्य, दरबारी संस्कृति व साहित्य से मुक्त रहा।

नजीर की कविताओं में दोनों ही लोक कला और वर्गीकृत काव्य के गुण पाये जाते हैं, पर दोनों में समकालीन, तत्कालीन वास्तविकता का प्रयास मुखर है। भोग–विलास के साधनों से भरपूर राजमहलों की रंगीनियाँ, लेकिन दमघोंटू सीमित जीव़न को छोड़कर वे निरन्तर वंचित लोगों के जीवन से सम्बद्ध रहे। उन्हीं को नज़ीर की समस्त शब्द व कलाऐं समर्पित थीं। इस प्रकार नज़ीर की कवितोंऐं तत्कालीन समाज से हमें आत्मसात् कराती हैं। नज़ीर की कविताऐं भाव और भाषा–शिल्प की दृष्टि से इतनी सहज हैं कि कहीं–कहीं ऐसा लगता है कि कवि नज़ीर आज की स्थितियों का चित्रण कर रहे हों। कवि की 'ख़ुशामद', 'मुफ़लिसी', 'रोटियाँ,' और 'आदमीनामा' आदि कविताऐं आज भी उतनी ही प्रासंगिक और जनसामान्य स्थितियों के अनुरूप हैं, जितनी उस समय थीं। यही विशिष्टता किसी

कवि की काव्यगत वैशिष्टता का महत्व सि़द्ध करती है। वे सही मायनों में मनुष्यता के गायक थे।

नजीर अकबराबादी का जीवन हो या शायरी– वह सचमुच जनकवि सिद्ध होते हैं। आम आदमी के प्रतिनिधित्व मनुष्यता के समग्र गायक उनके सारे कृतित्व को एक नाम देना हो तो वह उनकी सटीक नज़्म का शीर्षक ही, हो सकता है– 'आदमीनामा'।

"ताजमहल के प्रति प्रेम"

नज़ीर साहब का ताजमहल के प्रति बहुत प्रेम था। वे ताजमहल से असीमित प्रेम करते थे, जिसके बारे में एक घटना का यहाँ उल्लेख करना आवश्यक होगा।

एक बार की बात है कि नज़ीर साहब को वर्तमान में लखनऊ और तत्कालीन अवध के नवाब वाज़िद अली शाह ने उन्हें अपने यहाँ स्थाई रूप से रहने का निमन्त्रण दिया तो वे काफी मनामनों के बाद अपने घोड़े पर सवार होकर ताजगंज, आगरा से होकर लखनऊ के लिए चल पड़े। उनका घोड़ा चल रहा था, लेकिन नज़ीर साहब की निगाहें ताजमहल को बीच–बीच में निहारती जा रहीं थीं। रास्ता चलते–चलते जब ताजमहल उनकी निग़ाहों से ओझल हो गया तो न जाने क्यों उनका मन विचलित हो उठा और इतना विचलित हो गया कि वे घोड़े को आगे ले जा ही नहीं पाये, अन्त में उन्होंने घोड़े को लौटाया और सदैव के लिये अपना आगरा न छोड़ने का निर्णय लिया और उन्होंने उसी समय एक नारा दिया–

"आगरा हम पर फ़िदा और हम फ़िदा–ए–आगरा।"

इतना सब कुछ होने के बाद भी नज़ीर साहब ने कभी भी स्वयं पर घमण्ड नहीं किया। वे जनमानस से जुड़े हुए लोकप्रिय कवि ही रहे। नज़ीर ने अपनी रचनाओं में जितने अधिक शब्दों का प्रयोग किया उतना पहले किसी अन्य कवि ने नहीं किया था।

अपनी नज़्मों के कारण ही नज़ीर साहब सदैव अमीर खुसरो, रसखान जैसे परम्परागत कवि ही लगते हैं। उनके समय के शायर भी उनकी रचनाओं के कायल थे, लेकिन न तो उन्होंने अपने आप को धरातल पर ही रखा और न ही वे कभी साहित्य कीर्ति के पीछे–पीछे भागे। उनकी कलम केवल उसी विषय को छूती थी जिन्हें तत्कालीन प्रसिद्ध कवि/शायर सपने में भी सोचने या उन पर कुछ रचनायें करने से डरते थे। उन्होंने सदैव वो लिखा जो सही अर्थों में उनको लिखना चाहिए था। उन्होंने न तो मीर तकी मीर की तरह इश्क और दर्द पर लिखा और न ही मिर्जा गालिब की तरह मोहब्बत और शराब पर, जिसका ज्वलन्त उदाहरण नज़ीर साहब की रचना 'बंजारानामा' में देखने को मिलती है। नज़ीर जन्म से ही कवि थे। उनका कभी कोई गुरू नहीं रहा। वे सदैव दीपक की तरह बनकर गरीबी में रहते हुए बहुत अच्छी रचनायें समाज को देकर गये। यद्यपि नज़ीर साहब ने– ककड़ी, मूँगफली, तिल के लड्डू और जलेबी के ऊपर भी बहुत अच्छी रचनायें कीं और उन्हें बड़ी गम्भीरता से लिखा, लेकिन आलोचक उनकी कविताओं को कविता मानने को कभी भी सहमत नहीं हुए।

जिस प्रकार नज़ीर साहब ने दैनिक जीवन में घटने वाली घटनाओं, व्यवहार, संस्कृति के ऊपर लिखा। ठीक उसी प्रकार उन्होंने जीवन की स्थितियों को भी अत्यन्त ही मार्मिक शब्दों में प्रस्तुत किया है। वह चाहे बचपन की स्थिति का चित्रण हो या यौवन की स्थिति और या वृद्धावस्था की मानवीय दयनीयता। इस

सन्दर्भ में उन्होंने बचपन, जवानी और बुढ़ापा नामक कवितायें लिखकर मानवीय जीवन के पहलुओं पर विशिष्ट रचनायें की हैं। उन्होंने आधुनिक भारत की पटकथा तब ही लिख दी थी, जिसे तत्कालीन भारत के समाज को प्रदर्शित किये जाने के दृष्टिकोण से "आगरा बाजार" में नज़ीर अकबराबादी को आधुनिक भारत के रंग मंच पर बड़ी ही प्रवीणता के साथ प्रदर्शित किया गया है। प्रख्यात लेखक निर्देशक हबीब तनवीर साहब ने अपने **''आगरा बाजार''** नामक नाटक में बड़े ही अच्छे रूप में मंचित किया है।

जहाँ पर उन्होंने ककड़ी वाला, पान वाला, लड्डूवाला, तरबूज वाला, रेबड़ी वाला, चने वाला, बर्तन वाला, किताब वाला, किराने वाला, दर्जी, फ़कीर, मदारी, शायर, दरोगा जैसे पात्र ठीक वैसे ही बनाये गये हैं। जैसे नज़ीर साहब की शायरी में आगरे को होना बताया गया है।

नज़ीर एक ऐसा शायर था, जिसके रग–रग में बृज की मिठास, रंग और संस्कृति समाये हुए थे। वही एक ऐसा व्यक्तित्व थे, जिनकी आँखों में दूसरों के आँसू थे, और जिह्वा पर शायरी की मिठास। सही मायने में ऐसा कवि भविष्य में सम्भवतः समाज को न मिल पाये और बारम्बार आपके मुँह से अन्त में यही शब्द प्रस्फुटित हों कि–

"आशिक कहो, दबीर कहो आगरे का है।
शायर कहो, नज़ीर कहो, आगरे का है।।"

नज़ीर अकबराबादी जी को उर्दू नज़्म का पिता माना जाता है। वह जनकवि ही नहीं, बल्कि जन–जन के कवि थे। उन्होंने सामान्य जीवन, ऋतुओं, त्यौहारों,फलों, सब्ज़ियों और न जाने किन–किन विषयों पर भी बहुत लिखा।

''सन्तरा'' शीर्षक से लिखी गयी अपनी रचना में नज़ीर अकबराबादी ने कितने सुन्दरता के साथ उसका प्रस्तुतिकरण कितने सुन्दर ढंग से किया है—

"सन्तरा"

छाती पे हाथ रख के कहा मैंने उससे,
जान मुद्दत में मेरे हाथ ये आया हैसन्तरा।
''गर तुम बुरा न मानो, तो इक बात मैं कहूँ,
यह तो किसी का तुमने चुराया है सन्तरा।।
तुम तोड़ती थीं, आन पड़ा इसमें बागबाँ,
अँगिया में उसके डर से छुपाया है सन्तरा।
यह सुन के उसने हँस दिया और यूँ कहा—
अब हमने इस तरह से पायाहै सन्तरा।।
कूल्हे ही लग रहा है हमारे तमाम उम्र,
जिसको कभी हमने ये दिखाया है सन्तरा।
जब तो'नज़ीर' मैंने ये हँस कर कहा उसे,
मेवा खुदा ने खूब बनाया है सन्तरा।।

धर्म निरपेक्षता की ज्वलन्तता के एक उदाहरण हैं, जिनकी किसी से कोई तुलना नहीं की जा सकती। उन्होंने अपने जीवन में लगभग दो लाख रचनायें कीं, परन्तु उनकी छः हज़ार रचनायें अभी भी मिलने के प्रमाण मिलते हैं, जिनमें से लगभग 600 ग़ज़लें ही ग़ज़लें हैं।

नज़ीर अकबराबादी जी ने कई रचनायें कीं, जिनमें से उनकी लिखी नज़्मों और कविताओं के शीर्षक कुछ इस प्रकार हैं—

- सूफ़ी रंग

- धार्मिक रंग
- मनुष्य जीवन के रंग
- ग़ज़लें
- रुबाइयाँ
- दोहे
- त्यौहार ऋतुएँ मौसम कविताऐं
- मेले, खेल, तमाशे
- नारी श्रृंगार
- पशु–पक्षियों पर कविताऐं
- फलों–सब्जियों खानपान पर कविताऐं
- विविध कविताऐं
- नगर भवनों पर कविताऐं
- किस्सा लैला मजनूँ
- आरसी
- आशिक़ों की भंग
- इश्क़अल्लाह
- इश्क़की मस्ती
- ईद–यूँ लब से अपने निकले है अब बार–बार आह
- ईद–शाद था जब दिल वह था और ही ज़माना ईद का
- ईद उल फ़ितर

- क्या कहें आलम में हम इन्सान या हैवान थे
- ख़ुशामद
- जाड़े की बहारें
- ज़ुल्फ़ के फन्दे
- झोंपड़ा
- दरसनाए पैग़म्बरे ख़ुदा
- पहुँची
- पेट
- पैसा–पैसे ही का अमीर के दिल में ख़्याल है
- पैसा–नक़्श याँ जिस के मियाँ हाथ लगा पैसे का
- फ़क़ीरों की सदा
- फ़ना
- बचपन
- बटमार अजल का आ पहुँचा
- बरसात की बहारें
- बसन्त आलम में जब बहार की आकर लगंत हो
- बसन्त जहाँ में फिर हुई ऐ ! यारो आश्कार बसन्त
- बसन्त फिर आलम में तशरीफ लाई बसन्त
- महादेव जी का ब्याह
- मुफ़्लिसी
- राखी

- रीछ का बच्चा
- रोटियाँ
- शब बरात
- शहरे आशोब (शहर आगरा की दुर्दशा)
- श्री कृष्ण जी की तारीफ़ में
- शेख़ सलीम चिश्ती
- है दुनिया जिस का नाम मियाँ–दार–उल–मकाफ़ात
- होली की बहार
- होली–जब खेली होली नंद ललन
- होली–जब फागुन रंग झमकते हों
- होली पिचकारी
- होली–बजा लो तब्लो तरब इस्तमाल होली का
- होली–बुतों के ज़र्द पैराहन में इत्र चम्पा जब महका
- होली–हुआ जो आके निशाँ आश्कार होली का

नज़ीर अकबराबादी जी ने 200 से अधिक ग़ज़लों की रचना की, जिनमें उनकी कुछ ग़ज़लों के शीर्षक इस प्रकार से हैं–

- अदा–ओ–नाज़ में कुछ कुछ जो होश उस ने सँभाला है
- अब्बलन उस बे–निशाँ और बा–निशाँ को इश्क़ है
- अंदाज़ कुछ और ना–ज़–ओ–अदा और ही कुछ है
- आग़ोश–ए–तसब्बुर में जब मैंने उसे मस्का
- आज तो हमदम अज़्म है ये कुछ हम भी रस्मी काम करें

- आन रखता है अजब यार का लड़ कर चलना
- आया नहीं जो कर कर इक़रार हँसते–हँसते
- इधर यार जब मेहरबानी करेगा
- इश्क़का मारा न सहरा ही में कुछ चौपट पड़ा
- इश्क़फिर रंग वो लाया है कि जी जाने है
- इंकार हम से ग़ैर से इक़रार बस जी बस
- ईसा की क़ुम से हुक्म नहीं कम फ़क़ीर का
- उधर उस की निगह का नाज़ से आ कर पलट जाना
- उस के बाला है अब वो कान के बीच
- उस के शरार–ए–हुस्न ने शोला जो इक दिखा दिया
- उसी का देखना है ठानता दिल
- उसी की ज़ात को है दाइमन सबात–ओ–क़याम
- ऐ दिल अपनी तू चाह पर मत फूल
- ऐ मिरी जान हमेशा हो तिरी जान की ख़ैर
- ऐ सफ़–ए–मिज़्गाँ तकल्लुफ बर–तरफ़
- ऐश कर ख़ूबाँ में ऐ दिल शादमानी फिर कहाँ
- क़त्ल पर बाँध चुका वो बुत–ए–गुमराह मियाँ
- क़स–ए–रंगी से गुज़र ब़ाग–ओ–गुलिस्ताँ से निकल
- कई दिन से हम भी हैं देखे उसे हम पे नाज़ ओ इताब है
- कब ग़ैर ने ये सितम सहे चुप

- कभी तो आओ हमारे भी जान कोठे पर
- कर लेते अलग हम तो दिल इस शोख़से कब का
- कल नजर आया चमन में इक अजब रश्क–ए–चमन
- कल मिरे क़त्ल को इस ढब से वो बाँका निकला
- कहते हैं जिस को नज़ीर सुनिए टुक उस का बयाँ
- कहते हैं याँ कि मुझ सा कोई महजबीं नहीं
- कहने उस शोख़से दिल का जो मैं अहवाल गया
- कहा जो हम ने बहमें दर से क्यूँ उठाते हो?
- कहा था हम ने तुझे तो ऐ दिल कि चाह की मय को तू न पीना
- कहा ये आज हमें फ़हम ने सुनो साहिब
- किधर है आज इलाही वो शोख़छलबलिया
- किस के लिए कीजिए जामा–ए–दीबा–तलब
- किसी ने रात कहा उस की देख कर सूरत
- की तलब इक शह ने कुछ पंद अज़–हक़ीम–ए–नुक्ताँ–दाँ
- कौन याँ साथ लिए ताज–ओ–सरीर आया है
- क्या अदा किया नाज़ है क्या आन है
- क्या कासा–ए–मय लीजिए इस बज़्म में ऐ हम–नशीं
- क्या दिन थे वो जो वाँ करम–ए–दिल–बराना था
- क्या नाम–ए–ख़ुदा अपनी भी रुस्वाई है कम–बख़त
- ख़याल–ए–यार सदा चश्म–ए–नम के साथ रहा

- खींच कर इस माह–रू को आज यहाँ लाई है रात
- खोली जो टुक ऐ हम–नशीं उस दिल–रुबा की ज़ुल्फ़ कल
- गर ऐश से इशरत में कटी रात तो फिर क्या
- गर हम ने दिल सनम को दिया फिर किसी को क्या
- गर्म यां यूं तो बड़ा हुस्न का बाज़ार रहा
- गले से दिल के रही यूँ है ज़ुल्फ़–ए–यार लिपट
- गुलज़ार है दाग़ों से यहॉ तन बदन अपना
- चाहत के अब इफ़शा–कुन–ए–असरार तो हम हैं
- चाह में उस की दिल ने हमारे नाम को छोड़ा नाम किया
- चितवन की कहूँ कि इशारात की गर्मी
- चितवन दुरुस्त सीन बजा बातें ठीक–ठीक
- चितवन में शरारत है और सीन भी चंचल है
- जब आँख उस सनम से लड़ी तब ख़बर पड़ी
- जब उस का इधर हम गुज़र देखते हैं
- जब उस की ज़ुल्फ़ के हल्क़े में हम असीर हुए
- जब उस के ही मिलने से नाकाम आया
- जब मैं सुना कि यार का दिल मुझ से हट गया
- जब हम–नशीं हमारा भी अहद–ए–शबाब था
- जाम न रख साक़िया शब है पड़ी और भी
- जाल में ज़र के अगर मोती का दाना होगा

- ❖ जिन दिनों हम को उस से था इख़्लास
- ❖ जुदा किसी से किसी का ग़रज़ हबीब न हो
- ❖ जो आवे मुँह पे तिरे माहताब है क्या चीज़
- ❖ जो कुछ है हुस्न में हर मह–लक़ा को ऐश–ओ–तरब
- ❖ जो तुम ने पूछा तो हर्फ़–ए–उल्फ़त बर आया
- ❖ जो दिल को दीजे तो दिल में ख़ुश हो करे है किस किस तरह से हलचल
- ❖ जो पूछा मैं ने याँ आना मिरा मंज़ूर रखिएगा
- ❖ ज़हिदो रौज़ा–ए–रिज़वाँ से कहो इश्क़अल्लाह
- ❖ झमक दिखाते ही उस दिल–रुबा ने लूट लिया
- ❖ तदबीर हमारे मिलने की जिस वक़्त कोई ठहराओगे तुम
- ❖ तन पर उस के सीम फ़िदा और मुँह पर मह दीवाना है
- ❖ तने–मुर्दा को क्या तकल्लुफ से रखना–क़िता
- ❖ तिरी कुदरत की कुदरत कौन पा सकता है क्या कुदरत
- ❖ तिरे मरीज़ को ऐ जाँ शिफा से क्या मतलब
- ❖ तुझे कुछ भी ख़ुदा का तर्स है
- ❖ तुम्हारे हाथ से कल हम भी रो लिए साहिब
- ❖ तू ही न सुने जब दिल–ए–नाशाद की फ़रियाद
- ❖ तेरे भी मुँह की रौशनी रात गई थी मह से मिल
- ❖ थी छोटी उस के मुखड़े पर कल
- ❖ थे आगे बहुत जैसे कि ख़ुश यार हमीं से

- दरिया ओ कोह ओ दश्त ओ हवा अर्ज़ और समा
- दामान–ओ–कनार अश्क़ से कब तर न हुए आह
- दिखाई जब तेरे मुखड़े ने आ झलक पै झलक
- दिया जो साक़ी ने साग़र–ए–मय दिखा के आन इक हमें लबालब
- दिल को चश्म़–ए–यार ने जब जाम–ए–मय अपना दिया
- दिल को ले कर हम से अब जाँ भी तलब करते हैं आप
- दिल ठहरा एक तबस्सुम पर कुछ और बहा ऐ जान नहीं
- दिल यार की गली में कर आराम रह गया
- दिल हर घड़ी कहता है यूँ जिस तौर से अब हो सके
- दुनिया है इक निगार–ए–फ़रीबंदा जल्वा ग़र
- दूर से आए थे साक़ी सुन के मयख़ाने को हम
- देख कर कुर्ते गले में सब्ज़ धानी आप की
- दोस्तो क्या क्या दिवाली में नशात–ओ–ऐश है
- धुआँ कलेजे से मेरे निकला जला जो दिल बस कि रश्क खा कर
- न उस के नाम से वाक़िफ़ न उस की जा मालूम
- नजर पडा इक बुत–ए–परी–वश निराली सजधज नई अदा का
- न टोको दोस्तो उस की बहार नाम–ए–ख़ुदा
- न दिल में सब्र न अब दीदा–ए–पुर–आब में ख़्वाब
- न मैं दिल को अब हर मकाँ बेचता हूँ
- न लज़्ज़तें हैं वो हँसने में और न रोने में

- ❖ न सुर्खी गुंचा–ए–गुल में तेरे दहन की सी
- ❖ नहीं हवा में ये बू नाफ़ा–ए–ख़ुतन की सी
- ❖ नामा–ए–यार जो सहर पहुँचा
- ❖ निगह के सामने उस का जूँही जमाल हुआ
- ❖ नीची निगह की हम ने तो उस ने
- ❖ पाया मज़ा ये हम ने अपनी निगह लड़ी का
- ❖ बगूले उठ चले थे और न थी कुछ देर आँधी में
- ❖ ब–हसबे–अकल तो कोई नहीं सामान मिलने का
- ❖ भरे हैं उस परी में अब तो यारो सर–ब–सर मोती
- ❖ मानी ने जो देखा तिरी तस्वीर का नक़्शा
- ❖ मियाँ दिल तुझे ले चले हुस्न वाले
- ❖ मुंतज़िर उस के दिला ता–ब–कुजा बैठना
- ❖ ये कहते हैं कि आशिक छूट जाता है अज़ीयत से–क़िता
- ❖ ये छपके का जो बाला कान में अब तुम ने डाला है
- ❖ ये हुस्न है आह या क़यामत कि इक भभूका भभक रहा है
- ❖ रुख़परी चश्म परी जुल्फ परी आन परी
- ❖ वो मुझको देख कुछ इस ढब से शर्मसार हुआ
- ❖ वो रश्के–चमन कल जो ज़ेबे–चमन था
- ❖ शब–ए–मह में देख उस का वो झमक झमक के चलना
- ❖ हंसे रोये फिरे रुसवा हुए जाके बंधे छूटे
- ❖ हो क्यूँ न तिरे काम में हैरान तमाशा[1]

1 http://wwwnazeerakabrabadiki rachnayen.in

पंचम अध्याय

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में दार्शनिकता का प्रादुर्भाव

1. नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में मनोवैज्ञानिकता और मनमोहक पलों की अन्तःदर्शनता :

वर्तमान का आगरा, जिसे अकबर के नाम से पुकारे जाने वाले अकबराबाद के, ख़्याति प्राप्त शायर ख़्वाजा मीर 'दर्द' साहब ने लोगों को घूमने–फिरने को प्रोत्साहित किये जाने के उद्देश्य से अपने एक शेर में लिखा था–''एक आदमी को पर्यटन करने के लिए ज़रूर जाना चाहिये, क्योंकि घूमने–फिरने की भी एक उम्र होती है। उसके बाद जैसे–जैसे आदमी की उम्र ज़्यादा होती जाती है तो फिर वैसे ही वैसे उसे चलने–फिरने में बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसलिये उन्होंने लिखा–

सैर कर दुनियाँ की ग़ाफ़िल ज़िन्दगानी फिर कहाँ?
ज़िन्दगी गर कुछ रही तो ये जवानी फिर कहाँ?''

जिस पर नज़ीर साहब ने ''ज़िन्दगानी फिर कहाँ?'' शीर्षक से कितना अच्छा लिखा है–

"ज़िन्दगानी फिर कहाँ?"

''देख टुक, ग़ाफ़िल, चमन को,गुलफ़िशानी[1] फिर कहाँ?
येबहारें, ऐश ये, शोरे–जवानी फिर कहाँ ?
साक़ि–ओ–मुतरिब, शराबे–अर्ग़वानी[2] फिर कहाँ ?
ऐश कर खूबाँ में, ऐ दिल, शादमानी[3]फिर कहाँ ?
शादमानी गर हुई, तो ज़िन्दगानी फिर कहाँ ?

ये जो बाँके गुलबदन मिलते हैं सौ–सौ घात से
कुछ मज़े कुछ लूट हिज्र[4] इन गुलरुख़ों की ज़ात से
एकदम हर्गिज़ जुदा मत हो तू इनके साथ से
जिस क़दर पीना हो पीले, पानी इनके हाथ से
आबे–ज़न्नत[5] तो बहुत होगा, ये पानी फिर कहाँ ?
शादमानी गर हुई, तो ज़िन्दगानी फिर कहाँ ?

बड़ी ही सुन्दरता के साथ अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए वे लोगों को सैर करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए आगे कहते हैं कि–

हो केहरदम ख़ूबरूओं,[6] की मुहब्बत में असीर[7]
रवा निगाहे–सूर्मा साक़ी, नायिकों[8] केदिल में तीर
वस्फ़[9] अब इनका जो करना,है सो कर ले दिल पज़ीर[10]
जा पड़े चुप होके जब शहरे–ख़मोशाँ में नज़ीर'
ये ग़ज़ल, ये रेख़्ता, ये शे 'रख्वानी फिर कहाँ ?
देख टुक, ग़ाफ़िल, चमन को,गुलफ़िशानी[1] फिर कहाँ ?[1]

---

1 शीर्षक 'ज़िन्दगानी फिर कहाँ' प्रकाश पण्डित द्वारा सम्पादित लोकप्रिय शायर और उनकी शायरी नज़ीर अकबराबादी प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृष्ठ : 68/69.

शब्दार्थ : 1. फलों की वर्षा, 2. मधुबाला, लाल शराब या गायक, 3.ख़ुशी, 4.लुत्फ़/आनन्द, 5.अमृत,6. ख़ूबसूरतों, 7. क़ैद/बन्दी, 8.सुरमेदार आँखों वाली साक़ी की निग़ाहों और शिकारियों के, 9. यक़ीन/विश्वास, 10. दिल पसन्द।

2.तत्कालीन रचनाकारों द्वारा नज़ीर को महत्वहीन रखना :

जब–जब कहीं भी आगरा का नाम आता है। तब उसके पहले सूर और नज़ीर (सूर और नज़ीर का आगरा) अवश्य जोड़ा जाता है। 'नज़ीर' आगरा उस शायर का नाम है जिसने आगरा की विशेषकर **ब्रज संस्कृति** को आज तक जीवित रखा।

वैसे तो आगरा में मीर तक़ी 'मीर' एवं मिर्ज़ा ग़ालिब के अतिरिक्त एक से बढ़कर एक शायर हुए हैं, परन्तु अधिकतर पैसे और शोहरत के लिए आगरा छोड़ कर चले गए। 'मीर' साहब लखनऊ के नवाब के यहाँ चले गए तो 'गालिब' अपनी जन्म–स्थली आगरा को छोड़कर दिल्ली चले गए और अन्त तक वहीं रहे, परन्तु 'नजीर' दिल्ली से आगरा आए और जीवनपर्यन्त आगरा में ही रहे, या यों कहें कि आगरा के ही होकर रह गए, **उन्होंने अपने नाम के साथ 'अकबराबाद' जोड़ कर यह सिद्ध कर दिया कि मैं आगरे का हूँ।**

नज़ीर की पूरी कविता आगरे की कवितायें हैं। उन्होंने आगरा और ब्रज की कोई भी चीज़ नहीं छोड़ी, जो उनकी कविता में न हो। वे आगरा में रहने वाले हिन्दू, मुस्लिम और सिक्खों के तीज–त्यौहार, उनके देवी–देवताओं, आगरे के खेल–तमाशे, आगरा में पैदा होने वाले फल एवं मेले–ठेले आदि पर अपनी कलम चला कर यहाँ के जनकवि बन गए। वे किसी भी लोभ–लालच, शान–शौक़त और मान–सम्मान को प्राप्त करने के लिए न तो लखनऊ के नवाबों के यहाँ गए और न ही भरतपुर के राजाओं के यहाँ। वे फक़ीरी में रहे, परन्तु आगरे के ही रहे।

'नज़ीर' ने ख़ूब लिखा। जन–जन के लिए लिखा, परन्तु उन्हें जो ख्याति मिलनी चाहिए थी। वह नहीं मिल पायी। उस समय के आलोचकों ने छोटे–छोटे

शायरों की तारीफ़ के पुल बाँधे, परन्तु ‘नज़ीर’ पर और उनकी शायरी पर अपनी कलम नहीं चलाई।

जहाँ मीर तक़ी ‘मीर’, ‘आरजू’ और मिर्ज़ा ‘ग़ालिब’ जैसे उर्दू के शायरों ने आगरा को गौरवान्वित किया है। एक ज़माना वह था कि ‘नज़ीर’ की रचनाएँ इतनी लोकप्रिय थीं कि लोग घर–बाहर, खेत–खलिहान, सड़क, गली–कूचों में गाते फिरते थे। फेरी लगा कर अपना माल बेचने वाले, खेल–तमाशे दिखाने वाले ‘नज़ीर’ की रचनाओं को गा–गाकर अपना पेट भरने का साधन जुटाते थे, परन्तु ब्रज के कण–कण में ‘नज़ीर’ की रचनाएँ आज भी गूँजती हैं।

3.नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में धर्मनिरपेक्षता के दर्शन :

नज़ीर अपनी वाणी और लेखनी से आगरा के पहले हिन्दुस्तानी कवि थे,जिसे धार्मिक भेदभाव छू तक नहीं गया था। वे हिन्दू, मुसलमान, सिख आदि में कोई भेदभाव नहीं मानते थे। वह कहा करते थे–

‘‘आदमी को चाहिए कि वह जाति या धर्म के झगड़े में न पड़े। किसी भी धर्म का मानने वाला क्यों न हो, हँसी–खुशी से ज़िन्दगी काटे। कोई जनेऊ पहने या कुरान लिए रहे सबका सिरजनहार एक ही है, वह न तो हिन्दू है न मुसलमान।‘‘

वह सबको सलाहदेते थे कि–

“झगड़ा न करे मिल्लतो–मज़हब का कोई याँ
जिस राह में जो आन पड़े ख़ुश रहे हैं आँ,
जुन्नार गले या कि बगल बीच हो कुरबाँ,
आशिक़तो कलन्दर है हिन्दू न मुसलमाँ।“

आगरा में नज़ीर के आते–आते मुग़लों का वैभव समाप्त हो चुका था, परन्तु उस समय की सामाजिक परम्पराएँ ज्यों की त्यों चली आ रहीं थीं। उनमें से एक परम्परा पतंगबाजी की भी थी। पतंगबाजी के दंगल अक्सर आगरा में हुआ करते थे, जिनमें हिन्दू, मुसलमान, अमीर और ग़रीब सभी तबके के लोग भाग लेते थे। नज़ीर भी पतंगबाज़ी के शौक़ीन थे। वे भी अपने साथियों के साथ पतंग लेकर वहाँ पहुँच जाते और उनमें भाग लेते थे। तभी तो उन्हें पतंगों की किस्में, उन्हें उड़ाने वाली डोर और मंजा, चरखी आदि का पूरा ज्ञान था। उन्होंने अपनी इस कविता में लगभग 30 प्रकार की पतंगों, उन्हें उड़ाने और पेच लड़ाने के तौर–तरीकों का वर्णन इस प्रकार किया है–

"याँ जिन दिनों में होता है आना पतंगका।
ठहरे है हर मकाँ में बनाना पतंगका।।
होता है कसरतोंसे मँगाना पतंगका।
करता है शाद दिल को उड़ाना पतंग का।।
क्या–क्या! कहूँ मैं शोर मचानापतंगका।
उड़ाना'दोबाज' का है वह शोखी की दस्तगाह।।
देखे तो 'बाज जुर्रे' को हो इसकी दिल में चाह।
'शिकरे' की बाज आवे ने उस जा कभी निगाह।।
बहरी कुही भी देख यह कहती है वाह–वाह।
ऐसा है नाज़ो हुस्न दिखाना पतंग का।।'

जब पतंग कट जाती है। तब लूटने के लिए लोग दौड़ते हैं। नज़ीर ने उस समय का वर्णन इन सुन्दर पंक्तियों में किया है–

"कटती है जो पतंग तो फिर लूटने उसे।

दो–दो हज़ार दौड़ते हैं, छोटे और बड़े।।
कागरा ज़रा सा मिलता है या टुकड़े काँप के।
जब इस तरह की सैर भला आन कर पड़े।।
फिर सोचिये तो क्या है ठिकाना पतंग का?"

ब्रज में मेलों का बहुत महत्व है। विभिन्न अवसरों पर इस क्षेत्र के नगर और ग्राम में मेलों का आयोजन होता है। नज़ीर को भी मेलों में भाग लेने, उन्हें देखकर आनन्द प्राप्त करने का शौक़ था। यही कारण है कि उन्होंने बल्देव जी का मेला, कंस का मेला, लल्लू जगधर का मेला, हज़रत सलीम चिश्ती का उर्स तथा आगरे की तैराकी आदि मेलों का वर्णन अपनी कविताओं में किया है। नज़ीर के समय में आगरा की तैराकी एक समृद्ध मेले के रूप में प्रचलित थी। समाज का हर वर्ग इस मेले का आनन्द लेने के लिए यमुना के दोनों किनारों पर इकट्ठा होता था। नज़ीर भी उस दिन सज–धज कर वहाँ पहुँचते थे। तैराकों की टोलियाँ अपने–अपने निशान (झंडे) लेकर ढोल–बाजों के साथ वहाँ पहुँचती थीं। नज़ीर ने इस मेले का बहुत ही सुन्दरता के साथ सजीव वर्णन किया है।

नज़ीर यथार्थवादी कवि थे। जन–जीवन में इतने घुल–मिल गए थे कि उससे अलग उनका अस्तित्व ही नहीं रह जाता। उन्होंने जो कुछ भी कहा जन–सामान्य के विषय में कहा। जन–सामान्य के लिए कहा और जन–सामान्य की भाषा में कहा। उनकी कुछ रचनायें मानव जीवन के यथार्थ के साथ–साथ दार्शनिक तथ्यों को भी उजागार करती हैं।

इस प्रकार उनकी 'मौत' नाम की कविता की यह पंक्तियाँ देखिये–

"दुनियाँ में अपना जी कोई बहला के मर गया,
दिल तंगियों से और कोई उकता के मर गया।

आकिल था वह तो आपको समझा के मर गया,

जीता रहा न कोई हर इक आ के मर गया।।"

नज़ीर की "आदमीनामा' नाम की कविता अपनी अलग ही विशेषता लिये हुए है।

सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोंण से ही नहीं, नज़ीर की कुछ कविताएँ ऐतिहासिक महत्व की भी हैं। इनमें 'शहरे–आशोब' (शहर आगरा की दुर्दशा) प्रमुख है। 18वीं शताब्दी के उजड़े हुए आगरे का इसमें आँखों देखा बड़ा करुणामय चित्रण है। आगरे का व्यापार चौपट हो गया है और व्यापारी बर्बाद हो गये हैं–

"सर्राफ, बनिये, जौहरी और सेठ साहूकार।

देते थे सबको नकद सो खाते हैं अब उधार।।

बाजार में उड़ेहै पड़ी खाक बेशुमार।

बैठे हैं यूँ दुकानों में अपनी दुकानदार–

जैसे कि चोर बैठे हों कैदी कतार बंद।।"

उस समय शहर के कारीगरों की भी बड़ी ही दयनीय स्थिति थी। जिस पर उन्होंने लिखा–

"ज़र के भी जितने काम थे वह सब दुबक गये,

और रेशमी किवाम यकसर चटक गये।

ज़रदार उठ गये तो बटैये सरक गये,

चलने से काम तारकशों के भी थक गये।।

क्या हाल बाल खींचे जो हो जाये तार बंद।।"

जब राजनीतिक उथल–पुथल से शहर की वैभवता समाप्त हो गयी। चारों ओर हा–हाकार मच गया। तब पढ़ाई–लिखाई, धर्म और सामाजिकता की ओर से लोगों के मन के हठने से शहर में लोगों में पढ़ने–पढ़ाने का काम भी समाप्त हो गया। तब नज़ीर अकबराबादी जी ने लिखा–

"आमद न खादिमों के तईं मकबरों के बीच,
बामन भी सर पटकते हैं सब मन्दिरों के बीच।
आजिज़ हैं इल्म वाले भी सब मदरसों के बीच,
हैराँ हैं पीरजादे भी अपने घरों के बीच।।
नज़रों नियाज़ हो गई सब एक बार बंद।।"

जब दरबार न रहा तो दरबार के साथ जुड़े लोगों की रोजी–रोटी चली गयी और वे शहर छोड़कर भागने लगे। जिस पर नज़ीर साहब ने लिखा–

जितने सिपाही याँ थे न जाने किधरगये।
दक्खिन के तईं निकल गये यों पेशतर गये।।
हथियार बेच, हो के गदा घर व घर गये।
जो घोड़े, भाले वाले भी यूँ दरबदर गये।।
फिर कौन पूछे उनको जो अब हैं कटार बंद?"

उन्होनें 18वीं शताब्दी के आगरे का यह हाल आँखों से देखा और अत्यन्त दुःखी होकर उन्होंने यह वर्णन किया है। इससे ये दृष्टव्य होता है कि सेठ, साहूकार, कारीगर और धार्मिक लोग इस काल में ही आगरे से जयपुर के लिये पलायन कर गये थे, जहाँ सवाई राजा जयसिंह ने उन्हें दूरदर्शिता पूर्वक सभी सुविधायें प्रदान करायीं और उनके लिये एक नया नगर बसाया और अपने जयपुर

को समृद्ध किया। जयपुर आगरे के ही सांस्कृतिक और आर्थिक खण्डहरों पर बना और विकसित हुआ।

नज़ीर स्वाभिमानी एवं स्वतन्त्र प्रकृति के कवि थे। उन्होंने कभी किसी राजा, नवाब या रईस की प्रशंसा में एक पंक्ति भी नहीं लिखी। वे न तो लालची थे और न उन्हें किसी की खुशामद करना ही पसंद था। उस समय लखनऊ के नवाब सआदत अली खाँ का शासन था। नवाब साहब स्वयं शायरी के शौक़ीन थे। उन्हें जब नज़ीर की ग़रीबी का पता चला तो उन्होंने नज़ीर को अपने यहाँ बुलाने के लिए आदमी भेजे। भेंटस्वरूप कुछ धन भी भेजा। उन्होंने लखनऊ जाने का वायदा भी कर लिया, परन्तु उन्हें उन रुपयों से कुछ ऐसी ग्लानि हुई कि रात–भर नींद नहीं आई। सुबह उठकर उन्होंने वे रुपये वापस कर दिए और कह दिया– "बादशाह से मेरा सलाम कहना। मेरी तरफ से माँफी माँगना और अर्ज़ करना कि नज़ीर तो फ़कीर है और फ़क़ीर तो अपनी झोंपड़ी में ही खुश है। शाही महलों में रहना उसकी तक़दीर में नहीं है।"

इसी प्रकार भरतपुर के राजा ने भी उन्हें अपने यहाँ बुलाया, तो भी उन्होंने वहाँ जाने से इन्कार कर दिया। वे धन–दौलत को बुरी चीज़ समझते थे। अपनी एक कविता में उन्होंने लिखा भी है–

"ज़र की जो मुहब्बत तुझे पड़ जायेगी बाबा,
दुःख इससे तेरी रूह बहुत पायेगी बाबा।
हर खाने को हर पीने को तरसायेगी बाबा,
फिर क्या तुझे अल्लाह से मिलवायेगी बाबा?"

4.नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं में संगीतात्मकता का प्रभाव :

नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं का विश्लेषण किये जाने पर ऐसा लगता है कि उन्हें राग, ताल, लय और सुरों का भी अच्छा ज्ञान था। सम्भवतः यही कारण रहा होगा कि उनकी कविताओं में कई प्रकार के राग, ताल, लय और सुर व्याप्त थे।

यदि ऐसा ना होता तो वे दोहे कैसे लिख देते? क्योंकि दोहा भी लोक संगीत की वह एक विधि है, जो गायन शैली में प्रचलित है। ये दोहा प्रायः हिन्दी साहित्य में ही पाये जाते हैं। मुख्यतः दोहे भारत की हिन्दू जाति को छोड़कर किसी भी अन्य जाति में प्रचलित नहीं है। दोहा को जानने के लिये हमें हिन्दी साहित्य व व्याकरण के हिसाब से इसके अर्थ को भली–भाँति समझना होगा।

"मैट्रिक्स मीटर में रचित कविता में स्व–निहित तुकबन्दी दोहा का एक रूप है। कविता की यह शैली पहले अपभ्रंश में आम हो गयी और आमतौर पर हिन्दुस्तानी भाषा की कविता में इसका प्रयोग किया गया। यहाँ यह भी उल्लेखनीय होगा कि सबसे पहले दोहा में सरापा, कबीरदास, मीराबाई, रहीमदास, तुलसी दास और सूरदास ही प्रसिद्ध हुए हैं।"[1]

भारतीय काव्य में दोहों का एक अपना अलग ही स्थान है। दोहों का प्रयोग जो मूलतः किया गया था वह भक्ति भाव से जनमानस में जीवन के दृष्टिकोंण को सहज और सरल भाषा में पहुँचाने के उद्‌देश्य से किया गया था।

दूसरे शब्दों में ये भी कहा जा सकता है कि दोहा अर्धसम वह गणतीय छन्द होता है, जिसका अर्थ दो पंक्तियाँ होता है। दोहों को जिस महानुभावों द्वारा

---

1 http://hi.quora.com

लिखा गया वह चार चरणों में लिखा गया। इसके सेम स्टेज यानि पहले और तीसरे चरण में 13–13 मात्रायें होती हैं और उसके बाद एक अल्पविराम का चिन्ह लगाया जाता है, जिसमें 13–13 मात्रायें होती हैं और इसके दूसरे सेम स्टेज यानि दूसरे और चौथे चरण में 11–11 मात्रायें होती हैं, जिसमें पहले चरण में एक पूर्ण विराम लगाया जाता है, जो दोहे की पहली लाइन के अन्त में लगाया जाता है और दोहे की जो दूसरी लाइन होती है उसमें दो पूर्ण विराम की मात्रायें लगायी जाती हैं। जैसे रहीमदास जी ने अपने एक दोहे में लिखा है–

"रहिमन वे नर मर चुके, जो कछु माँगन जाँय।
उनसे पहले वे मुये, जिन मुख निकसत माँय।।"

या जैसे– कवि सन्त कबीरदास जी ने अपने एक दोहे में जनता को सीख देते हुए लिखा था–

"बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं, फल लागै अति दूर।।"

दोहे मुख्यतः 23 प्रकार के होते हैं–

1. भ्रमर
2. नर
3. करभ
4. मार्कट
5. माण्ड्रक
6. श्येन
7. शरभ्
8. शुभ्रम्

9. त्रिकल
10. पैन
11. बल
12. पयोधर
13. ज्ञान
14. सर्प
15. श्वान
16. उदर
17. विडाल
18. व्याल
19. अविहार
20. शारदुल
21. मच्छ
22. कच्छप
23. हँस

जैसे हनुमान चालीसा का पाठ करते में अन्त में दोहा आता है–

"लाल देह लाली लसै, अरु धरि लाल लंगूर।
बज्र देह दानव दलन, जय जय जय कपि सूर।।"

जैसे भारत के प्रसिद्ध कवि बिहारीजी ने अपनी "बिहारी सतसई" में इस दोहे को लिखा–

"मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जातन की झाँई पैर, स्यामु हरित दुति होय।।"

जैसे “कबीर अमृतवाणी” में कबीरदास जी ने अपना ये दोहा लिखा–

“बुरा जो देखन मैं चला, बुरा ना मिलिया कोय।
जो दिल खोजा आपना, मुझ से बुरा ना कोय।।”

जैसे मध्यकाल के सूफ़ी कवि रहीम दास जी ने अपने इस दोहे को लिखा–

“रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाय।
टूटे से फिर ना जुड़े, जुड़े गाँठ पड़ जाय।।”

मध्य कालीन भारतीय इतिहास के प्रसद्धि सन्त कबीरदास जी द्वारा अन्य लोगों तक भक्ति और जीवन का पाठ पहुँचाने के लिये आसान और सरल शब्दों का प्रयोग करके दोहों को बनाया गया था।

नज़ीर साहब ने अपनी रचना “सोजे फिराक (विरह की आग)” की रचना की।

मुझे ऐ दोस्त! तेरा हिज्र अब ऐसा सताता है।
कि दुश्मन भी मेरे अहवाल पर आँसू बहाता है।।
ये बेताबी ये बेख्वाबी ये बेचैनी दिखाता है।
न दिल लगता है घर में और न सेहरा मुझको भाता है।।
अगर कुछ मुंह से बोलूँ तो मजा उल्फ़त का जाता है।
अगर चुपका ही रहता हूँ कलेजा मुंह का आता है।।

दोहा– **कूक करूँ तो जग हँसे, चुपके लागे घाव।**
ऐसे कठिन सनेह का, किस बिध करूं उपाव।।

न था मालूम उल्फ़त में कि गम खाना भी होता है।
जिगर की बेकली और दिल का घबराना भी होता है।।
सिसकना, आह भरना, अश्क़ भर लालना भी होता है।
तड़पना, लोटना, बेताब हो जाना भी होता है।।
किये पर अपने फिर आपी को दुख पाना भी होता है।
कफे–अफ़सोस को मल मल के पछताना भी होता है।।
अगर दानिस तमज रोजे अजल दागे जुदाई रा।
न मी करदम व दिल रोशन चिरागे आशनाई रा।।

दोहा– **जो मैं ऐसा जानती, प्रीति करे दुख होय।**
नगर ढ़िढ़ोरा पीटती, पीतन की जौ कोय।।

सहर से शाम तक सहरा में फिरता दिन को मनमारे।
लगाकर शाम से ता सुबह गिनता रात के तारे।।
लबों पर आह दिल में दाग जों आतिश के अंगारे।
जिसे दिल चाहता है उसको कुछ परवाह नहीं बारे।।
जब उसकी ही ये मर्जी है तो चुप बैठे हैं बेचारे।
मगर उसके तसव्वुर में यही कहते हैं ऐ प्यारे।।
जिहाले मन कि चूनम बे रख्त दारी खबर याना।
दिले मन सोख्त आया दर्दिलत वाशद असरयाना।।

दोहा– **आह दई कैसी भई, अनचाहत के संग।**

दीपक को भावै नहीं, जलजल मरै पतंग।।

कभी होकर गिरेबाँ चाक सेहरा को निकलता हूँ।
कभी घबराके फिर घर की तरफ नाचार चलता हूँ।।
लगी है आग दिल में शमा सा जलकर पिघलता हूँ।
धुंआ उठता है आहों का बरंगे मोम गलता हूँ।।
बदन में देखकर शोला भड़कते हाथ मलता हूँ।
भभूके तन से उठते हैं सती की तरह जलता हूँ।।
जिताबे आतिशे दूरी कि मी सोजद दिलों जाँरा।
नमूदह नब्जे मनपुर आबला दस्ते तबीं बाँरा।।

दोहा– **विरह आग तन मैं लगी, जरन लगे सब गात।**

नारी छूबत वैद के,पड़े फफोला हाथ।।

ना हो दिल क्यूं कि टुकड़े और न जाँ किस तौर घबरावे।
दरो दिवार से क्यूं कर न कोई सर को टकरावे।।
लगी जो आग दिल में फिर वह बुझने किस तरह पावे।
मगर जिसने लगाई हो, वहीआकर बुझा जावे।।
चु दरदिल आतिशे दूरी फितर ऊरा कि बिन शानद।
मगर आँ कस कि आतिशजद हमां आवे बर अफ्सानद।।

दोहा– **हिरदे अंदर दौ लगी, धुवां न परगट होय।**

जा तन लागे सो लखे, या जिन लाई सोय।।

कहाँ तक खाइये गम, अब गम खाया नहीं जाता।
दिले बेताब को बातों से, बहलाया नहीं जाता।।
कदम रखता हूँ जिस जा, वाँ से सरकाया नहीं जाता।
यह पत्थर हाथ से तिल भर भी उकसाया नहीं जाता।।
पड़ा हूँ दश्त मैं रस्ता कहीं पाया नहीं जाता।
जो चाहूं भाग जाऊँ भाग भी जाया नहीं जाता।।
मकाने यारो दूरज मन न परदारम न पाए दिल।
अजब दर मुश्किलुफ्तादम चि साँ ते साजम ई मंजिल।।

दोहा– **ना मेरे पंख न पाँव बल, मैं अपंग पिय दूर।**

उड़ न सकूं गिर–गिर पडूं, रहूँ बिसूर बिसूर।।

इधर दिल मुझसे कहता है, तू चल यार के डेरे।
उधर तन मुझको कहता है, कि तू मत मुझको दुख देरे।।
जो कहना दिल का करता हूँ, तो रहता वह घर मेरे।
मगर तन की सुनूं तो और दुख पड़ते हैं बहुतेरे।।
न दिल माने, न तन माने हरइक अपनी तरफ फेरे।
करूँ क्या मैं 'नजीर' ऐसी, जो मुश्किल आन कर घेरे।।
दिलम दिलदार मी जोयद तनम आराम मी ख्वाहिद।
अजाइब कशमकश दारम कि जानम मुफ्त भी काहिद।।

दोहा– **दिल चाहे दिलदार को, और तन चाहे आराम।**

दुविधा में दोनों गये, माया मिलीनइ राम।।[1]

नज़ीर साहब की संगीत में पकड़ न होती तो वे अपनी रचना "कन्हैया बालपन" को राग बहार–ताल दादरा में कैसे लिख सकते थे। उन्होंने लिखा–

पद–3

उनको तो बालपन से न था काम कुछ जरा,
संसार की जो रीत थी उसको रखा बजा।
मालिक थे वह तो आपी, उन्हें बालपन से क्या?
वाँ बालपन, जवानी, बुढ़ापा सब एक था।।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।

पद–4

बाले थे बिर्जराज, जो दुनियाँ में आ गये,
छीला के लाख रंग तमासे दिखा गये।
इस बालपन के रूप में कितनों को भा गये,
एक यह भी लहर थी जो जहाँको जता गये।
ऐसा था बाँसुरी के बजैया का बालपन,
क्या–क्या कहूँ मैं कृष्ण–कन्हैया का बालपन।।

---

1 नज़ीर अकबराबादी रचनावली भाग–2, सम्पादक– रूपा गुप्ता एवं अनीता देवी, पृष्ठ 477–480.

उन्होंने राग पीलू को ताल कहरवा में भी लिखा। अपनी एक रचना "ऐसी बजाई कृष्ण कन्हैया ने बाँसुरी" –

पद–3

मोहन की बाँसुरी के मैं क्या–क्याकहूँ जतन,
ले उसकी मन की मोहिनी धुनउसकी चितहरन।
उस बाँसुरी का आन के जिस जा हुआ वजन,
क्या जल, पवन, 'नज़ीर' पखेरू व क्या हरन
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरीहरी,
ऐसी बजाई कृष्ण–कन्हैया ने बाँसुरी।।[1]

नज़ीर साहब ने राग धनाश्री को ताल तिताल में भी गाया। उनका ये पद भी उसकी एक बानगी है–

पद–3

जिस सिम्त नजर कर देखें हैं,
उस दिलवर की फुलवारी है।
कहीं सब्जी की हरियाली है,
कहीं फूलों की गुलक्यारी है।।
दिन–रात मगन खुस बैठे हैं
और आस उसी की भारी है।
बस, आप ही वो दातारी हैं,
और आप ही वो भंडारी हैं।।

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 307.

हर आन हँसी, हर आन खुशी,

हर वक्त अमीरी है बाबा!

जब आशिक मस्त फकीर हुए,

फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

राग कज़री को ताल तिताल में भी नज़ीर साहब ने अपनी रचना की। देखिये इस पद को कि कितनी खूबसूरती से उन्होंने लिखा है—

पद—4

सब होस बदन का दूर हुआ,

जब गत पर आ मिरदंग बजी।

तन भंग हुआ, दिल दंग हुआ,

सब आन गई बे आन सजी

यह नाचा कौन 'नजीर' अब याँ,

और किसने देखा नाच अजी !

जब बूँद मिली जा दरिया में

इस तानका आखिर निकला जी।।

हैं राग उन्हीं के रंग— भरे,

औ भाव उन्हीं के साँचे हैं।

जो बे—गत बे—सुरताल हुए,

बिन ताल पखावज नाचे हैं।।[1]

[1] पुस्तक : भजन संग्रह. रचना : नज़ीर अकबराबादी. प्रकाशकः गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 309.

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ</u>

नज़ीर अकबराबादी जी की रचनायें जिन स्रोतों से शनैः–शनैः प्राप्त होती गयीं। उनके सन्दर्भ स्रोत/सन्दर्भ ग्रन्थ और उनके पतों का विवरण निम्नवत् है–

क्रमसंख्या	**पुस्तक का नाम**	**लेखक, सम्पादक और प्रकाशक नाम व पता।**
1.	नज़ीर अकबराबादी और उनकी शायरी।	सम्पादक– सरस्वती सरन कैफ़। प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस,दिल्ली,कश्मीरी गेट, चावड़ीबाजार, दिल्ली–110006.
2.	नज़ीर अकबराबादी के काव्य में यथार्थ बोध।	लेखक : डॉ0 शमसाद अली। प्रकाशक : अनिरुद्ध बुक्स,19, टैगोर मार्ग, केवल पार्क,आजादपुर नई दिल्ली.
3.	नज़ीर ग्रन्थावली (कवि नज़ीर (अकबराबादी की रचनाओं का संग्रह)।	प्रकाशक : उत्तर प्रदेशहिन्दी संस्थान,राजर्षिपुरुषोत्तम दास टण्डनहिन्दी भवन,महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ–226001.
4.	नजीर अकबराबादी रचनावली (भाग–1)।	सम्पादक : रुपा गुप्ता + अनीता देवी। प्रकाशक प्रकाशक : स्वराज प्रकाशन, प्रकाशन,4643/1, 21 अंसारी रोड,दरियागंज, नई दिल्ली–110002.

5.	नजीर अकबराबादी रचनावली (भाग–2).	सम्पादक : रुपा गुप्ता + अनीता देवी। प्रकाशक प्रकाशक : स्वराज प्रकाशन, प्रकाशन,4643/1, 21 अंसारी रोड,दरियागंज, नई दिल्ली–110002.
6.	नज़ीर अकबराबादी की काव्य भाषा –1.	प्रकाशक : आशा पब्लिशिंग कम्पनी, एच.आई.जी. एच–24,तृतीय मंज़िलबाईपासरोड, आगरा पिन कोड–282004.मोबाइल : 9219636250.
7.	नज़ीर अकबराबादी (www.iakhina.com)	लेखिका : डॉ0 ज्योत्सना रघुवंशी।सम्पादक : तापोश चक्रवर्ती। प्रकाशक : भारत ज्ञान विज्ञान समिति, वाई. डब्ल्यू.ए., हॉस्टल नम्बर द्वितीय, जी–ब्लॉक, साकेत, नई दिल्ली–110017.
8.	आगरा की साँस्कृतिक धरोहर : जनकवि नज़ीर अकबराबादी।	आगरा की लेखन एवं सम्पादन : डॉ0 प्रणवीर सिंह चौहान। प्रकाशक : उदयनशर्मा स्मृति फाउण्डेशन फाउण्डेशन ट्रस्ट, दिल्ली।

		कार्यालय : जी–12, सैक्टर–27, नोएडा,गौतमबुद्ध नगर–203001.(उ.प्र.).
9.	नज़ीर काव्य नज़ीर काव्य संग्रह।	उदय शंकर शास्त्री प्रकाशक : उजाला प्रकाशन, आगरा। जॉन्स लाइब्रेरी में किताब / Dbua/CHI
10.	भाषा और समाज।	(सुप्रसिद्ध समालोचक एवं साहित्यकार) डॉ0 रामविलास शर्मा।
11.	ज़िन्दगानी–ए–बेनज़ीर।	लेखक प्रो0 शाहबाज़
12.	इन्तख़्वाबे कुलियाते नज़ीर।	लेखक : अब्दुलबारी आसी।
13.	भक्ति गीतों का संग्रह।	संग्रहकर्ता व प्रकाशकगीता प्रेस गोरखपुर।
14.	नज़ीरवाणी	लेखक : फ़िराक गोरखपुरी। प्रकाशक : इलाहाबाद लॉ जनरल, प्रेस इलाहाबाद।
15.	कविवर नज़ीर अकबराबादी के हिन्दी काव्य का आलोचनात्मक अध्ययन।	लेखक : डॉ0 दामोदार वशिष्ठ। प्रकाशक : शोध प्रबन्ध प्रकाशन नई सड़क दिल्ली (1973)।
16.	नज़ीर स्मारिका।	प्रकाशक : (फरवरी–1978) में बज़्मे नज़ीर, आगरा।
17.	नज़ीर अकबराबादी (1986)।	प्रो0 मोहम्मद हसन (उर्दू में)

		हिन्दी अनुवादक–यामीन परवेज़ प्रकाशक : साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
18.	मध्यकालीन भारत का इतिहास।	लेखक : डॉ0 मोहनलाल गुप्ता (सहायक निदेशक : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर (राजस्थान)। प्रकाशक : राजस्थानी ग्रन्थागार, प्रथम माला, गणेश मन्दिर के पास, सोजत गेट, जोधपुर (राजस्थान)।
19.	नज़ीर अकबराबादी की प्रोफ़ाइल।	रेख्ता–Rekhta LCCN n880 12870 स्रोतः www.rekhta.org>nazir akbrabadi.
20.	भारत के मुस्लिम सुल्तान भाग–2।	लेखक : पुरुषोत्तम नागेश ओक (पी. एन.ओक)प्रकाशक : सूर्य प्रकाशन, नई दिल्ली–110006अध्याय–9 अन्य दुर्लभ मुगल, पृष्ठ 193–197.
21.	उत्तर मध्यकालीन भारत।	(1707–1740) प्रकाश पाण्डेय की सीरीज। लेखक : सतीशचन्द्र प्रकाशक : हिन्दी माध्यम कार्यालय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

		बैरक नम्बर–2 और 4, कैवेलरी लाइन, दिल्ली–110007.
22.	''नज़ीर अकबराबादी व्यक्तित्व और कृतित्व।''	सन् 2004 में गोहाटी विश्वविद्यालय, के हिन्दी विभाग से डॉ0 धर्म देव तिवारी के निर्देशन में शोधार्थी सायरा जमाली द्वारा किया गया शोध।
23.	संगीत परिचय।	(पुस्तक– बी.ए. संगीत गायन प्रथम वर्ष विभाग–मानविकी विद्याशाखा। प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्तविश्व विद्यालय, तीन पानी, बाईपासरोड, ट्रांसपोर्ट नगर के पीछे, हलद्वानी–263139.

अध्ययन स्रोत

1. राजकीय पुस्तकालय, राजकीय इण्टर कॉलेज के सामने पचकुइयाँ रोड, शाहगंज, आगरा।

2. डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय तत्कालीन आगरा विश्वविद्यालय, आगरा की सेण्ट्रल लाइब्रेरी, स्थित पालीवाल पार्क, आगरा।

3. केन्द्रीय हिन्दी संस्थान का पुस्तकालय, स्थित मऊ रोड खन्दारी आगरा–282007.

4. पी. के. विश्वविद्यालय पुस्तकालय, स्थित पी. के. विश्वविद्यालय परिसर, शिवपुरी (म0प्र0)।

5. अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ0प्र0)।

6. उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, तीन पानी, बाईपास रोड, ट्रांसपोर्ट नगर के पीछे, हलद्वानी–263139.

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 02, Issue 11, November 2023

लैंगिक हिंसा और मानवीय गरिमा

[1]हृदेष कुलश्रेष्ठ
[1]डॉ. विक्रान्त शर्मा
[1]शोधकर्ता
[1]विभागाध्यक्ष, कला संकाय हिन्दी विभाग, पी.के.यूनिवर्सिटी, करैरा, शिवपुरी, मध्य प्रदेश।

Received: 25 September 2023 Accepted and Reviewed: 30 September 2023, Published : 01 Nov 2023

Abstract

इस शीर्षक पर अपने आलेख को आगे बढ़ाने से पहले हमें हिंसा के सम्बन्ध में समीचीन (Accurate) जानकारी करना अपेक्षित होगा। ''स्वयं, किसी व्यक्ति अथवा समूह या समुदाय के विरुद्ध जानबूझकर उन्हें किसी प्रकार के मानसिक या शारीरिक चोट पहुँचाने के उद्देश्य से किये गये अप्रिय शक्ति के प्रयोग को हिंसा कहा जाता है।''

शब्द संक्षेप– भारतीय समाज, लैंगिक हिंसा, मानवीय गरिमा, दशा एवं दिशा।

Introduction

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने हिंसा को परिभाषित करते हुए कहा है कि– ''स्वयं के विरुद्ध, किसी अन्य व्यक्ति या किसी व्यक्ति समूह या समुदाय के विरुद्ध शारीरिक बल या शक्ति का साभिप्राय उपयोग हिंसा है। चाहे वह धमकीस्वरूप या वास्तविक मारपीट, जिसके परिणाम या उच्च सम्भावनायें चोट, मृत्यु, मनोवैज्ञानिक क्षति, दुर्बलता या कुविकास पतन के रूप में होते हैं।''

हिंसा तीन प्रकार की हो सकती हैं –

(i) स्वयं के द्वारा निर्देशित की जाने वाली हिंसा।

(ii) किसी व्यक्ति के स्वयं के द्वारा की जाने वाली हिंसा।
और

(iii) कई लोगों अथवा उनके समूह द्वारा किसी व्यक्ति या किन्हीं व्यक्तियों के समूह पर किया जाने वाला आक्रामक कृत्य,

जिनमें –
शारीरिक
यौन
मनोवैज्ञानिक
और भावनात्मक हिंसा क्रियायें होना स्वाभाविक होता है।

इसी विषय की श्रृंखला को आगे बढ़ाते हुए जब हम लैंगिक हिंसा के बारे में विचार करते हैं तो पता चला है कि ये तो अत्यन्त ही गम्भीर विषय है? ये मात्र भारत में नहीं, बल्कि विश्व स्तर पर व्याप्त है। हम जब अपने भारत वर्ष की लैंगिकता पर बात करते हैं तो पता चलता है कि भारत के संविधान के भाग 3 में दिये गये मौलिक अधिकारों में सूचीबद्ध किये गये समानता के अधिकारों को भी स्थान दिया गया है, जिसमें यहाँ के नागरिकों को मिले मूल अधिकारों के अन्तर्गत ''समानता के

अधिकार'' को संविधान के अनुच्छेद 14 से 18 तक ''विधि के समक्ष समानता'' को विस्तृत रूप से इसे अर्थान्वित किया गया है संविधान का अनुच्छेद 15(1) इस बात की व्यवस्था करता है कि राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या क्षेत्र या स्थान विशेष में जन्मे किसी भी व्यक्ति के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। अब बात आती है कि जब भारतीय संविधान में भारतीयों के लिये और विदेशों में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों में लिंग–भेद न किये जाने के सम्बन्ध में व्यवस्थायें हैं तो लैंगिक हिंसा कैसी?

क्या ये मानवीय गरिमा को प्रभावित नहीं करतीं ?
क्या इससे हमारे देश की संस्कृति प्रभावित नहीं होती ?

क्या इस लैंगिक हिंसात्मक गतिविधियों के चलने से विश्व पटल पर गलत सन्देश नहीं जाता? एक ओर जहाँ ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' अर्थात् धरती ही परिवार है, का उद्घोष करने वाले भारत वर्ष की सनातन संस्कृति में ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः को मान्यता दी जाती है। तो वहीं दूसरी ओर महिलाओं के साथ होने वाले पक्षपातपूर्ण रवैया, भेदभाव, उनकी हत्या और जन्म हत्यायें इस लैंगिक पक्षपात और हिंसा का कितना डरावना पहलू है।

उल्लेखनीय है कि हमारे देश में महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों का लिंगानुपात बहुत है। संयुक्त राष्ट्र संघ यूनाइटेड नेशन वोर्ल्डोमीटर के अनुसार 26 जुलाई, 2021 तक भारत की जनसंख्या 139,44,20,224 थी, जो 31 जुलाई, 2023 तक 142,97,09,500 पहुँच गयी है, जिनमें सबसे ज्यादा जनसंख्या वाला प्रदेश उत्तर प्रदेश है।

पहले भारत में प्रति 1000 व्यक्तियों पर मात्र 940 महिलायें ही हुआ करती थीं, जो एक चिन्ता का विषय था। इसी विषय पर सन् 1990 में नोबल पुरुस्कार विजेता भारतीय अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने भारत में महिलाओं के अनुपात पर चिन्ता व्यक्त की और महिलाओं की कमी को ''मिसिंग वूमैन'' शब्द का प्रयोग करते हुए कहा था कि प्रति 1000 पुरुषों के बीच महिलाओं की संख्या 927 थी। ऐसी स्थिति में इस समस्या का सामना किये जाने से मुक्ति दिलाये जाने के लिये भारत सरकार द्वारा ''बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ'' का अभियान शुरू किये जाने से अब महिलाओं का अनुपात बढ़ा है। राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य विभाग द्वारा कराये गये सर्वे के अनुसार अब पहली बार पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। अब 1000 पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या 1020 हो गयी है। लेकिन मानवीयता की पराकाष्ठा तो तब हो जाती है। जब हम महिलाओं के साथ होते हिंसा और अत्याचारों पर दृष्टिपात करते हैं। आपको याद होगा कि पहले जब किसी परिवार में कोई महिला शिशु जन्म लेती थी तो उसे खाट के पाये के नीचे दबाकर मार डाला जाता था। फिर एक ओर जैसे–जैसे समाज का विकास हुआ। शिक्षा का स्तर बढ़ता गया। वैसे ही वैसे लोगों में परिवार में जन्म लेने वाली लड़कियों की अपेक्षा लड़कों की चाहत बढ़ती चली गयी और दूसरी ओर चिकित्सा के क्षेत्र में विकास हुआ, जिसमें एक लिंग परीक्षण की तकनीक आयी। लड़के की चाहत में लोगों ने प्रसव से पूर्व लिंग परीक्षण कराना शुरू कर दिया, जिससे भ्रूण हत्याओं में वृद्धि होती गयी। सामाजिक मान्यताओं में लड़के को कुलदीपक माना जाने लगा। दुर्भाग्यवश किसी परिवार में किसी महिला के लड़का होने की चाहत में 10 की संख्या तक लड़कियों ने जन्म लिया

तो उन परिवारों में महिलाओं के साथ वैचारिक मतभेद शुरू होने लगे। लोगों ने उन्हें ताहिने देना/तंज कसना शुरू कर दिया और पति व सास ने उनकी पिटाई करना षुरू कर दिया, जिसका परिणाम महिलाओं को ही भुगतना पड़ा। उनके साथ आये दिन पक्षपात किया जाना, मानसिक यातनायें, शारीरिक यातनायें और खुले आम सामाजिक रूप से निन्दा किया जाना शुरू हुआ और फिर शुरू हो गया महिलाओं के साथ घरेलू हिंसाओं की संख्या में वृद्धि का दौर। और ये घरेलू हिंसा उस स्तर तक जा पहुँची, जहाँ की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

इस लैंगिक हिंसा का सामना मात्र महिलाओं को ही करना पड़ता है, क्योंकि समाज में कुछ ऐसी बुरी व्यवस्थायें प्रचलन में थीं– जैसे लड़के वालों द्वारा दहेज की मॉग किया जाना, समाज में होने वाले लड़कों को अपना वंश चलाने वाला मानना। परिवार की आय अर्जित करने वाला मानना आदि। जिसका परिणाम ये हुआ कि महिलाओं के साथ लैंगिक हिंसा और लड़कियों के साथ उन्हें खाने–पीने को दी जाने वाली वस्तुऐं लड़कों की अपेक्षा कम देकर उन्हें ''पराये घर का कूड़ा'' तक कहकर उनके साथ पक्षपात किया जाने लगा और उस स्थिति में लड़कियों द्वारा उसका विरोध किये जाने पर उनके साथ मारपीट के रूप में हिंसा की जाने लगी। मानवीय गरिमा वैश्विक रूप से मानवाधिकार व्यवस्था की मूलभूत अवधारणा है, जिसे ''अल्टीमेट वैल्यू'' कहा जाता है, जो लोगों को उनके अधिकारों की समानता प्रदान करता है। जब सन् 1993 में वियना में विश्व मानवाधिकार सम्मेलन का आयोजन हुआ तो उनके घोषणा पत्र में भी इस बात की पुष्टि हुई जिसमें कहा गया कि– ''सभी मानवाधिकार मानवीय व्यक्ति में सम्मान और मूल्य के रूप में निहित हैं।'' मानवीय गरिमा वह अवधारणा है जिसका प्रयोग दैनिक जीवन के नैतिक, विधिक और राजनीतिक चर्चाओं में यह दर्शाने के लिये किया जाता है कि प्रत्येक मनुष्य को मूल्यांकित होने और नैतिक व्यवहार को सरलता और सहजता के साथ प्राप्त करने का अधिकार है जो इस युग की अन्तर्निहित और अतुलनीय अधिकारों की अवधारणाओं का विस्तार है, जो मानवता के महत्व और सामाजिक से जुड़ा विशिष्ट अर्थ है। शाब्दिक रूप से गरिमा विश्लेषण है गरिमा लैटिन भाषा के 'डीकस' संज्ञा से आता है, जिसका तात्पर्य आभूषण, सम्मान, महिमा और भेद से होता है और सामान्य बोल चाल की भाषा में गरिमा का अर्थ अपने सम्मान के हक में खड़ा होना। यानि किसी व्यक्ति का सामाजिक स्तर और यह उसको सन्दर्भित करता है, जो एक व्यक्ति विशेष को बिना किसी पक्षपात के उसके सम्मान में सम्मिलित करता है।

भारत में लैंगिक हिंसा रोकने के लिए –
''बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ।''

''घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005'' और PCPNDT Act 1994, जिसका पूरा नाम है Pre-conception & Pre-natal Diagnostic Technical Act 1994, जिसे हिन्दी में पूर्व गर्भाधान और प्रसव पूर्व निदान तकनीकि अधिनियम 1994, जो कन्या भ्रूण हत्या और गिरते लिंगानुपात को रोकने के लिये संसद द्वारा पारित एक संघीय कानून है। बताया गया है। ताकि अल्ट्रासाउण्ड और अल्ट्रासोनोग्राफी कराकर जन्म से पूर्व लिंग की जाँच कराये जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया है, यदि फिर कोई भी जोड़ा (पति–पत्नी) लिंग परीक्षण कराने आते हैं या कोई

डाक्टर लैबकर्मी जाँच कराने आते हैं तो उसे 5 साल तक की सजा और 10 से 50 हजार रुपये के दण्ड से दण्डित किये जाने का प्राविधान किया है।

सरकार ने महिलाओं पर उसके परिजनों द्वारा दहेज न दिये जाने या दहेज कम दिये जाने पर उनसे की जाने वाली दहेज की मांग पूरी न होने पर उस महिला के पति अथवा ससुराल पक्ष के लोगों द्वारा दुर्व्यवहार करने और उसे प्रताड़ित करने से बचाये जाने के लिये ही ''दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961'' बनाया है, जो लैंगिक हिंसा को प्रतिषिद्ध किये जाने की दिशा में ही सरकार की एक पहल है, यदि अन्तरदर्शन और पर्यवेक्षण विधि का प्रयोग करते हुए मानवीय गरिमा के क्षेत्र में नित नये अभिनव प्रयास किये जाते रहे और लैंगिक हिंसा को रोके जाने की पहल की जाती रही तो वो दिन दूर नहीं, जब लैंगिक हिंसा समाप्त ही नहीं होगी, बल्कि भारतवर्ष का नाम सम्पूर्ण विश्व पटल पर अपनी अनूठी और अमिट छाप छोड़कर विश्वगुरू का दर्जा प्राप्त करने में किसी से पीछे न रहेगा।

HERDESH KULSHRESTHA

Chamber :
Near Family Court, Civil Courts, AGRA-282010.

Residence/ Office :
3/216-B, Shiv Nagar (Near Rui Ki Mandi Railway Crossing), Shahganj, AGRA.

E-Mail :

Shardafeatures@yahoo.co.in

Mobile : 094122 62094, 093195 55321 & (W) 09870801644.

GREEN ENVIROMENT INTERNATIONAL PROJECT OF INDIA 2023.

भारत की अन्तर्राष्ट्रीय हरित पर्यावरण परियोजना 2023.

(दो दिवसीय संगोष्ठी दिनाँक 24 और 25 नवम्बर, 2023).

Vanue :

P.K. UNIVERSITY

Thanra, Karaia, District- Shivpuri (M.P.).

Presented by :
HERDESH KULSHRESTHA
(Researcher of 2019-20 for Ph.D.)
Department of HINDI.

Guided by-
Dr. VIKRANT SHARMA.
M.A., Ph.D. (HINDI).
Head of the (HINDI) department.

P.K. UNIVERSITY
Thanra, Karaia, District- Shivpuri (M.P.).

मेरे आदरणीय एवं परम सम्माननीय पाठकगण, दर्शकगण, सुधी श्रोताओ, महिला शक्ति और मंच पर विराजमान आदरणीय महानुभावगण, बड़ों का सादर वन्दन और अभिनन्दन करते हुए सादर प्रणाम और छोटों को मेरा स्नेहिल प्यार।

मित्रो।

मुझे इस परियोजना के सन्दर्भ आप में सभी को जानकारी देते हुए अत्यन्त ही हर्ष की अनुभूति हो रही है कि आप इस पत्रक के माध्यम से हमारे ''**भारत की अन्तर्राष्ट्रीय हरित पर्यावरण परियोजना 2023**'' में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से हमसे जुड़कर ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' अर्थात् ''सारा विश्व मेरा घर'' के कथन को साकार करने जा रहे हैं ।

ये हमारी विकास परियोजना मात्र किसी एक देश– विशेष के लिये लाभकारी सिद्ध नहीं होगी, बल्कि ये हमारी वह परियोजना है, जिसके अमल में आने पर सारे विश्व के लोगों का कल्याण शत्–प्रतिशत् सम्भव होगा।

इससे पहले कि हम अपनी परियोजना की जानकारी आपको दें। सारे कार्यकलाप से आपको अवगत करायें। उससे पूर्व हम अपना परिचय आपको देना अपेक्षित समझते हैं कि व्यक्तिगत रूप से हम क्या हैं?

मैं बीते हुए कल का आज
और
आने वाले कल का
भविष्य विशेष हूँ
जा, हाँ!
मैं ही
हृदेश कुलश्रेष्ठ हूँ
लेकिन ऐसा नहीं।

यदि मैंने कोई कार्यक्रम शुरू किया है तो ये समझ लीजिये कि वह कदापि सफल नहीं हो सकेगा, क्योंकि उसमें खुदी घुस गयी है। मैं यहाँ खुदी का अर्थ स्पष्ट कर दूँ कि खुदी का मतलब होता है–घमण्ड।
और
आप जानते हैं कि जिसमें खुदी घुस गयी तो समझो कि वह ट्रैक से आउट हो गया। यानि किसी काम का न रहा।

इसीलिये कहा भी गया है कि एक अकेला थक जाएगा, मिलकर बोझ उठाना। इसलिये यहाँ मैं कुछ नहीं हूँ। यहाँ अगर सब कुछ हैं तो वो आप हैं। मैं तो सिर्फ़ और सिर्फ़ एक विचारक हूँ उसके सिवाय और कुछ नहीं। इसलिये ये परियोजना मात्र मेरी नहीं, बल्कि आपकी है। आप सभी की है। मैंने तो सिर्फ़ इसे तैयार किया है।

मुझे याद आते हैं प्रकाशन विभाग भारत सरकार नई दिल्ली के तत्कालीन महानिदेशक एवं विख्यात लेखक पदमश्री डॉ0 श्याम सिंह 'शशि' जी के वो शब्द, जो उन्होंने मुझे अपने साक्षात्कार के मध्य मुझे कहे थे कि–

''वो दो अक्षर लिखते हैं तो उम्र भर गाते हैं।
हम पोथियाँ लिख–लिखकर एक उम्र दे जाते हैं।''

बस कुछ इसी तरह बिना किसी भूमिका के अपनी बात को गति देते हुये आपको अवगत कराना चाह रहा हूँ कि जनता जनार्दन के कल्याण हेतु हम समस्त व्यक्ति जिन्हें आगे ''**हम लोग**'' शब्द से सम्बोधित किया जायेगा। आप लोगों से इस बात का आग्रह कर रहे हैं कि आप इसे और इसकी बारीकियों को समझें।

कार्यक्रम की रूपरेखा

हम एक ऐसे साकार विश्व का निर्माण करने की परिकल्पना कर रहे हैं, जिसका उद्देश्य भारतवर्ष में पर्यावरण के विकास का सहजता और सरलता के साथ सुधार का एक ऐसा अभिनव प्रयास है, जो हो सकता है कि शुरूआत में आपको हमारा ये सुझाया जाने वाला प्रस्तावित कार्यक्रम एक बचकानी हरकत लगे, लेकिन इसका परिणाम उसी रूप में होने का हम सपना देख रहे हैं जिस प्रकार एक छोटे से बीज से एक उस प्रकार के वट वृक्ष का निर्माण होता है, जिसकी छाव तले लोग बैठकर गर्मी का एहसास भूल जाते हैं। जहाँ अगर थोड़ा भी चिन्तन–मनन करते हैं तो मालूम पड़ता है कि शान्ति की खोज में जहाँ हजारों साल से ऋषि-मुनियों ने तप किया। वहाँ कुछ ही समय पश्चात् उन्हें शान्ति का आभास होने लगा। सहसा मन कहने लगता है कि भला हो उस आदमी का जिसने ये वृक्ष रोपा। सम्भवतः वह इस वृक्ष की छाया का आनन्द न ले पाया हो, किन्तु आज हम हैं कि उसके कृत्य का परिणाम अच्छा अनुभव कर रहे हैं।

साथियो।

मैं शायर के उस आवारा हवा के झोके की तरह हूँ ,जो आप लोगों के बीच पल–दो–पल के लिये आकर खड़ा हुआ हूँ । मैंने एक ऐसा कार्यक्रम प्रस्तावित किया है, जिसे अगर सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से भारत के जन–गण–मन में प्रचारित और प्रसारित किया जाये तो वो दिन दूर नहीं जब

हम आज के समय में दिन–ब–दिन बढ़ती मँहगायी का सामना करने के लिए मानसिक रूप से तैयार हो जायेंगे, जिससे देश को ही नहीं, बल्कि विश्व के व्यक्ति, समाज और देश को वह शक्ति मिलेगी, जिसका परिणाम अद्भुत और अप्रत्याशित होगा। जिससे सभी लाभान्वित होगें।

कार्यक्रम का स्वरूप

इसी उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुये हमने जो कार्यक्रम तैयार किया है उसका नाम है– ''झूँठन एकत्रीकरण कार्यक्रम।''

न. न.. न... न....

नहीं।

ये कोई ऐसी बात नहीं, जो निन्दनीय हो और जिस पर आप और एक आम जन अमल न कर सकते हों। हम कोई झूँठी रोटी, दाल–भात, साग–सब्जी या कुछ ऐसा झूठा इकठ्ठा करने की बात नहीं कहते, बल्कि हम चाहते हैं कि आप अपने उस बेकार खाद्य अपशिष्ट को इकठ्ठा करें और उन्हें आपके द्वारा निर्मित और स्थापित इकाईयों पर अपने मोबाइल, फोन और संवाद से एकत्रित करें।

आपके मन में ये जिज्ञासा होगी कि आखिर ये खाद्य अपशिष्ट क्या होंगे?

ये कोई ऐसी बात नहीं कि कोई बहुत बड़ी बात हो, बल्कि ये एक बहुत ही छोटी बात है और वह यह है कि यदि आप किसी भी प्रकार का फल खाते हैं–

जैसे आप पपीता खाते हैं। तो उसके छिलके जैसे कूढ़े को एक तरफ फेकें और उसके बीजों को एक तरफ सभाँलकर रख लें। इसी तरह आप आम, जामुन, चीकू, शरीफा, बेर या कोई अन्य फल खाते हैं तो आप उनके बीज एवं गुठलियों को फेकें नहीं, बल्कि आप उन्हें अपने आँगन के कोने में एक सुरक्षित

स्थान पर इकठ्ठा कर दें और अपने द्वारा बनाई गयी इकाईयों पर सूचना कर दें। वे उन बीजों को आपसे एकत्रित करके उन्हें संचित करके एक संरक्षित स्थान पर रख लेंगे। और यदि थोड़ा भी आप हमें हार्दिक रूप से सहयोग करना चाहते हैं या थोड़ी भी आपकी आँखों में शर्म है तो उन बीज अथवा गुठलियों को साफ पानी से धोकर एवं सुखाकर एक लिफाफे अथवा थैली में भली–भाँति पैक करके अपने यहाँ रख लें और वहाँ से आपके स्वयं सेवक उन्के आप से लेकर उन्हें सुरक्षित संरक्षित स्थान पर रख लेंगे। इतना करने के बाद आप की भूमिका समाप्त हुयी।

और अब शुरूआत होती है हमारी परियोजना के उस चरण की, जिसमें कार्यक्रम की जिससे झूँठन एकत्रीकरण कार्यक्रम को उड़ान भरनी है?

हमारी इकाइयों के स्वयं सेवक अथवा कार्यकर्ता आपके द्वारा दिये जाने वाले बीजों को एकत्रित करके एक सुरक्षित स्थान पर रखते हैं और जब होली का पर्व मनाया जाये है तो होली दहन के बाद होली की राख को स्वयं सेवक अथवा कार्यकर्ता या कोई मज़दूर लगवाकर उस राख को छानकर अथवा छनवाकर एक तरफ कट्टों में एकत्रित करके रखवा और उसके बचने वाले कूढ़े को कूढ़ेदान में फिकवा दें । उस एकत्रित राख के एक–एक किलो के पैकेट तैयार किये जायें, जिनमें छोटी श्रेणी के बीजों अथवा जामुन, आम, चीकू और शरीफे के बीज और गुठलियों को पैक करके रख दिया जाये। इस मध्य हमारे स्वयं सेवक उन स्थानों की खोज में रहें, जिन स्थानों पर या तो बियावान जंगल हैं अथवा ऐसी खाली जमीन है। जहाँ पर उन बीजों को प्रयोग में लाया जा सकता है।

प्रायः होली का त्यौहार मार्च के महीने में होता है। इसके पश्चात् सब बीज वितरण कार्यक्रम की तैयारी पूरी कर ली जाये और जैसे–जैसे मौसम जून के आगमन की ओर बढ़े ठीक वैसे ही वैसे कार्यक्रम को गति दी जाय। ऐसा

हम भी करते हैं। हम ऐसा कर रहे हैं। अपने विभिन्न माध्यमों से प्रस्तावित अथवा नियत सूत्रों तक उन बीज के पैकिटों को भेजते हैं। जिन क्षेत्रों में उनको भेजा जाता है। वहाँ का प्रतिनिधि जून के प्रथम सप्ताह में हमारे द्वारा इस आशय का सन्देश प्राप्त करके वहाँ रहने वाले छोटे तबकों के लोगों को बीस रुपये देकर उन बीजों को उनको ये कहकर दे देता है कि ये बीज आप ले जाओ और इनको अपने क्षेत्र में अथवा विशेष क्षेत्रों में बिखरा देना। इसके बाद हमारे कथित क्षेत्रीय प्रतिनिधि की भूमिका भी समाप्त हो जाती है।

इसके बाद जैसे–जैसे तपिश बढ़ती जाती है । वे राख मिश्रित बीज और गुठलियाँ बिखेर व बिखरवा दी जाती हैं । उनमें चटकती हुयी तेज धूप लगने से एक ओर जहाँ बीजों में होने वाले कीड़ों से निजात मिलती है। वहीं दूसरी ओर सूरज की तेज धूप पाकर वे समस्त बीज एवं गुठलियाँ एक प्रकार से उन पर होने वाले संक्रमण से मुक्त हो जाती हैं । वहीं उन बीजों के विश्राम का समय भी पूरा हो जाता है और फिर जून के दूसरे सप्ताह के समाप्त होते–होते मानसून सक्रिय होने लगता है और फिर रिमझिम बारिश की बूँदों के बीच बिखेरे गये वे सभी बीज अंकुरित होने लगते हैं। इस प्रकार से बिना रोपे हुये ही हजारों बीज अपना अस्तित्व छोटे–छोटे, नन्हें–नन्हें पौधों के रूप में ले लेते हैं और जिसकी परिणिति ये होती है कि हमें 'वृक्ष लगाओ' जैसे किसी भी प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करने की आश्यकता नहीं होगी। हमें अपने कार्यक्रम के द्वारा पहले वर्ष में ही बिना लगाये ही कई सारे पेड़ मिल जाते हैं।

यदि पहले वर्ष में स्वतः ही एक हजार पेड़ उग आते हैं तो उनमें से अगले वर्ष कुछ पेड़ गल जायेगें, कुछ टूटेगें और कुछ गिर जायेगें तो अनुमानित रूप से शेष 600 पेड़ तो बचेंगे और अगले साल आते–आते दूसरे साल उनमें से लगभग 200 पेड़ बचेगें। इसी प्रकार दूसरे साल में बिना लगाये

हुये उन बचे हुये पेड़ों की अनुमानित संख्या 100 रह जायेगी जब तीसरे वर्ष में प्रवेश होगा तो लगभग वे पेड़ 60 रह जायेगें और उन्हें किसी प्रकार के संरक्षण की आवश्यकता नहीं रहेगी। उसी मध्य दूसरे वर्ष में उत्पादित हुये पेड़ों की संख्या 700 हो जायेगी और इसी चक्र के हिसाब से अनुमानित तौर से बिना लगाये हुये 10 प्रतिशत पेड़ बिना लगाये ही लग जायेगें। इस प्रकार एक ओर तो सुनसान बियावान जंगल में उत्पादित होने वाले ऐसे वृक्षों की संख्या में कमी होगी जो न तो किसी प्रकार के फल देते हैं और न हीं ईंधन अथवा फर्नीचर के लिये प्रयुक्त होने वाली अनुप्रयोग की लकड़ी, जिनका कोई उपयोग नहीं है। इसी अनुपात में जब क्रमशः हमारे कार्यक्रम के अन्तर्गत वृक्ष उत्पादित होगें तो वे भारी संख्या में उस क्षेत्र में स्थापित होगें। साथ ही हमारे द्वारा बिना रोपे हुये वे फलदार वृक्ष ऊसर व अनुपजाऊ क्षेत्र में भी अपना विस्तार करेगें।

इस प्रकार भविष्य में इसके आशाजनक परिणाम मिलने की पूर्णतः सम्भावना है, क्योंकि बीजों से बनने वाले पेड़ लगभग 5 वर्ष के मध्य ही फल देना शुरू कर देते हैं ये बात अलग है कि फलों के लगाये गये कलमी पेड़ दूसरे ही वर्ष फल देना शुरू कर देते हैं, लेकिन उनके लिये पर्याप्त संरक्षण एवं देखरेख की आवश्यकता अपेक्षित है। जबकि इस प्रकार के कथित तौर पर उत्पन्न होने वाले फलदार पेड़ बिना किसी संरक्षण के आवारा पेड़ों के रूप में लग जायेगें।

किस प्रकार जनता लाभान्वित होगी ?

यदि हमारी योजना पर थोड़ा सा भी अमल किया गया तो सूचना एवं प्रौद्योगिकी के माध्यम से सभी क्षेत्रों का चहुँमुखी विकास इस प्रकार होगा।

1. **पर्यावरण को लाभ :**

ये योजना ही वह योजना है, जिसमें सही मायने में किसी को कोई लागत नहीं लगानी। ना हीं किसी प्रकार के धन का निवेश करना है, बल्कि ये स्वतः ही कार्यान्वित हो जायेगी और वृक्ष उत्पादन से शुद्ध वायु की लोगों को अत्यधिक और प्रचुर मात्रा में प्राप्ति की कामना की जा सकती है।

2. **मौसम पर नियन्त्रण :**

जब अत्यधिक मात्रा में पेड़ होगें तो ऐसी सुनने में आने वाली शिकायतों में निरन्तर कमी आयेगी, जिनमें ये कहा जाता है कि बादल तो आये थे, लेकिन देखते–देखते न जाने कहाँ चले गये, वरना बरसात हो जाती और मौसम खुशगवार हो जाता। जब वृक्षों में वृद्धि हो जायेगी तो उस स्थान के मौसम में आर्द्रता होने के कारण प्रत्येक बार बादल आने पर बारिश होने की सम्भावनायें प्रबल हो जायेगीं।

3. **मनुष्यों के स्वास्थ्य में वृद्धि :**

जब उस अच्छे वातावरण में रह रहे मनुष्यों को उनके अनुकूल मौसम मिलेगा तो निश्चय ही उनकी कार्यक्षमता में भी वृद्धि होगी और दूसरी ओर उन्हें मानसिक रूप से भी किसी प्रकार के अवसाद की अनुभूति नहीं होगी। कहा जाता है कि किसी भी देश की उन्नति के रीढ़ की हड्डी उस देश के निवासियों की पूर्ण स्वास्थ्यता है, जिसके कारण ही उन्हें पर्याप्त रूप से चिन्तन व भरण करने का अवसर बढ़ेगा।

4. **भोजन के अभाव से मुक्ति :**

जब बिना रोपे हुये फलदार वृक्षों में कुछ वर्षो के पश्चात् फलों का लगना शुरू होगा तो उनके प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ेगा, जिनमें ये चाहत रहेगी कि कब फल पकें और कब वे उनका रसास्वादन करें। फलों के पकने के बाद उनका रसास्वादन सर्वप्रथम वहाँ के स्थानीय बच्चों द्वारा किये जाने के

पश्चात् वहाँ के लोगों द्वारा किया जायेगा। जब गुणवत्ता और स्वाद की दृष्टि से उनकी उपयोगिता लोगों की समझ आयेगी तो वे स्वाद ही स्वाद में उस सीमा तक उन को खा जायेगें कि उनकी भूख प्रायः खत्म हो जाये या कम हो जाये। इस प्रकार उनको अन्न अभाव की समस्या से मुक्ति मिलेगी। परिणामस्वरूप उनके द्वारा अन्न की खपत दिनों दिन अपेक्षाकृत खत्म कम होती चली जायेगी, जिसका बाजार पर अर्थशास्त्रीय प्रभाव पड़ने से उनकी माँग कम होने पर कीमतों में भी गिरावट आयेगी । परिणामस्वरूप विश्व स्तर पर जहाँ लोगों की खाद्य समस्या के निवारण में लाभ प्राप्त होगा। वहीं लोगों को कम दरों पर खाद्य चीजें मिलना शुरू हो जायेगीं।

5. लोगों को कम कीमतों पर अच्छी किस्म के ताजा फलों की प्राप्ति :

जब अत्यधिक फलों के उत्पादन से क्षेत्रीय लोगों के प्रयोग के बाद जो फल शेष बचेगें तो उन्हें पहले तो स्थानीय लोग उन्हें सड़कों पर बैठकर बेचना शुरू कर देगें, जिसे स्थानीय लोगों के अतिरिक्त वहाँ से गुजरने वाले लोगों द्वारा खरीदे जायेगें। चूँकि उन फलों के उत्पादन पर उन फल विक्रेताओं की कोई लागत नहीं लगी है। अतः वे उनकी कीमत खुद तय करेगें, जिससे वहाँ से गुजरने वाले लोग अपने यहाँ बिकने आने वाले फलों की तुलना में बहुत ही कम कीमतों पर उन्हें प्राप्त करके लाभान्वित होंगें, जिनसे एक ओर शहर में उन्हें ऊँची दरों पर प्राप्त होने वाले गुणवत्ता की दृष्टि से अच्छी किस्म के होने के बावजूद भी अत्यन्त सस्ती दरों पर मिलेगें। न जाने उन लोगों में वहाँ कौन व्यक्ति कहाँ से आया होगा, जिसका परिणाम यह होगा कि उनके गन्तव्य पर पहुँचकर उन फलों की कीमत और गुणवत्ता के सन्दर्भ में स्वतः प्रचार प्रसार होगा। परिणामस्वरूप जब ये बात फल व्यापारियों के कानों तक पहुँचेगी तो वे वहाँ तक जाकर उनकी क्षेत्रीय कीमतों में माँग अधिक होने पर कीमतों में वृद्धि

होने का लाभ उन स्थानीय लोगों को मिलेगा, दूसरी ओर फल व्यापारी अपना भाड़ा खर्चा और लाभ निश्चित करके जब उन्हें शहरीय क्षेत्रों में बेचेगें अथवा दूर दराज के क्षेत्रों से खरीद कर उनकी छटाई और अच्छी पैंकिग कराके विक्रय हेतु बाहर भेजेगें तो परिणाम यह होगा कि जो व्यापारी फल बेचने के लिये या तो दूर दराज के इलाकों से ऊँची कीमतों पर मँगाते थे या तो उन्हें विभिन्न राज्यों एवं देशों से आयात करना पड़ता था, जिसके कारण भाड़ा एवं खर्चा अधिक होने के कारण उनके फलों की दरें आसमान को छूने लगती थीं और वे लोगों को कई गुना अधिक कीमत पर प्राप्त होती थीं, लेकिन इसके बाद ऐसा न होने से फलों की कीमत में अपेक्षाकृत काफी कमी आयेगी।

6. <u>स्थानीय लागों को रोजगार के साधनों की प्राप्ति</u> :

क्षेत्रीय स्तर पर फलों के स्वतः ही अत्यधिक उत्पादन होने से जब उनको स्थानीय लोगों द्वारा स्वयं के खाद्य प्रयोजन अथवा विक्रय प्रयोजन के लिये एकत्रित किया जायेगा तो ऐसे कार्य में उन्हें सहायता देने वाले कई लोगों की जरूरत पड़ेगी, जिससे दिन पर दिन कार्य करने वाले लोगों की माँग बढ़ती चली जायेगी। परिणामस्वरूप उन फलों की बिक्री से होने वाली आय का वितरण विक्रेताओं के खर्च काटकर शेष धनराशि को उन लोगों के कार्य के स्तर के हिसाब से विभाजित होने पर होने धन की प्राप्ति ऐसे लोगों को भी होना शुरू हो जायेगी या तो बे बेरोजगार थे। या बेकार थे। या आलसी, लेकिन जब बेकार लोगों को कार्य मिलेगा और आलसी लोग ये देखेगें कि कार्य करने वाले लोग मेहनत से कार्य कर रहे हैं तो वे भी शर्म महसूस करके कार्य कर रहे लोगों से मेहनत करने की प्रेरणा लेकर अपने आलस को छोड़कर कार्य करके एक अच्छी धनराशि अर्जित करेगें, जिससक रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे।

7. <u>काम की तलाश में पलायन से मुक्ति</u> :

जब लोगों को उनके ही क्षेत्र में पूरा काम मिलेगा और उससे उन्हें अधिक आय अर्जित होगी तो फिर हम समझते हैं कि शायद उन्हें रोजगार की समस्या का सामना न करना पड़ेगा और रोजगार की तलाश में अपने गाँवों को छोड़कर शहरों की ओर पलायन न करना पड़ेगा।

<u>सरकार से अपेक्षा :</u>

हम सरकार से अपेक्षा करेंगे कि–

क. सरकार जंगलों में स्वच्छन्द विचरण करने वाले बन्दर, जंगली सूअर और गाय जैसे आवारा जानवरों के सम्बन्ध में कुछ नीतियाँ बनाये ताकि इस प्रकार के पेड़ों को सहजता और सरलता के साथ संरक्षण मिल सके।

ख. सरकार ऐसे लोगों को उन पेड़ों का पूर्ण स्वामित्व दे, जिन्होंने ऐसे पेड़ों का लालन–पालन किया हो या वे फलदार पेड़ जिस व्यक्ति के घर के सामने हों।

ग. सरकार इस क्षेत्र में कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं को वृक्ष मित्र का नाम देकर उन्हें सम्मानित और प्रोत्साहित करे।

घ. सरकार इस योजना को प्रोत्साहित करने के लिये ऐसी सरकारी और गैर सरकारी खली पड़ी निष्प्रयोजन जगह का उपयोग करे।

ङ. सरकार विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, ग्राम सभाओं और रेलवे लाइन के किनारे खाली पड़ी जमीन को प्रयोग में भी ले सकती है।

जो कुछ हो चुका हो जाने दो। अब इस ओर बड़ी तेजी से काम करना अपेक्षित है। याद रहे कि यदि हमने इस ओर ध्यान न दिया तो वो दिन दूर नहीं जब हमारी आने पीढ़ी स्वादिष्ट फलों के रसास्वादन के लिये तरस जायेगी।

इसलिये आज वक़्त की यही पुकार है कि हम सारे मतभेदों को परे करके भारत की अन्तर्राष्ट्रीय हरित पर्यावरण परियोजना 2023 पर सहजता और सरलता के साथ अमल करें। वो दिन भी दूर ना होगा जब हम फलों की बड़ी मात्रा में उत्पादकता के लिये विश्व पटल पर एक बड़ी उपलब्धि प्राप्त कर सकेंगे।

लेखक : **हृदेश कुलश्रेष्ठ**,
(शोधार्थी) (हिन्दी विभाग)।
पी. के. यूनिवर्सिटी, थनरा, करैरा, शिवपुरी (म0प्र0)।
स्थाई निवास : 3/216– बी, शिवनगर, शाहगंज,
आगरा–282010.
मोबाइल नम्बर : 09412262094
E- Mail:sharda_features@yahoo.co.in

मार्गदर्शक : **डॉ0 विक्रान्त शर्मा,**
(विभागाध्यक्ष– हिन्दी विभाग)।
पी. के. यूनिवर्सिटी, थनरा, करैरा, शिवपुरी (म0प्र0)।
मोबाइल नम्बर : 09131665535.

<u>लेखन प्रमाण–पत्र</u>

सेवामें,
श्रीमान् संयोजक,
(दो दिवसीय संगोष्ठी आयोजित दिनाँक 24 और 25 नवम्बर, 2023).
द्वारा पी0के0 यूनिवर्सिटी, थनरा, करैरा, शिवपुरी (म0प्र0)।

मैं हृदेश कुलश्रेष्ठ पुत्र स्वर्गीय श्री प्रेम प्रकाश कुलश्रेष्ठ, निवासी : 3/216–बी, शिवनगर, शाहगंज, आगरा–282010 प्रमाणित करता हूँ कि प्रस्तुत– शोध–पत्र, जो **''भारत की अन्तर्राष्ट्रीय हरित पर्यावरण परियोजना 2023''** शीर्षक से लिखित है, की संलग्न रचना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के मानकों के अनुरूप मौलिक एवम् अप्रकाशित है। इसमें किसी भी प्रकार की साहित्यिक नकल/चोरी नहीं की गयी है। यह मुझ स्वयं के द्वारा लिखित मेरी मूल रचना है, जिसका पूर्व में कहीं भी प्रकाशन नहीं हुआ है ।

इसको आगरा में आज दिनाँक 14 नवम्बर 2023 को मेरे द्वारा रचकर, हस्ताक्षरित व सत्यापित किया गया।

दिनाँक : 14 नवम्बर 2023.

(हस्ताक्षर)

लेखक : (शोध छात्र) (हिन्दी विभाग),

षष्ठम अध्याय

उपसंहार, साहित्यिक समीक्षा एवं लोक चेतना

नज़ीर अकबराबादी का जीवन, जिस समय जन्म लेने से अन्त तक व्यतीत हुआ। उस समय मुख्यतः रीतिकाल का काल था। रीतिकाल यह वही समय था, जिसमें कविगण अपने कवित्त करने के साथ ही साथ इतने विद्वान थे कि वे आचार्य भी हुआ करते थे और इसी विशेषता के कमोवेश उन्होंने विविध काव्यांगों के लक्षण देने वाले विभिन्न ग्रन्थ लिखे। रीतिकाल का समय 1658 से 1857 ई0 अर्थात् एडी (AD),जिसका पूरा अर्थ ANNO DOMINIहोता है। जूलियन और ग्रेग्रोरियन कलैण्डर में ईसवी (ई) ईसा मसीह के जन्म के बाद के साल दर्शाता है और ईसा पूर्व (ईपू) उनके जन्म से पूर्व के साल दर्शाता है। आजकल ईसवी की जगह सी. ई. अर्थात् कॉमन एरा और ईसा पूर्व की जगह बी.सी. ई. अर्थात् बिफोर कॉमन एरा के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

रीतिकाल हिन्दी साहित्य का वह काल माना जाता है, जिसमें की गयी कविता की रचना एक रीति या प्रणाली के अन्तर्गत की जाती थी। जिसमें ''रीति'' का प्रयोग– ''कवि रीति'' और ''सुकवि रीति'' जैसे शब्दों का प्रयोग होने लगा। सम्भवतः आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने इसी कारण इस काल को रीति काल कहना उचित समझा होगा, क्योंकि रीति का अर्थ होता है ''विशिष्ट पद रचना'' जिसे सबसे पहले वामन ने इसे ''काव्य की आत्मा'' बताया। हिन्दी में जो काव्य के सन्दर्भ में विवेचना की गयी। उसकी ओट में मौलिक काव्य की रचना हुई, जिसका परिणाम ये हुआ कि इस काल में कविताओं का जो आधार था । वह प्रधानतः श्रृँगार रस का हो गया। इसलिये इस काल को श्रृँगार काल भी कहने की बात की संस्तुति की जाने लगी है।

इस काल की मुख्य विशेषता ये थी कि इस काल या इस युग के सभी कवि आचार्य पहले हुआ करते थे और कवि बाद में, जिनकी कविता पाण्डित्यता से परिपूर्ण होती थी। इस काल में कवियों द्वारा श्रृँगार रस में अतिशयता दर्शित किये जाने में रुचि दिखायी गयी, जिसके कारण तत्कालीन साहित्य, समाज की सारी सामाजिक सीमाओं को तोड़कर अश्लीलता की श्रेणी में जा पहुँचा, जिसका दृश्य नज़ीर अकबराबादी की कविताओं में उनके द्वारा रचित 'अंगिया' और ''वैश्या'' नामक कविताओं में भी देखने को मिला, जिसमें अनुप्रास अलंकार, यमक अलंकार, श्लेष अलंकार, रुपक अलंकार और उपमा अलंकारों और ना जाने क्या–क्या अश्लील साहित्यिकता युक्त कविताओं की प्रमुखता रही।

इस युग के कवियों की काव्य भाषा में ब्रजभाषा की व्यापकता थी। अतः उर्दू भाषा के साथ ही साथ नज़ीर अकराबादी की कविता रचना की भाषा का आधार ब्रजभाषा का रहा, **जिसकी परिणति उनकी काव्य की पकड़ सहज, सरल और जन सामान्य से निकटता हाने के कारण लोकप्रियता के शिखर पर ऐसी पहुँची कि उसने उन्हें धीरे–धीरे करके उन्नति के शिखर पर पहुँचा दिया।** क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या ईसाई या यूँ कहें कि क्या सिख, वे सभी इन सबकी संस्कृति के इतने निकट पहुँच गये कि उन्होंने सभी समाज के धर्मगुरू और इष्टों पर अपनी काव्य रचनायें कीं, जिससे सभी का दिल जीतकर वे जनसामान्य के हृदय सम्राट बनकर जनकवि बन गये। उन्होंने समाज की बुराइयों को दृष्टिगत रखते हुए अपनी रचनाओं के माध्यम से जुआ आदि जैसे कविताओं का सृजन करके जन–जन में लोक चेतना का सूत्रपात किया। उन्होंने आमजन से सम्बन्धित अनेक ऐसी छोटी–बड़ी कवितायें लिखकर लोगों में चेतना का संचार किया और अपनी कविता की रचना करके जनमानस को चेताया कि देख लो यदि आपने ध्यान ना दिया तो

आपकी भी एक ना एक दिन यही स्थिति होगी। मुफ़लिसी, आदमी नामा और रोटी आदि जैसी कविताओं की रचना करके नज़ीर अकराबादी समाज के प्रति एक बहुत ही अच्छा काम किया।

कविवर नज़ीर अकराबादी के बारे में विस्तार से अध्ययन करने पर पता चलता है कि कई भाषाओं के ज्ञाता होने तथा विभिन्न राजाओं की ओर से राजकवि बनने का आमन्त्रण मिलने के बाद भी वह ऐसे कवि थे, जिन्होंने भारतीय समाज में रहकर कविता के द्वारा समाज के प्रत्येक क्षेत्र को एक नयी दिशा दी। वे भारतीय सभ्यता और संस्कृति में इस तरह रस–बस गये थे कि उन्हें हिन्दी–उर्दू साहित्य में लोक कवि के रूप में जाना जाने लगा, लेकिन उन्होंने कभी अन्य कवियों की नकल नहीं की। जबकि उस समय के कवि प्रेयसी और प्रीतम या अपने आश्रयदाताओं की प्रशंसा में गुणगान के लिये काव्य की रचनायें कर रहे थे।

उनकी रचनाओं में उनकी दूरदर्शिता की झलक देखने को तब मिलती है जब वे साहित्य के सभी रंग–रसों के क्रियात्मक और रचनात्मक कवि रहे। उन्होंने जीवन का कोई भी ऐसा पहलू नहीं छोड़ा जो उनसे अछूता रह गया हो, लेकिन इन सबके होते हुए भी ये कितना दुखद है कि तत्कालीन साहित्यकारों द्वारा उन्हें उर्दू साहित्य के इतिहास में कोई विशेष स्थान नहीं दिया गया।

उनकी कविताओं का प्रस्तुतिकरण इस प्रकार से किया गया है। मानो किसी चित्रकार ने किसी दृश्य या किसी बात का दृश्य चित्रण करने के लिये किसी तूलिका से रंग भरकर कैनवास पर उकेर दिया हो, जो साधारण से साधारण वस्तुऐं उनके काव्य का एक अनूठा भाग बनकर आती है। उनकी चाहे जो भी कविता हो चूहा, भूचाल, बाजारू, स्त्रियाँ, मर्द और अन्य भाँति–भाँति के भावों के अनुभव, रंग

रूप, पेड़–पौधे, जड़ी बूटियाँ, फूल, जानवर और तरह–तरह के सहारे और आश्रय अपनी एक स्वतन्त्र चित्रकार की कल्पना को जीवन्त बनाये रखने की श्रृँखला बनाता हो।

कविवर नज़ीर अकबराबादी कोई परम्परावादी या परम्पराधर्मी कवि नहीं थे। इस कारण उनकी स्व–अर्जित रचनायें ऐसी नहीं मानी गयीं कि उनके समानान्तर कुछ नयी रचनायें की जा सकें। तत्कालीन रचनाकारों की नज़र में नज़ीर अकबराबादी जी को एक कवि न मानकर एक सनकी व्यक्ति माना गया। वे पुरानी पीढ़ी के आलोचकों द्वारा सदैव उपेक्षित दृष्टि से देखे गये।

मुहम्मद सादिक़ ने अपने ''उर्दू साहित्य के इतिहास'' में कवविर नज़ीर अकबराबादी के बारे में लिखा है कि वे विदेशी कवि बर्न्स और विलों की तरह ही एक प्रतिभावान आवारा थे, लेकिन वे इन सबसे हटकर दूसरे प्रकार के आवारा व्यक्ति थे, क्योंकि उनका उठना–बैठना बड़े लोगों में न होकर छोटे लोगों में ही था।

वे जिस बात को महसूस करते थे। उसकी बड़ी ही सफलतापूर्वक संगीत के वाद्ययन्त्रों को बजाकर उनके साथ सहगान किया करते थे। घुँघरू,ढोलक, तबला मृदंग के साथ उनके नाचने ने उन्हें अन्य लेखकों की तुलना में विशिष्ट बनाया।

सन् 2004 में गोहाटी विश्वविद्यालय, हिन्दी विभाग से डॉ0 धर्म देव तिवारी के निर्देशन में 'नज़ीर अकबराबादी व्यक्तित्व और कृतित्व'' शीर्षक पर शोधार्थी सायरा जमाली ने किये अपने शोध में पृष्ठ 402 पर नज़ीर अकबराबादी की उनकी अपनी रचना पर आनन्दमयी छवि का अपनी तरह से किये गये होली गीत के प्रस्तुतिकरण करते हुए लिखा –

''इस वक्त मुहय्या है,
सब ऐशो–तरब की शै।
ढफ़ बजते हैं हर जानिब,
और बीनी–रूबाबों नै।।
हो तुम में भी और हम में,
होली कीहै कुछ रै।
सुनकर ये नज़ीर उसने,
हँसकर ये कहा सच है।।
होली में यहीधूमें
लगती हैं बहुत भलियाँ....''

ऐसे ही उन्होंने कुछ ऐसा भी कहा –

''कुछ तबले खटके ताल बजे,
कुछ ढोलक और मृदंग बजे।
कुछ भड़के बैन से बाबों की,
सारंगी और चंग बजें।।
कुछ तार तम्बूरों के झनके,
कुछ दमदमी और मुँह चंग बजे,
कुछ घुँघरू खटके झम–झम,
कुछ गत पर गत आहंग बजे।''

इसको देखकर कुछ ऐसा लगता है कि असमी भाषा की वार्तालाप करने वाली शोधार्थी शायद नज़ीर अकराबादी साहब से इतनी ओत–प्रोत थी कि उसने हिन्दी विषय में ''नज़ीर अकबराबादी : व्यक्तित्व और कृतित्व'' विषय पर हिन्दी में

डाक्टर इन फ्लॉसफी की डिग्री पाने के लिये अंग्रेजी में रोमन कैपीटल भाषा में लिपि तैयार करके उनमें हिन्दी के जस के तस काव्यांशों को बड़ी ही मनमोहकता के साथ प्रस्तुत किया, जिससे इस बात को सहज ही झुठलाया नहीं जा सकता कि जनकवि के रूप में बहुचर्चित नज़ीर साहब के चहेते मात्र हिन्दी या उर्दू या पंजाबी भाषा के प्रचलित प्रदेशों के अतिरिक्त अहिन्दी भाषी प्रदेशों में भी थे। बस यही कारण था कि सायरा जमाली भी नज़ीर अकबराबादी के कलम के जादू से दूर ना रह सकीं।

नज़ीर कविवर के समय जो सामन्तवादी प्रथा प्रचलित थी। उस पर उन्होंने किसी प्रकार का आरोप प्रत्यारोप न करके एक बड़ी मात्रा में ख्याति और प्रचुरमात्रा में धन अर्जित करने वाले चाटुकार कवियों का बिना माथे पर शिकन लिये, बिना किसी विरोध या कोलाहल या असहयोग आन्दोलन के जन सामान्य के पक्ष में चेतना का संचार करने के लिये जीवन के सारे पहलुओं, स्थितियों पर रचनायें कीं और सर्वानन्द के साथ अपना जीवन यापन किया।

कविवर नज़ीर ने दिखावा करने वाले लोगों के विरुद्ध लिखा। ताकि आर्थिक रूप से दुर्बल लोगों में ग्लानि का भाव अपना घर न कर सके। उन्हें शब्दों का संबल प्रदान किये जाने के लिये उन्होंने लिखा –

''हैरा हूँ यारो देखो तो,
ये क्या स्वांग है?
आप आदमी ही चोर है
और आपी स्वाँग है।
है छीना–झपटी और कहीं
बांग–तांग है।।

देखो तो आदमी ही यहाँ,
मिस्ले रांग है।
फौलाद से गढ़ा है,
सो है वो भी आदमी।''

अंग्रेजी के चिर परिचित कवि शैक्सपियर साहब ने भी एक स्थान पर आदमी के बारे में कुछ इस प्रकार लिखा था –

''जिन्दगी एक बदलती हुई परछाई की तरह है।
एक उस अभिनेता की तरह है
जो अभिनय के बहाने,
मंच पर अपने कीमती समय के
कुछ घण्टे बर्बाद करता है
और!
उसके बाद दुनियाँ उसे
कभी याद नहीं करती।
यह एक मूर्ख द्वारा कही गयी कथा है,
जिसमें शब्द और संकेत तो हैं,
लेकिन
सबके सब निरर्थक,
निष्प्रयोजन और बेकार है।''

लेकिन नजीर साहब का ध्येय इन दोनों ही में बिना चलने वाला और प्रसन्नता देयक ध्येय है।

किसी भी साहित्य का समाज से गहरा सम्बन्ध होता है। साहित्य तभी लिखा जाता है। जब साहित्यकार समाज में घटती घटनाओं, उस समाज के लोगों के आचार–विचार, लोगों के जीवन जीने का स्तर और उस पर होने वाली प्रतिक्रियाओं को देखता है। जहाँ समाज में प्रचलित ऐसी रीतियों को देखता है, जिनका समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है तो साहित्यकार अपने साहित्य का सृजन ऐसे करता है, जिससे समाज के लोग उन्नति के पथ पर अग्रसित होते हैं और जब साहित्यकार समाज के घटते घटनाक्रम में कुछ कुरीतियाँ देखता है। तो बजाय अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त किये जाने के वह अपने ऐसे साहित्य का निर्माण करता है। बेशक वे समाज को उन बुराईयों को रोके जाने के लिये मना ना करके ऐसी रचनायें निर्मित करेगा, जिससे जनता में उन विंगतियों को रोके जाने के लिये सन्देश जाता है और उसी सन्देश से लोग उन विसंगतियों को रोकने के लिये स्वतः ही प्रोत्साहित होते हैं। नज़ीर साहब ने बजाय लोगों को उनकी दुर्गति रोकने के लिये कोई निषेधात्मक निवेदन या अपील नहीं की कि वे उन बुराईयों से बचें, बल्कि उनके लिये बुराइयों पर ऐसी रचनायें कीं, जिनसे लोग नसीहत लें और उनसे दूरी बनाकर अपने चिन्तन व मनन को एक बिल्कुल अलग प्रकार से कल्याणकारी भविष्य की ओर उन्मुख हों।

काश! ऐसा भी एक दिन आये। जब हमारे भारत में एक के बाद एक करके कई सारे ऐसे नज़ीर (उदाहरण) पैदा हों, जो अपने में ख़ुद के लिये तो नज़ीर हों ही, लेकिन सारी दुनियाभर के लिये मेरे भारत जैसा बे–नज़ीर हों, जिनके कार्य कलापों से दुनिया (विश्व) में भारत के ऐश्वर्य का परचम (झण्डा) लहराता रहे । दुनिया के हर एक इंसाँ की दिली ख़्वाहिश भी ये ही रहे कि अगर उनका जन्म हो तो सिर्फ़ और सिर्फ ऐसे भारत में हो, जो अपने में सफलता की एक नज़ीर है।

इसलिये मैं भी अपने भारत के लिये तन–मन और धन से जीवन पर्यन्त ऐसा ही काम करने की कोशिश करता रहूँगा–

जब तक है जान!

जब तक है जान!!

और

जब तक है जान!!!

इसलिये मेरी आपसे भी यही इल्तिजा है कि आप भी कुछ ना कुछ ऐसे अच्छे काम करके दुनिया के लिये तरक़्क़ी की ऐसी मिसाल बनें कि लोग आपको तब तक याद करते रहें–

जब तक है जान!

जब तक है जान!!

और

जब तक है जान!!!

मेरी शान।

मेरा भारत महान।।

साहित्य समीक्षा

नज़ीर अकबराबादी के समय न तो संचार माध्यम इतने सुगम व सुलभ थे और ना ही आज की तरह सुविधाओं की उपलब्धता थी कि वे अपनी रचनाओं और अभिलाषाओं को सहजकर रख सकते, लेकिन जैसे–जैसे माध्यम के बढ़ते स्रोतों से मानव जीवन सहज और सरल होता गया। ठीक वैसे ही वैसे सलीके से पुस्तकालयों में सहित्यकारों की रचनाएँ संकलित और सहजकर रखी जाती गयीं। इस के साथ ही साथ सर्च इंजन, गूगल और यू ट्यूब पर भी समय–समय पर दिग्दर्शित की जाने वाली कृतियों को संजोकर रखा जाता गया। उनका अध्ययन करके भी एक नये और अच्छे आयाम स्थापित किये जाने का प्रयास किया गया है।

आज तो माध्यम इतना बढ़ गया है कि यदि कोई आदमी थोड़ा सा भी साहित्य में रुचि रखता है। या कोई बातें लिख देता है। तो उन्हें भी जिज्ञासु पाठकया पुनरुत्पादक खोजकर उनको प्रयोग में ले आते हैं। हम यहाँ पर उन माध्यमों पर भी चर्चा करना उचित समझेंगे जो आज के इस वैज्ञानिक दौर में संचार माध्यमों–चाहे वे विद्युत माध्यम हों या पत्र माध्यम। हम यहाँ पर अपने सुधी पाठकों और भावी शोधकर्ताओं के लिये माध्यम पर भी थोड़ा सा प्रकाश डालकर उनका ज्ञानवर्धन इसलिये और कराने के इच्छुक हैं। ताकि वे इससे ज्ञानार्जन करके अपने कृत्यों और रचनाओं को जन–जन के समक्ष रखकर उन्हें भी ज्ञान सहज और सरल तरीके से बाँट सकें। इसको हम इस प्रकार से भी इस चार्ट के माध्यम से समझा सकते हैं।

माध्यम

- **पत्र माध्यम** (प्रिंट मीडिया)
  1. पत्रक
  2. समाचार पत्र
  3. समाचार पत्रिकायें और
  4. प्रकाशित पुस्तकें चाहे वे किसी भी साहित्य पर आधारित हों या किसी भाषा में लिखी गयीं हों।

- **विद्युत माध्यम** (इलैक्ट्रोनिक मीडिया)
  - **श्रव्य माध्यम**
    - रेडियो (आकाशवाणी)
    - विभिन्न एफ.एम. चैनल्स (जिन्हें फ्रीक्वेंसीमाडलेशन चैनल के नाम से जाना जाता है)
  - **दृश्य माध्यम**
    - दूरदर्शन (पुरातन विद्युत दृश्य माध्यम)।
    - विभिन्न सैटेलाइट चैनल और केबिल टी.वी. (तत्पश्चात् विकसित दृश्य माध्यम)।
    - अद्यतन प्रचलित माध्यम
      1. वाट्सप।
      2. फेसबुक।
      3. इंस्टाग्राम।
      4. पूर्व का ट्विटर और अब का ऐक्स।
      5. रील।
      6. थ्रैड।
      7. यूट्यूब और।
      8. मैटा आदि।

(ये वर्गीकरण पुरातन और नूतन तकनीकि के आधार पर किया गया है यानि जो सबसे पहले आया)

ये आज के वे प्रचलित और लोकप्रिय माध्यम हैं, जिनसे अपनी बात को लोगों में प्रचारित और प्रसारित करने का एक सबसे सुलभ और सरल होने के साथ ही साथ मितव्ययी साधन भी हैं, जिन पर खोज करने से किसी भी व्यक्ति और साहित्यकार एवं उसकी साहित्यिक रचनाओं को खोज पाने में सहूलियत मिलती है।

अब तो इतनी भी सुविधा हो गयी है कि यदि आप किसी कृति के मूल लेखक से भी बात करना चाहे तो आप उससे वॉइस कालिंग, वीडियो कालिंग, एस. एम.एस. और थोड़ा आगे बढ़ें तो ई–मेल आई.डी. और यदि उसकी वेबसाइट हो तो उस वेबसाइट के द्वारा संवाद स्थापित करके उसकी रचनाओं, उसके बारे में व्यक्तिगत जानकारियाँ, उसके अनुभव और उसके व्यक्तिगत संस्मरणों से भी लाभान्वित हुआ जा सकता है।

ये बात हम 21वीं सदी के मध्य में हुए प्रगतिशील दोनों ही प्रकार के माध्यम के बारे में कर रहे हैं। आप जब इस बात का अन्दाजा लगाइये कि जिस समय जनकवि और ब्रजभाषा के आगरा के ब्रजभाषा के एकमात्र मुस्लिम कवि कविवर नज़ीर अकबरावादी ने जन्म के पश्चात् से अपनी मृत्यु तक के कार्यकाल को जिया होगा तो उन्होंने कितनी सुविधाओं से विरत होकर अपना जीवन जिया होगा। उन्हें कितने अभावों और दुविधाओं का सामना करना पड़ा होगा? क्योंकि उस समय न तो आज के लोकतन्त्र जैसी स्थिति में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता थी, जिससे किसी के विरूद्ध कुछ बे–वाक (बिना किसी भय के) टिप्पणी की जा सके और ही कोई आज जैसा आर्थिक विकास हो और इस समय का सा सशक्त माध्यम हो।

नज़ीर साहब की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने पर ये भी पता चला है कि उनकी वैचारिक स्थिति बेशक अच्छी थी और वे जन–जन के प्रिय होने के

कारण ही जनकवि भी हो गये, लेकिन जिस प्रकार की उनकी दयनीय आर्थिक स्थिति थी उसे तो इतना अच्छा लोकप्रिय साहित्य सृजित ही न हो पाता। परिणाम स्वरूप इतना सब कुछ होना भी एक बड़ा कार्य है।

काश! उस समय का माध्यम आज जैसा सशक्त और विकसित होता तो उनकी लोकप्रियता और बढ़ने के साथ ही साथ उन्हें मृत्योपरान्त भी कई प्रकार के साहित्यिक पुरस्कारों द्वारा पुरस्कृत किया जाता रहता।

इन सबके आड़े आती रही नज़ीर की कमजोर आर्थिक स्थिति और उनके द्वारा अपने बारे में और अपनी रचनाओं के संग्रह न किये जाने के कारण लोगों में ठीक से संवाद न जा सका। जैसा उनको पढ़ने के बाद जानकारी में आया है कि वे निःसन्देह ही अकादमिक रूप से इतने योग्य न हों, लेकिन उनकी जो रचनाओं की कला थी । वह एक अलग ही प्रतिभा का दिग्दर्शन करती है। अन्त में हमें यही कहने के लिये बाध्य होना पड़ेगा कि "उन सा नहीं देखा"।

लोक चेतना

लोगों में लोक चेतना का संचार करने के लिये लड़ाई झगड़ों का चित्रण अपनी नज़्म "दुनियाँ धोखे की टट्टी है" में नज़ीर अकबराबादी ने एक स्थान पर लिखा है। उन्होंने विक्रेताओं के बारे में कहा कि वे कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। इसलिये अपनी बुद्धि का प्रयोग करें और झूठी बातों में ना फंसे –

"दुनियाँ धोख की टट्टी है"

"कोई फूल के बैठे मसनद पर,
कोई रोये अपनी ज़िल्लत[1] को।
कोई बोले अपना मुझ से लो,
और मेरा हो सो मुझ को दो।।
कोई लड़ता है, कोई मरता है,
कोई झगड़े हक पर नाहक को।
जब देखा खूब तो आखिर को,
कुछ लेना एक ना देना दो।।

गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मट्टी है।
हम देख चुके इस दुनियां को,
यह धोखे की सी टट्टी है।।

---

1 "दुनियाँ धोख की टट्टी है" – लेखक/सम्पादक : प्रो. रूपा गुप्ता एवं डॉ. अनीता देवी – नज़ीर अकबराबादी रचनावली खण्ड–1, पृष्ठ 167.

शब्दार्थ : 1. फ़िसलना

उन्होंने लोगों को चेताते हुए विक्रेताओं के बारे में कहा–

यह पैंठ अजब है दुनियां की,
और क्या क्या जिन्स इकट्‌ठी हैं।
क्या माल किसी का मीठा है,
और चीज़ किसी की खट्‌टी है।
कुछ पकता है कुछ भुनता है,
पकवान मिठाई पट्‌टी है।
जब देखा खूब तो आखिर को,
न चूल्हा भाड़ न भट्‌टी है।
गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मट्‌टी है।
हम देख चुके इस दुनियां को,
यह धोखे की सी टट्‌टी है।।

उन्होंने आगे बताते हुए कहा कि दुकानदार के यहाँ कोई रिश्तेदारी नहीं होती, वह अपना स्वार्थ देखता है–

कोई ताज खरीदे हंस–हंस कर,
कोई तख़्त खड़ा बनवाता है।
कोई कपड़े रंगी पहने है,
कोई गुदड़ी ओढ़े जाता है।
कोई भाई, बाप, चचा, नाना,
कोई नाती पूत कहाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को,
न रिश्ता है न नाता है।

गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मट्टी है।
हम देख चुके इस दुनियां को,
यह धोखे की सी टट्टी है।।

लोगों को गलत काम करके अपने जीवन का दुखद बनने से रोकने में चेतना जगाने के लिये कविवर नज़ीर ने एक वृद्ध वैश्या के बुढ़ापे का चित्रण "लूली पीर" (बूढ़ी वैश्या) शीर्षक से लिखी अपनी गज़ल में उन्होंने वैश्यावृत्ति पर जिस सुन्दरता से लिखा है तो उन्होंने चेताते हुए लोगों से ये भी कहा कि समय सदा एक–सा नहीं होता, बल्कि समय के साथ–साथ एक आदमी की भी स्थिति एक बूढ़ी वैश्या जैसे हो जाती है। एक बूढ़ी वैश्या का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा ताकि लोग उससे कुछ सीख लें।

जो .... कोई होजातीहैबुढ़िया।
फिर जान कहलाने से वह शरमाती है बुढ़िया।।
हर काम में हर बात में शरमाती है बुढ़िया।
दिन रात इसी सोच में गम खाती है बुढ़िया।।
सर धुनती है, उकसाती है, घबराती है बुढ़िया।
यह दर्द वही जाने जो हो जाती है बुढ़िया।।

जब पेट मलाई सा वह देता था दिखाई।
खाने को चली आती थी मिश्री व मलाई।।
और आके बुढ़ापे की हुई जबकि चढ़ाई।
सब उड़ गई क़ाफिर, वह मलाई वह मिठाई।।

इस गम से न पीती है, न कुछ खाती है बुढ़िया।
यह दर्द वही जाने, जो हो जाती है बुढ़िया।।

वह हुस्न कहां जिस से कोई पास बिठावे।
छाती वह कहां जिसपे कोई हाथ चलावे।।
जब सूख गया मुंह तो झमक खाक दिखावे।
आशिक तो जवां काहे को फिर नाज उठावे।।
बूढ़े को भी हरगिज नहीं खुश आती है बुढ़िया।
यह दर्द वही जाने, जो हो जाती है बुढ़िया।।[1]

उन्होंने पुराने दिनों की याद दिलाते हुए कहा कि बूढ़ी वैश्या फिर क्या सोचती है ठीक वैसे ही आप भी सोच में पढ़ जायेंगे जैसी वह सोचती है–

जब मुंह में न हो दांत तो मिस्सी मले क्या खाक।
और सर के झड़े बाल तो कंघी करे क्या खाक।।
पलकों में सफेदी हो तो काज़ल लगे क्या खाक।
जब नाक ही सूखी हो तो फिर नथ खुले क्या खाक।।
इस ख्वारी, खराबी में फिर आ जाती है बुढ़िया।
यह दर्द वही जाने जो हो जाती है बुढ़िया।।

नज़ीर साहब ने गरीबी को बड़ी ही समीपता से देखा और अनुभव किया। इसलिये उन्होंने लोक चेतना के लिये अपनी रचना "आटे दाल का भाव" में लिखा है–

1 "बूढ़ी वैश्या" – लेखक/सम्पादक : प्रो. रूपा गुप्ता एवं डॉ. अनीता देवी – नज़ीर अकबराबादी रचनावली खण्ड–1, पृष्ठ 388.

क्या कहूँ नक्शा में यारों! खल्क के अहवाल का।
अहले दौलत का चलन, या मुफ़्लिसो कंगाल का।।
यह बयां तो वाकई है, हर किसी के हाल का।
क्या तवंगर, क्या गनी, क्या पीर और क्या बालका।।
सबके दिल में फिक्र है दिन रात आटे दाल का।।

उन्होंने आगे कहा–

गर न आटे दाल का अन्देशा होता सद्दराह।
तो न फिरते मुल्क गीरी को वज़ीरो बादशाह।।
साथ आटे दाल के हैं हश्मतो फौजो सिपाह।
जा बजा गढ़, कोट से, लड़ते हुए फिरते हैं आह।।
सबके दिल में फिक्र है दिन रात आटे दाल का।।

जनता में चेतना जगाते हुए नज़ीर साहब ने पैसे के बारे में कहा कि– जिसे आदमी नहीं खाते, बल्कि पैसा आदमी को खा जाता है। इसलिये आदमी को रिश्तों के लिये भागना चाहिये न कि पैसों के लिये। इस बारे में अपनी बात को नज़ीर अकबराबादी जो कुछ इस प्रकार से रखते हैं। उन्होंने इस सांसारिक ऐश्वर्य के चक्कर में खतों से बचने को कहा–

ज़र की जो मुहब्बत तुझे पड़ जायेगी बाबा।
दुःख उसमें तेरी रूह, बहुत पायेगी बाबा।।
हर खाने को हर पीने को तरसायेगी बाबा।
दौलत जो तेरे यां है न काम आयेगी बाबा।।
फिर क्या तुझे अल्लाह से मिलवायेगी बाबा।

उनका कहना है कि गर इंसान के पास दौलत है और वह केवल दौलत के लिये जीता है। तो अंत में यह दौलत इंसान को खा जायेगी। अतः अगर अपना बचाव करना है तो–

गर नेक[1] कहाता है, कर इस पे कुछ एहसान।
हिन्दू को खिला पूरी[2], मुसलमां को खिला नान।।
खा तू भी इसे शौक से, और ऐश पे रख ध्यान।
तू इसको न खावेगा, तो यह बात यहीं जान।।
एक रोज यह खन्दी[3] तुझे खा जाएगी बाबा।

उन्होंने लोगों को पैसे का घमण्ड न करने को भी सीख दी। उन्होंने लोक में चेतना का संचार करने के लिये कहा कि– अगर लोगों के पास धन और ऐश्वर्य है तो वह उसका घमण्ड न करे। एक व्यक्ति को सदैव लालच से दूर रहना चाहिये। व्यक्ति को पैसे के लिये न जीकर समाज के लिये जीना चाहिये, क्योंकि पैसा ही वह चीज है।

वारिस[4] है जिनके जीते वह मुर्दे भी आनकर।
हलवे चपाती खूब ही चखते हैं पेट भर।
जिनका कोई नहीं है वह फिरते हैं दरबार।
औरों के लगते फिरते हैं कोनों से घर व घर।।
उनकी है खारी[5] नोंन[6] से भी खारी शबबरात।।

इतना ही नहीं, उन्होंने अपनी 'ईद' नामक रचना के एक अंश में कुछ लिखते हुए ईद की स्थिति का वर्णन करते हुए सावधान किया है कि आप उस ज़माने में ईद देखा करते थे और वही ईद आज भी लोगों को देखने को मिलती है,

---

शब्दार्थ : 1. अच्छा, 2. पूड़ी, 3. खाई / गहराई, 4. उत्तराधिकारी, 5. नमक, 6. नमकीन

लेकिन सब कुछ आज भी पहला जैसा होने पर भी वैसा नहीं है, जैसा पहले हुआ करता था।उन्होंने इसी बात को कुछ इस तरह लिखा है–

शाद[1]था जब दिल था और जमाना ईद का।
अब तो यक्सां[2] है हमें आना न जाना ईद का।।

दिल के हो जाते हैं टुकड़े जिस घड़ी आता है याद।
ईदगाह तक दिलबरों के साथ जाना ईद का।।[1]

ये नज़ीर साहब की लोक चेतना का अन्दाज़ नहीं तो और क्या हो सकता है। उन्होंने लोगों में आत्मविश्वास की जागृति किये जाने के लिये ही अपनी "शबबारात" नामक कविता में एक बन्द के रूप में लिखा है। उन्होंने अपने शब्दों में लिखा है कि भोलापन मात्र निर्धनों के चेहरों पर ही नही दिखता, बल्कि उन चेहरों पर भी दिखाई देती है, जो अनाथ होते हैं। शबबरात, जिस दिन होती है उस रात को मृत आत्मायें भी हलवा खाने के लिये दरबाजों पर आ जाती हैं और जिनके कोई उत्तराधिकारी या संरक्षक नहीं होते, तो वे आत्मायें दूसरे अन्य लोगों के दरबाज़े पर आ खड़ी होती हैं। इसलिये ऐसे लोग, जिनकी मृत्यु हो जाती है । उन्हें उन मृत आत्माओं को शान्ति प्रदान करने के लिये आवश्यक है कि वे इस बात पर अवश्य ध्यान रखें।

---

1 भूमिका – नज़ीर अकबराबादी रचनावली भाग–1, पृष्ठ 37.

शब्दार्थ : 1. प्रसन्न, 2. समान / जैसा

शोध कार्य के सम्बन्ध में विचार और दृष्टिकोंण

जनकवि नज़ीर अकबराबादी के बारे में जब प्रारम्भिक सर्वेक्षण किया गया तो संज्ञान में आया कि हिन्दी के किसी शोधार्थी ने इस विषय पर अभी तक हिन्दी में कोई शोध कार्य नहीं किया है। अतः यह मेरे शोध का विषय है, जो मौलिक और अनूदित है।

आज जहाँ एक ओर वैश्वीकरण के इस युग में भारत विश्वगुरू बनने की दिशा में शनैः शनैः अपने क़दम बढ़ा रहा है। उसके क्रमिक विकास में विश्व के बड़े देशों के साथ ही साथ प्रगतिशील देशों में अपने प्रतिनिधि भेज कर उनमें एक अपूर्व शान्ति और एकता की शक्ति का संचार कर रहा है, जिसका ज्वलन्त उदाहरण विश्व के विभिन्न 20 देशों (अर्जेन्टीना 1, आस्ट्रेलिया 2, ब्राजील 3, कनाडा 4, चीन 5, फ़्राँस 6, जर्मनी 7, भारत 8, इण्डोनेशिया 9, इटली 10, जापान 11, कोरिया गणराज्य 12, मैक्सिको 13, रूस 14, सउदी अरब 15, दक्षिण अफ़्रीकी 16, तुर्की 17, यूनाइटेड किंगडम 18, यूनाइटेड स्टेट ऑफ़ अमेरिका 19 और यूरोपीय संघ 20) के नेताओं/प्रतिनिधियों का 11–13 फरवरी 2023 तक आगरा में चलने वाला ''जी–20 शिखर सम्मेलन'' है।

आज भारत में वर्ण, जाति और धर्म की मतवैभिन्यता से पनपी भ्रामकता को परे रखकर ''सबका साथ सबका विकास'' का नारा गुँजायमान हो रहा है, जिससे जन–जन में कट्टरता का स्थान लुप्त प्रायः सा होता जा रहा है। सन् 1947 से देश के बँटवारे के साथ ही साथ लोगों में देश के विभाजन की पीढ़ा ने जितनी पीढ़ा दी है। तब अपनों को ही अपनों से जोड़ने की पहल इस प्रकार के शोध करके दूरियों की खाई को पाटने का एक सराहनीय क़दम है।